उपक्रम

द्रव्यगुण

१. परिभाषा

द्रव्यों के नाम-रूप (परिचय), गुण-कर्म और प्रयोग का सर्वाङ्गीण विवेचन जिस शास्त्र में हो उसे द्रव्यगुण कहते हैं।[१] 'द्रव्यगुण' में 'द्रव्य' में 'अद्रव्य' भी अन्तर्भूत है जिसमें अमूर्त भावों (विहार, ताप, धूप आदि) का भी ग्रहण होता है। इसी प्रकार 'गुण' शब्द धर्म में रूढ हो गया है, अत: उससे रस, विपाक आदि गुण और कर्म दोनों का बोध होता है। पुन: इसी से द्रव्यों का गुणकारी प्रयोग भी लक्षित होता है।[२]

२. महत्त्व और प्रयोजन

मानव की कोई प्रवृत्ति निरुद्देश्य नहीं होती, अत: सब शास्त्रों की रचना सप्रयोजन है। चिकित्सा-शास्त्र का मुख्य अङ्गभूत विषय होने के कारण द्रव्यगुणशास्त्र अत्यधिक उपयोगी और महत्त्वपूर्ण है। आयुर्वेद के दो मौलिक उद्देश्य हैं– स्वस्थ के स्वास्थ्य की रक्षा और रोगी के विकार का प्रशमन। ये दोनों उद्देश्य द्रव्यों के समुचित प्रयोग से सिद्ध होते हैं। मनुष्य और अन्य प्राणी अपने शरीर की रक्षा के लिए नाना द्रव्यों का आहाररूप में उपयोग करते हैं जिनके द्वारा उनके शारीर दोषों की स्थिति में निरन्तर परिवर्तन होता रहता है। इन्हीं द्रव्यों से शरीर के दोष-धातु-मल कभी घटते और कभी बढ़ते हैं जिससे उनमें वैषम्य होने के कारण पुरुष अनेक विकारों से आक्रान्त होता है। इन क्षीण और वृद्ध दोषों को क्रमश: वर्धन एवं क्षपण के द्वारा साम्यस्थिति में लाने का साधन भी द्रव्य ही है। इसका कारण यह है कि द्रव्य और शरीर में तात्त्विक समानता है। दोनों ही पाञ्चभौतिक हैं, अत:

---

१. द्रव्याणां नामरूपाणि गुणकर्माणि सर्वश:।
प्रयोगाश्चापि वर्ण्यन्ते यस्मिन् द्रव्यगुणं हि तत्।। (स्व०)
अपरञ्च–द्रव्याण्यद्रव्यसहितानि, तेषां गुणा धर्मा नामरूपात्मका गुणकर्मात्मका: प्रयोगात्मकाश्च वर्ण्यन्तेऽस्मिन्निति द्रव्यगुणशास्त्रम्। (स्व०)

२. गुणशब्देन चेह धर्मवाचिना रसवीर्यविपाकप्रभावा: सर्व एव गृह्यन्ते। (च० सू० १.५९–चक्र०)
गुणशब्दोऽत्र धर्मवाची रसकर्माद्यन्तर्भावी। (द्र० सू० १.२)

Scanned by CamScanner

द्रव्य से शरीर के दोष-धातु-मल निरन्तर प्रभावित होते रहते हैं और तदनुसार उनका साम्य, क्षय या वृद्धि हुआ करती है।[१] स्वास्थ्य के रक्षण के लिए भी द्रव्यों का सन्तुलित प्रयोग आवश्यक होता है क्योंकि द्रव्यों के समयोग से ही शारीरिक तत्त्वों की साम्यस्थिति सम्भव है और साम्यस्थिति ही आरोग्य है। इसके विपरीत, उनके असम्यग्योग से दोषवैषम्य के कारण अनेक रोग उत्पन्न होते हैं।[२] रोगों के प्रतिषेध के लिए भी द्रव्यों का ज्ञान अपेक्षित है क्योंकि विकृत ओषधियाँ जनपदोद्ध्वंस का कारण होती हैं।[३] चिकित्सा के चतुष्पाद में वैद्य कर्ता और द्रव्य करण है।[४] शास्त्रों में यत्र-तत्र चिकित्सक की उपमा धानुष्क से दी गई है।[५] जिस प्रकार धानुष्क (कर्त्ता) अपने करणभूत तीरों से लक्ष्य को प्राप्त करता है उसी प्रकार चिकित्सक करणभूत द्रव्यों से चिकित्सा कर्म का सम्पादन करता है। औषध के सयुक्तिक और आशुकारी प्रयोग को देखकर लोक में भी कहते हैं कि 'अमुक औषध तीर की तरह लगी।' इसी प्रकार अव्यर्थ औषध के लिए 'रामबाण' शब्द का व्यवहार होता है। किन्तु कार्य में सफलता तभी सम्भव है जब करण का पूर्ण ज्ञान तथा सयुक्तिक प्रयोग हो।[६] अतः चिकित्सा में सफलता प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि समस्त

---

१. गुणा य उक्ता द्रव्येषु शरीरेष्वपि ते तथा।
स्थानवृद्धिक्षयास्तस्माद् देहिनां द्रव्यहेतुकाः। (सु० सू० ४१.१२)
द्रव्यरसगुणवीर्यविपाकनिमित्ते च क्षयवृद्धी दोषाणां साम्यं च। (सु० सू० ४६.३)

२. सुखहेतुर्मतस्त्वेकः समयोगः सुदुर्लभः। (च० शा० १.१२९)
रोगस्तु दोषवैषम्यं, दोषसाम्यमरोगता। (अ० ह० सू० १.२०)
येषामेव हि भावानां सम्पत् सञ्जनयेन्नरम्। तेषामेव विपद् व्याधीन् विविधान् समुदीरयेत्।।
(च० सू० २५.२९)

३. ओषधयः स्वभावं परिहायापद्यन्ते विकृतिं, तत उद्ध्वंसन्ते जनपदाः स्पर्शाभ्यवहार्यदोषात्।
(च० वि० ३.२०)

४. भिषग्द्रव्याण्युपस्थाता रोगी पादचतुष्टयम्। गुणवत् कारणं ज्ञेयं विकारव्युपशान्तये।।
(च० सू० ९.३)
भिषक् कर्ताऽथ करणं रसा दोषास्तु कारणम्। कार्यमारोग्यमेवैकमनारोग्यमतोऽन्यथा।।
(सु० उ० ६६.१४)
कारणं भिषक्.....करणं पुनर्भेषजम्। (च० वि० ८.८६-८७)

५. यथा हि योगज्ञोऽभ्यासनित्य इष्वासो धनुरादायेषुमस्यन्नातिविप्रकृष्टे महति काये नापराधवान् भवति, सम्पादयति चेष्टकार्यं, तथा भिषक् स्वगुणसम्पन्न उपकरणवान्। (च० सू० १०.५)

६. मात्राकालाश्रया युक्तिः, सिद्धिर्युक्तौ प्रतिष्ठिता। तिष्ठत्युपरि युक्तिज्ञो द्रव्यज्ञानवतां सदा।।
(च० सू० २.१६)

Scanned by CamScanner

द्रव्यों का पूर्ण परिचय हो, उनके सभी पक्षों की जानकारी हो और देश, काल तथा प्रकृति के अनुसार बाह्य एवं आभ्यन्तर कर्मों में उनके योग, संयोग तथा प्रयोग का यथावत् ज्ञान हो।[१] योग द्रव्य का शरीर से सामान्य सम्पर्क है, अनेक द्रव्यों को सम्यग् रूप से एक में मिलाना संयोग है तथा दोष-दूष्य आदि का विचार कर औषध की सयुक्तिक योजना प्रयोग है। 'प्रयोग' में 'प्र' उपसर्ग प्रकृष्ट (सयुक्तिक) का द्योतक है (प्रकृष्टः सयुक्तिको योगः प्रयोगः)।[२] इसके बिना वैद्य रोग के प्रतिषेध या प्रशम में समर्थ नहीं हो सकता।[३] किसी साधन के प्रयोग पर ही उसका गुणदोष निर्भर है, यथा शस्त्र से जीवन की रक्षा भी हो सकती है और विनाश भी। अतः प्रयोग के पूर्व इसका पूर्ण ज्ञान होना आवश्यक है।[४] द्रव्य भी साधन होने के कारण शस्त्र के समान ही है। अतः एक ओर उनका ज्ञानपूर्वक प्रयोग अमृत के समान जीवनदायक है तो दूसरी ओर उनका अज्ञानपूर्वक प्रयोग या दुष्प्रयोग विष के समान प्राणहर है।[५] अतः सर्वत्र ज्ञानपूर्वक आचरण का ही उपदेश किया गया है।[६] औषध का अज्ञानपूर्वक प्रयोग सामाजिक तथा नैतिक दृष्टि से महान अपराध है, अतः ऐसे दुर्मति वैद्यनामधारी रोगाभिसर का सामाजिक बहिष्कार करने का उपदेश किया गया

---

१. योगविन्नामरूपज्ञस्तासां तत्त्वविदुच्यते। किं पुनर्यो विजानीयादोषधीः सर्वथा भिषक्।।
योगमासां तु यो विद्याद्देशकालोपपादितम्। पुरुषं पुरुषं वीक्ष्य स ज्ञेयो भिषगुत्तमः।।
(च० सू० १.१२२-१२३)
तेषां कर्मसु बाह्येषु योगमाभ्यन्तरेषु च। संयोगं च प्रयोगं च यो वेद स भिषग्वरः।।
(च० सू० ४.२९)

२. संयोगं द्रव्याणामुचितं मेलन(क)म्; प्रयोगं कालप्रकृत्याद्यपेक्षा योजना।
(च० सू० ४.२९-चक्र०)

३. रसादिमानज्ञानायत्तत्वात् क्रियायाः। न ह्यमानज्ञो रसादीनां भिषग् व्याधिनिग्रहसमर्थो भवति।
(च० वि० १.३)
न ह्यनवबुद्धस्वभावा भिषजः स्वस्थानुवृत्तिं रोगनिग्रहणञ्च कर्तुं समर्थाः। (सु० सू० ४६.३)

४. शस्त्रं शास्त्राणि सलिलं गुणदोषप्रवृत्तये। पात्रापेक्षीण्यतः प्रज्ञां चिकित्सार्थं विशोधयेत्।।
(च० सू० ९.२०)

५. यथा विषं यथा शास्त्रं यथाऽग्निरशनिर्यथा। तथौषधमविज्ञातं विज्ञातममृतं यथा।।
औषधं ह्यनभिज्ञातं नामरूपगुणैस्त्रिभिः। विज्ञातं चापि दुर्युक्तमनर्थायोपपद्यते।।
योगादपि विषं तीक्ष्णमुत्तमं भेषजं भवेत्। भेषजं चापि दुर्युक्तं तीक्ष्णं संपद्यते विषम्।।
(च० सू० १.१२४-१२६)

६. रोगमादौ परीक्षेत ततोऽनन्तरमौषधम्। ततः कर्म भिषक् पश्चाज्ज्ञानपूर्वं समाचरेत्।।
(च० सू० २०.२०)

Scanned by CamScanner

है और यहाँ तक कहा गया है कि ऐसे पापकर्मा के साथ सम्भाषण मात्र से मनुष्य नरकगामी होता है।[१]

निष्कर्ष यह है कि चिकित्सा-विशारद के लिए द्रव्यगुण शास्त्र का ज्ञान वैसे ही अपेक्षित है जैसे भाषाविद् के लिए व्याकरणशास्त्र का। इसलिए जिस प्रकार व्याकरण के ज्ञान के बिना कोई विद्वान् नहीं हो सकता उसी प्रकार द्रव्यगुणशास्त्र को जाने बिना कोई व्यक्ति चिकित्सक होने का दावा नहीं कर सकता। ये दोनों ही समान रूप से उपहास के पात्र होते हैं।[२]

द्रव्यगुण का आयुर्वेद में महत्त्व इससे भी समझा जा सकता है कि आचार्य चरक ने 'आयुर्वेद' की परिभाषा यह बतलाई है कि इस शास्त्र से आयुष्य और अनायुष्य द्रव्य और उसके गुण-कर्मों का ज्ञान होने के कारण भी इसे आयुर्वेद कहते हैं।[३] आयुर्वेद का शाश्वतत्व भी द्रव्यों के स्वभाव की नित्यता के आधार पर सिद्ध किया गया है।[४] इसके अतिरिक्त, आयुर्वेद के अष्टाङ्ग व्याप्य हैं जबकि द्रव्यगुण व्यापक है क्योंकि अङ्गों का तत्तत् स्थानों में वर्णन है किन्तु द्रव्यगुण समस्त अङ्गों में व्याप्त है अतः सम्पूर्ण तन्त्र में इसका वर्णन हुआ है।[५] ऐसा कोई स्थल नहीं है जहाँ द्रव्य एवं उसके गुण-कर्म का निर्देश न हो। इससे यह शङ्का भी स्वतः निरस्त हो जाती है कि द्रव्यगुण का अष्टाङ्ग में परिगणन क्यों नहीं है।

३. विभाग

वैज्ञानिक अध्ययन की सुविधा के लिए इस शास्त्र को अनेक विभागों में विभाजित किया गया है–

---

१. यो भेषजमविज्ञाय प्राज्ञमानी प्रयच्छति।
त्यक्तधर्मस्य पापस्य मृत्युभूतस्य दुर्मतेः।।
नरो नरकपाती स्यात्तस्य संभाषणादपि। (च० सू० १.१२९-१३०)
वरमात्मा हुतोऽज्ञेन न चिकित्सा प्रवर्तिता।
पाणिचाराद् यथाऽचक्षुरज्ञानाद् भीतभीतवत्।।
नौर्मारुतवशेवाज्ञो भिषक् चरति कर्मसु।
यदृच्छया समापन्नमुत्तार्य नियतायुषम्।।
भिषङ्मानी निहन्त्याशु शतान्यनियतायुषाम्।। (च० सू० ९.१५-१७)

२. निघण्टुना विना वैद्यो विद्वान् व्याकरणं विना।
अभ्यासेन च धानुष्कस्त्रयो हास्यस्य भाजनम्।। (रा० नि० प्रस्तावना ९)

३. यतश्चायुष्याण्यनायुष्याणि च द्रव्यगुणकर्माणि वेदयत्यतोऽप्यायुर्वेदः। (च० सू० ३०.२३)

४. सोऽयमायुर्वेदः शाश्वतो निर्दिश्यते, अनादित्वात्, स्वभावसंसिद्धलक्षणत्वात्, भाव-स्वभावनित्यत्वाच्च। (च० सू० ३०.२७)

५. तत्रायुष्याण्यनायुष्याणि च द्रव्यगुणकर्माणि केवलेनोपदेक्ष्यन्ते तन्त्रेण। (च० सू० ३०.२३)

Scanned by CamScanner

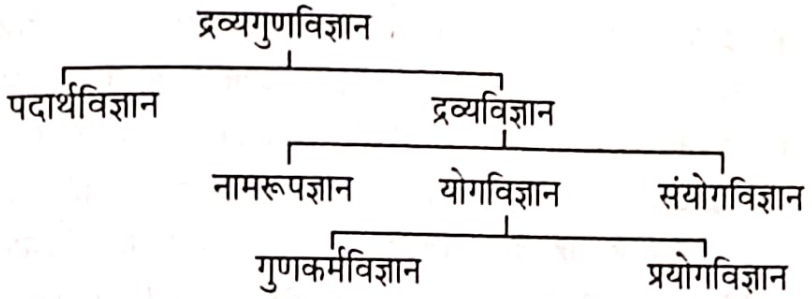

(क) **पदार्थविज्ञान**– इसमें द्रव्यगुण के मौलिक पदार्थों (Basic Concepts) यथा द्रव्य, गुण, रस, वीर्य, विपाक, प्रभाव एवं कर्म का सैद्धान्तिक निरूपण किया जाता है।

(ख) **द्रव्यविज्ञान**– इस शाखा में द्रव्यों (Substances) का अध्ययन किया जाता है। इसके तीन उपविभाग हैं–

१. **नामरूपज्ञान** (Pharmacognosy)– इसमें द्रव्यों का कुल, नाम, जाति, स्वरूप आदि के द्वारा पूर्ण परिचय प्राप्त किया जाता है। स्थूल रचना तथा वानस्पतिक विवरण (Morphology) के अतिरिक्त उनकी सूक्ष्म रचना (Histology) का भी अध्ययन किया जाता है। द्रव्यों की प्रकृति पर देश, काल आदि के प्रभाव (Ecology) का ज्ञान भी आवश्यक होता है।

२. **संयोगविज्ञान** (Pharmacy)– इसमें विभिन्न द्रव्यों के संयोग तथा उनकी विविध कल्पनाओं का वर्णन किया जाता है।

३. **योगविज्ञान** (Administration of drugs)– इसमें द्रव्यों की मात्रा, काल आदि का विचार किया जाता है। इसकी पुन: दो शाखायें हैं–

(क) **गुणकर्मविज्ञान** (Pharmacodynamics)– इसमें द्रव्यों के गुण तथा विभिन्न शारीर अवयवों पर उनके कर्म का अध्ययन होता है।

(ख) **प्रयोगविज्ञान** (Pharmacotherapeutics)– इसमें गुणकर्म के आधार पर द्रव्यों का विभिन्न रोगों में सयुक्तिक प्रयोग बतलाया जाता है।

जन्तुओं के शरीर पर द्रव्यों के जो विभिन्न परीक्षण किये जाते हैं वह प्रायोगिक द्रव्यगुणविज्ञान (Experimental Pharmacology) कहलाता है।

आतुर-शरीर पर विभिन्न विकारों में द्रव्यों के कर्म तथा प्रभाव का जो अध्ययन होता है उसे आतुरीय द्रव्यगुणविज्ञान (Clinical Pharmacology) कहते हैं। मानसिक क्रियाओं को प्रभावित करने वाले द्रव्यों का विशिष्ट अध्ययन मानस द्रव्यगुणविज्ञान (Psycho-Pharmacology) के अन्तर्गत किया जाता है।

४. पदार्थ (Basic Concepts)

किसी शास्त्र के विवेच्य विषय 'पदार्थ' कहलाते हैं। द्रव्यगुणविज्ञान के सात

Scanned by CamScanner

पदार्थ हैं– द्रव्य, गुण, रस, विपाक, वीर्य, प्रभाव और कर्म।[१] इन्हीं का विवेचन द्रव्यगुणशास्त्र में किया जाता है। Pharmacology औषधद्रव्यों तक सीमित है। ऊर्जस्कर द्रव्यों के अध्ययन के लिए एक नया विभाग (Nutra Cetics) उदित हुआ है।

१. **द्रव्य** (Substance)– रसादि गुणों तथा वमनादि कर्मों का आश्रयभूत जो पाञ्चभौतिक विकार है वह द्रव्य कहलाता है[२] यथा हरीतकी, बिभीतक, आमलकी आदि। इसमें आहार, औषध तथा अद्रव्य (अमूर्तभाव) आते हैं। 'Drug' शब्द केवल औषधद्रव्य तक सीमित है।

२. **गुण** (Property)– द्रव्य में रहने वाले शीत, उष्ण, स्निग्ध, रूक्ष आदि भौतिक धर्मों को गुण कहते हैं।[३]

३. **रस** (Taste)– द्रव्यों में जो आस्वाद होता है उसे 'रस' कहते हैं[४] यथा मधुर, अम्ल, लवण, कटु, तिक्त और कषाय। यह उनके पाञ्चभौतिक संघटन का द्योतक होता है।

४. **विपाक** (Metabolic property)– जाठराग्नि-पाक के अनन्तर रस का अन्तिम परिणाम विपाक कहलाता है।[५] यह तीन प्रकार का माना जाता है– मधुर (गुरु), अम्ल और कटु (लघु)।

५. **वीर्य** (Potency)– कर्मण्य गुणों को वीर्य कहते हैं।[६] कुछ लोग शीत और उष्ण दो तथा कुछ लोग शीत-उष्ण, स्निग्ध-रूक्ष, गुरु-लघु, मन्द-तीक्ष्ण ये आठ वीर्य मानते हैं। वस्तुत: छ: वीर्य हैं।

६. **प्रभाव** (Specific potency)– द्रव्यों में जो सहज विशिष्ट शक्ति होती है वह प्रभाव कहलाता है[७] यथा अर्जुन का हृद्य, शिरीष का विषघ्न, खदिर का कुष्ठघ्न, विडङ्ग का कृमिघ्न प्रभाव इत्यादि।

७. **कर्म** (Action)– द्रव्य रसादि गुणों के द्वारा पुरुष-शरीर में जो संयोग-विभाग (परिवर्त्तन) उत्पन्न करते हैं उन्हें कर्म कहते हैं[८] यथा वमन, विरेचन, लंघन, बृंहण आदि।

---

१. द्रव्ये रसो गुणो वीर्यं विपाक: शक्तिरेव च।
पदार्था: पञ्च तिष्ठन्ति स्वं स्वं कुर्वन्ति कर्म च।। (भा० प्र० पू० मि० ६.१६९)
द्रव्यं रसो गुणो वीर्यं विपाक: पञ्चमस्तथा। षष्ठ: प्रभाव: कर्मेति पदार्था: सप्त कीर्तिता:।।(स्व०)

२. यत्राश्रिता: कर्मगुणा: कारणं समवायि यत्। तद् द्रव्यम्....(च० सू० १.५१)

३. समवायी तु निश्चेष्ट: कारणं गुण:।।– (च० सू० १.५१)

४. रस्यत आस्वाद्यत इति रस:। (च० सू० १.६४–चक्र०)

५. जाठरेणाग्निना योगाद्यदुदेति रसान्तरम्।
रसानां परिणामान्ते स विपाक इति स्मृत:।। (अ० ह० सू० ९.२०)

६. वीर्यं तु क्रियते येन या क्रिया– (च० सू० २६.६५)

७. रसादिसाम्ये यत्कर्म विशिष्टं तत् प्रभावजम्। (अ० ह० स्० ९.२६)

८. संयोगे च विभागे च कारणं द्रव्यमाश्रितम्।
कर्तव्यस्य क्रिया कर्म कर्म नान्यदपेक्षते।। (च० सू० १.५२)

Scanned by CamScanner

प्रथम खण्ड

द्रव्य

SUBSTANCE

(drug and diet)

Scanned by CamScanner

प्रथम अध्याय

१. निरुक्ति

'द्रु गतौ' धातु से 'द्रव्य' शब्द निष्पन्न है। यहाँ गति से गमन और प्राप्ति अभिप्रेत है। इस प्रकार जिसके प्रयोग से रोग दूर हो जाते हैं और व्यक्ति स्वास्थ्य लाभ करता है वह द्रव्य कहलाता है। यह औषध एवं आहार दो रूपों में हैं।[१]

'द्रोश्च' सूत्र से भी 'द्रव्य' बनता है किन्तु यह प्रस्तुत प्रसङ्ग में अभीष्ट नहीं है क्योंकि इसमें जाङ्गम और भौम द्रव्यों का समावेश नहीं होने से यह अव्याप्ति दोष से ग्रस्त है।

२. लक्षण (Definition)

द्रव्य का लक्षण व्यापक और क्षेत्र विशाल है। प्राय: सभी दर्शनों ने इस पर विचार किया है किन्तु विस्तृत समीक्षा में न जाकर शास्त्रोक्त लक्षण का ही यहाँ उल्लेख करना उचित होगा। महर्षि चरक और सुश्रुत ने द्रव्य का लक्षण निम्नाङ्कित किया है–

'जिसमें गुण और कर्म आश्रित हो तथा जो अपने कार्यद्रव्यों का समवायिकारण हो वह द्रव्य कहलाता है'[२] यह लक्षण व्यापक है और इसमें पञ्चभूत, दिक्, काल, आत्मा और मन इन नौ कारण द्रव्यों तथा इनसे उत्पन्न विविध कार्यद्रव्यों यथा मृत्तिका, तन्तु, हरीतकी, गुडूची आदि का समावेश होता है। मृत्तिका और तन्तु स्व-स्व गुण-कर्मों के आश्रय हैं तथा क्रमश: घट और पट के समवायिकारण हैं। इसी प्रकार हरीतकी, रूक्ष, लघु आदि गुणों, पञ्चरस, मधुरविपाक, उष्णवीर्य तथा त्रिदोषहन्तृत्व प्रभाव प्रभृति गुणों एवं दीपन, अनुलोमन, रसायन आदि कर्मों का आश्रय है और अभयामोदक, अभयारिष्ट आदि भेषजकल्पों का समवायिकारण है। इसके अतिरिक्त, शारीर दोष-धातु-मलों के प्रति भी द्रव्यों की समवायिकारणता है। मिट्टी से जैसे घट बनता है वैसे ही आहार-द्रव्यों से दोष-धातु-मल बनते हैं। इसी प्रकार गुडूची आदि में भी गुणकर्म और समवायिकारणत्व समझना चाहिए। अत: ये द्रव्य हैं।

---

१. द्रवन्ति रोगास्तद्योगान्नर: स्वास्थ्यञ्च विन्दति।
अन्नौषधात्मकं तस्माद् द्रव्यमित्यभिधीयते।। (स्व०)

२. यत्राश्रिता: कर्मगुणा: कारणं समवायि यत्। तद् द्रव्यम्- (च० सू० १.५१)
द्रव्यलक्षणं तु क्रियागुणवत् समवायिकारणम्। (सु० सू० ४०.३)

Scanned by CamScanner

इस प्रसङ्ग में समवायिकारण को समझ लेना भी आवश्यक है। कारण तीन प्रकार के होते हैं- समवायी, असमवायी और निमित्त। समवायी कारण उसे कहते हैं जो समवाय (नित्य) सम्बन्ध से कार्य का घटक होता है। यह द्रव्यभूत होता है इसलिए इसे उपादान कारण (Inherent or material cause) भी कहते हैं। असमवायिकारण (Non-inherent cause) उसे कहते हैं जो समवाय सम्बन्ध से कार्य का घटक नहीं होता, केवल उसके अवयवों को मिलाये रखने में सहायक होता है। यह समवायिकारण में आश्रित, अद्रव्यभूत तथा गुणकर्मरूप होता है। निमित्त कारण (Efficient or auxiliary cause) उसे कहते हैं जो कार्य से पृथक् सत्ता रखते हुए कार्य की उत्पत्ति में सहायक होता है। उदाहरणार्थ, पट का समवायिकारण तन्तु, असमवायिकारण तन्तु-संयोग तथा निमित्तकारण तन्तुवाय, वेमा आदि हैं। इसी प्रकार अन्य द्रव्यों के सन्दर्भ में समझना चाहिए।

रसवैशेषिककार नागार्जुन ने द्रव्य के उपर्युक्त दार्शनिक लक्षण को द्रव्यगुण के उपयुक्त बनाकर रक्खा है जिसमें उन्होंने द्रव्य में स्थित गुण और कर्म के स्वरूप का पूर्ण विशदीकरण कर दिया है। उनके अनुसार 'द्रव्य उस पदार्थ को कहते हैं जो रस, गुण, विपाक, वीर्य और कर्म इन पाँचों का आश्रयभूत हो'।[१]

३. पाञ्चभौतिक निष्पत्ति (Pāñcabhautika composition)

संसार के सभी द्रव्य पाञ्चभौतिक हैं। द्रव्यगुणशास्त्र में कारणद्रव्यों का उपयोग न होने से केवल कार्यद्रव्य ही विवक्षित होते हैं अत: इस शास्त्र में 'द्रव्य' शब्द से पाञ्चभौतिक विकार का ही ग्रहण करना चाहिए। इसका कारण यह है कि सभी द्रव्य चिकित्सार्थ निर्जीवावस्था में प्रयुक्त होते हैं, अत: इस अवस्था में उनमें आत्मा और मन की स्थिति नहीं होती। काल और दिक् भी कार्यद्रव्यों की उत्पत्ति में निमित्तकारण हैं, समवायी नहीं। इस प्रकार अवशिष्ट पञ्चभूतों से उत्पन्न होने के कारण सभी द्रव्य पाञ्चभौतिक कहलाते हैं।[२] पञ्चमहाभूतों से द्रव्यों की निष्पत्ति किस प्रकार होती है इसको समझने के पूर्व भौतिक सृष्टि के विकासक्रम पर ध्यान देना आवश्यक है। इस क्रम में भूतों की तीन अवस्थायें होती हैं जो उत्तरोत्तर व्यक्त होती हैं; यथा- भूत, महाभूत और दृश्यभूत। परमाणुरूप में स्थित आकाश, वायु, तेज, जल और पृथिवी को भूत या तन्मात्रा कहते हैं। भूत इसलिए कहते हैं कि ये नित्य हैं और महाप्रलयकाल में स्थित रहते हैं तथा इन्हीं से सृष्टि के सारे कार्यद्रव्य उत्पन्न होते हैं।[३] इस अवस्था

---

१. द्रव्यमाश्रयलक्षणं पञ्चानाम्। (र० वै० १.१६६)
रसादीनां (पञ्चानां) पदार्थानां यदाश्रयभूतं तद् द्रव्यम्। (र० वै० १.१६६-भा०)

२. सर्वं द्रव्यं पाञ्चभौतिकमस्मिन्नर्थे। (च० सू० २६.१०)

३. भवन्ति नित्यं सत्तामनुभवन्तीति भूतानि अथवा भवन्ति उत्पद्यन्ते येभ्य: द्रव्याणि इति भूतानि।

Scanned by CamScanner

में उनमें शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध ये गुण अव्यक्तावस्था में रहते हैं। सांख्य दर्शन के अनुसार यह तन्मात्रा की स्थिति है। वैशेषिक दर्शन के अनुसार परमात्मा की सृष्टि की इच्छा से सर्वप्रथम आकाश के परमाणुओं में परस्पर आकर्षण के द्वारा संयोग होने लगता है। इस प्रकार दो परमाणुओं के मिलने से द्व्यणुक तथा तीन द्व्यणुकों के मिलने से त्रसरेणु बनता है। द्व्यणुक तक भूत में सूक्ष्मता रहती है किन्तु त्रसरेणु में महत्परिणाम होने से प्रत्यक्षयोग्यता आ जाती है।[१] महत्त्व या स्थूलत्व आने के कारण इस अवस्था में इनको महाभूत या स्थूलभूत कहते हैं। इसी प्रकार वायु के परमाणुओं में परस्पर संयोग होकर पूर्वोक्त रीति से द्व्यणुक और त्रसरेणु बनते हैं। इसके बाद आकाश-त्रसरेणु वायु-त्रसरेणु के साथ उपष्टम्भाख्य संयोग से अनुप्रविष्ट होकर स्थूल वायु या वायुमहाभूत बनता है। इसमें शब्द और स्पर्श दो गुण व्यक्त होते हैं। इसी प्रकार तेज का त्रसरेणु बनता है उससे आकाश और वायु के त्रसरेणु मिलकर महातेज की उत्पत्ति करते हैं अत: इसमें शब्द, स्पर्श और रूप ये तीन गुण व्यक्त होते हैं। जल के त्रसरेणु से आकाश, वायु और तेज के त्रसरेणु मिलकर महाजल या जलमहाभूत बनाते हैं अत: इसमें शब्द, स्पर्श, रूप और रस ये चार गुण व्यक्त होते हैं। अन्त में इन चारों महाभूतों के अनुप्रवेश से पृथिवी महाभूत बनता है और इसमें शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध ये पाँचों गुण वर्तमान होते हैं। इन महाभूतों में अनुप्रविष्ट भूत की अपेक्षा निज भूत का प्राधान्य रहता है यथा पृथिवी महाभूत में चारों अनुप्रविष्ट महाभूतों की अपेक्षा पृथिवी भूत की प्रधानता रहती है। यह महाभूत या स्थूल भूत की अवस्था हुई, किन्तु ये स्थूल भूत भी द्रव्यों की रचना में समर्थ नहीं हैं। अत: ये पाँचों महाभूत पुन: परस्पर मिलते हैं। इस क्रिया को आयुर्वेद में अन्योन्यानुप्रवेश और वेदान्त में पञ्चीकरण कहते हैं तथा इस प्रकार पञ्चमहाभूतों के मिश्रण से उत्पन्न विकार को दृश्यभूत कहते हैं।[२] वेदान्त मानता है कि पञ्चीकृत दृश्य भूतों में निज महाभूत का अर्धभाग तथा शेष महाभूतों में प्रत्येक का अष्टम भाग रहता है यथा पार्थिव द्रव्यों में पृथिवी महाभूत का अर्ध भाग तथा शेष अर्धभाग में अन्य चारों के समान अंश (अष्टमांश) रहते हैं किन्तु आयुर्वेद में ऐसा कोई अनुपात नहीं बतलाया गया है।[३] जगत् के स्थूल से स्थूल तथा सूक्ष्म से सूक्ष्म सभी द्रव्यों

१. तेषामेकगुण: पूर्वो गुणवृद्धि: परे परे। पूर्व: पूर्वो गुणश्चैव क्रमशो गुणिषु स्मृत:।।
(च० शा० १.२८)

२. आकाशादीनि भूतानि संर्वाण्येकगुणान्यथ। महाभूतेषु जन्येषु गुणवृद्धि: प्रजायते।।
एकद्वित्रिचतु:पञ्चगुणत्वं खादिषु स्मृतम्। गुणस्तत्रैक आत्मीय: शेष: संसर्गज: स्मृत:।।
अन्योन्यानुप्रविष्टानि दृष्यभूतानि निर्दिशेत्। तस्मात् पञ्चगुणान्येव सर्वाणीति विनिश्चय:।।
(पं० भू० अ० २, पृ० ६७-६८)

३. अन्योन्यानुप्रविष्टानि सर्वाण्येतानि निर्दिशेत्। स्वे स्वे द्रव्ये तु सर्वेषां व्यक्तं लक्षणमिष्यते।।
(सु० शा० १.२१)

Scanned by CamScanner

की निष्पत्ति पञ्चीकृत महाभूतों से ही होती है, अत: सभी द्रव्य पाञ्चभौतिक हैं। किन्तु पाञ्चभौतिक होने पर भी जिस महाभूत का प्राधान्य द्रव्य में होता है। 'व्यपदेशस्तु भूयसा' इस न्याय से उस विशिष्ट महाभूत के अनुसार ही द्रव्य का अभिधान किया जाता है; यथा- पृथिवी, जल, तेज, वायु और आकाश महाभूतों का प्राधान्य होने पर द्रव्य को क्रमश: पार्थिव, आप्य, तैजस, वायव्य और आकाशीय कहते हैं।[१] आधुनिक दृष्टि से, मूल तत्त्वों के परमाणु अब विभाज्य हो गये हैं उनमें इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन आदि अनेक सूक्ष्म तत्त्वों की कल्पना की गई है प्राच्य दृष्टिकोण से ये सूक्ष्म तत्त्व भी पाञ्चभौतिक हैं। उदाहरणार्थ, किसी परमाणु को आप लें। उसमें जो गुरुत्व है, वह पृथिवी तत्त्व के कारण है। इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन आदि का पारस्परिक संश्लेष और आकर्षण जल तत्त्व के कारण है। इनकी विद्युत् शक्ति का कारण तेज तत्त्व है। इनकी गति वायुतत्त्व के कारण होती है तथा अणु के भीतर का अन्तराकाश जिसमें इलेक्ट्रॉन चक्कर लगाते हैं, आकाश तत्त्व का द्योतक है। इस प्रकार यह सिद्ध है कि सृष्टि के सभी पदार्थ पाञ्चभौतिक हैं और इन्हीं पाञ्चभौतिक द्रव्यों का विचार द्रव्यगुणशास्त्र में किया जाता है।

४. **औषधत्व** (Dravya as drug)

संसार के सभी द्रव्य पाञ्चभौतिक हैं और शरीर भी पाञ्चभौतिक है अत: शारीरिक तत्त्वों का वैषम्य होने पर सभी द्रव्यों का प्रयोग औषधरूप में हो सकता है, किन्तु कोई भी द्रव्य औषध तभी कहलाता है जब उसका प्रयोग स्वरस-कषायादि कल्पनाओं में मात्रा, काल, संयोग आदि का विचार कर (युक्तिपूर्वक) पुरुष के स्वास्थ्यरक्षण और रोगी के विकारप्रशमन के उद्देश्य से (प्रयोजनपरक) हो।[२] अर्थात् युक्ति और अर्थ (प्रयोजन) ही औषधत्व के प्रयोजक हैं। द्रव्य और शरीर के इसी साधर्म्य को देखकर महर्षि सुश्रुत ने लिखा कि महाभूतों के अतिरिक्त चिकित्साशास्त्र में अन्य किसी का विचार नहीं किया जाता[३] और सामान्य से वृद्धि तथा विशेष

---

१. तत्र पृथिव्यप्तजोवाय्वाकाशानां समुदायाद् द्रव्याभिनिर्वृत्ति:, उत्कर्षस्त्वभिव्यञ्जको भवति- इदं पार्थिवम्, इदमाप्यम्, इदं तैजसम्, इदं वायव्यम्, इदमाकाशीयमिति। (सु० सू० ४.३)

२. अनेनोपदेशेन नानौषधिभूतं जगति किंचिद् द्रव्यमुपलभ्यते तां तां युक्तिमर्थं च तं तमभिप्रेत्य। (च० सू० २६.१२)

अनेन निदर्शनेन नानौषधीभूतं जगति किंचिद् द्रव्यमस्ति। (सु० सू० ४१.५)

रसादिभेदैरिति भेषजानां दिङ्मात्रमुक्तं न यतोऽस्ति किंचित्।

अनौषधं द्रव्यमिहावबोध:। (अ० सं० सू० १२.९२)

.....जगत्येवमनौषधम्। न किंचिद्विद्यते द्रव्यं वशात्रानार्थयोगयो:।। (अ० ह० सू० ९.१०)

३. भूतेभ्यो हि परं यस्मात्नस्ति चिन्ता चिकित्सिते। (सु० शा० १.१३)

Scanned by CamScanner

से ह्रास[१] इस नियम के अनुसार शरीर में जिस महाभूत की कमी होती है उस महाभूतभूयिष्ठ द्रव्य का प्रयोग करते हैं और जब उस महाभूत की वृद्धि होती है तब उसके विपरीत गुणभूयिष्ठ महाभूत वाले द्रव्य का प्रयोग करते हैं। इस प्रकार तृण-रेणु और मल-मूत्र जैसे तुच्छ और निकृष्ट द्रव्य से लेकर स्वर्ण-रजत तथा हीरक-माणिक्य जैसे बहुमूल्य द्रव्यों का प्रयोग चिकित्सा में होता है।

५. **प्राधान्य** (Importance)

सुश्रुत तथा नागार्जुन ने अपनी रचनाओं में द्रव्य तथा तदाश्रित अन्य पदार्थों का आपेक्षिक प्राधान्य बतलाया है। अपने-अपने प्रकरणों में सभी अन्य पदार्थों की अपेक्षा उत्कृष्ट बतलाये गये है। आपाततः यह विरोधाभास सा प्रतीत होता है क्योंकि अपने प्रकरण में जिस पदार्थ को प्रधान कहा गया उसी को दूसरे प्रकरण में अप्रधान बना दिया गया; यथा– द्रव्य के प्रसङ्ग में रस आदि अन्य पदार्थों की अपेक्षा द्रव्य ही सर्वप्रधान सिद्ध किया गया किन्तु आगे चलकर रस के प्रसङ्ग में रस ही सर्वप्रधान हो गया और द्रव्य आदि गौण हो गये; किन्तु सूक्ष्म निरीक्षण करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि अन्त में आचार्यों ने इन पूर्वकृत प्रसङ्गों का अत्यन्त सुन्दर रीति से समन्वय किया है और उनका तात्पर्य उन पदार्थों में परस्पर विरोध या संघर्ष दिखलाना नहीं है, जैसा कि 'केचित्' और 'एके' आदि शब्दों से एकीय मत का संकेत मिलता है, प्रत्युत उस शैली से सभी पदार्थों का स्वतन्त्र रूप से द्रव्य विज्ञान में महत्त्व प्रतिपादित करना है।[२] अतः इस प्रसङ्ग में प्राधान्य शब्द का अर्थ 'महत्त्व' समझना चाहिए। इसी प्रकार विजयरक्षित ने माधवनिदान की मधुकोष-टीका में निदानपञ्चक को व्यस्त और समस्त दोनों रूपों से व्याधिबोधक बतलाया है। यद्यपि व्यस्त रूप से इनके द्वारा अभीष्ट प्रयोजन उस रूप में सिद्ध नहीं होता तथापि इसके द्वारा उनका पृथक्-पृथक् स्वतंत्र रूप से रोगविज्ञान में महत्त्व तो ज्ञात हो ही जाता है। इस शैली से प्राचीन आचार्यों ने अनेक स्थलों में महत्त्वपूर्ण विषयों का उद्घाटन किया है।

सुश्रुत ने द्रव्य के प्राधान्य (महत्त्व) में निम्नाङ्कित युक्तियाँ दी हैं–

१. **व्यवस्थितत्व**– द्रव्य के स्वरूप में एक व्यवस्था या स्थिरता रहती है जब कि तदाश्रित गुण और कर्म अव्यवस्थित रूप से परिवर्तित होते रहते

---

१. सर्वदा सर्वभावानां सामान्यं वृद्धिकारणम्। ह्रासहेतुर्विशेषश्च–(च० सू० १.४४)

२. एतच्च एकीयमतोपदर्शनं सम्यग्द्रव्यादिस्वभावज्ञानार्थं; अभिनिविष्टो हि वादी स्वपक्षसाधनार्थं सर्वं स्वरूपप्राधान्यख्यापकं दर्शयति, तेन चान्ते वक्ष्यमाणाचार्यसिद्धान्तसहितेन सम्यक् प्रतीतिर्भवति। (सु० सू० ४०.३-चक्र०)

Scanned by CamScanner

है;[१] यथा आम्र उत्पत्तिकाल से अन्त तक आम्र ही रहता है किन्तु उसके रूप, रस आदि गुण तथा विविध कर्म निरन्तर परिवर्तित होते रहते हैं। व्यवस्थित पदार्थ प्रधान एवं अव्यवस्थित अप्रधान माना जाता है अत: व्यवस्थित होने से द्रव्य प्रधान है।[२]

२. **नित्यत्व**– द्रव्य गुण-कर्म की अपेक्षा नित्य होता है। काल, जल, वात आदि कारणों से रसादि गुण नष्ट हो जाते हैं[३] किन्तु उस अवस्था में भी 'यह वही द्रव्य है' इस प्रकार द्रव्य की पहचान (प्रत्यभिज्ञा) होती है। नित्य शब्द यहाँ आपेक्षिक है[४] और इससे आचार्य का अभिप्राय यह है कि कालपरिणाम के द्वारा रूपान्तर होने पर भी 'यह वही है' इस प्रकार जिसकी प्रत्यभिज्ञा हो वही नित्य कहा जाता है।[५] नित्य वस्तु अनित्य की अपेक्षा प्रधान होती है अत: द्रव्य नित्य होने के कारण प्रधान है।

३. **स्वजात्यवस्थान**– परिणाम होने पर भी द्रव्य अपनी पार्थिव आदि विशिष्ट जाति में ही रहता है, उसे छोड़ता नहीं,[६] किन्तु रसादि परिवर्तित होने पर अपनी जाति का भी परित्याग कर देते हैं। यथा दधि आद्योपान्त अपनी पार्थिव आदि जाति में ही रहता है जब कि रस तरुणावस्था में मधुर (पार्थिवाप्य) तथा कालान्तर में अम्ल (पार्थिवाग्नेय) हो जाता है। अपनी जाति में स्थिर रहने वाला पदार्थ प्रधान अन्यथा अप्रधान माना जाता है अत: द्रव्य प्रधान है।

४. **पञ्चेन्द्रियग्रहण**– पाञ्चभौतिक होने के कारण सभी द्रव्यों का ग्रहण दीर्घशष्कुलीन्याय से पाँचों इन्द्रियों के द्वारा होता है[७] किन्तु रस, गन्ध आदि गुणों

---

१. व्यवस्थानात्। (र० वै० १.१०२)
द्रव्यं व्यवस्थितं गुणा ह्यनवस्थिता:। उक्तं च- 'दूर्वाङ्कुरनिभं भूत्वा फलं जम्ब्वास्तत: पुन:। मेचकं भजते वर्णं पुनरञ्जनसंनिभम्।।' इति। एवं तद्गताश्च स्पर्शरसगन्धाश्चानवस्थिता:। जम्बूफलमिति द्रव्यम् सामान्यम्। (र० वै० १.१०२-भा०)

२. केचिदाचार्या ब्रुवते-द्रव्यं प्रधानं, कस्मात्? व्यवस्थितत्वात्, इह खलु द्रव्यं व्यवस्थितं न रसादय:, यथा- आमे फले ये रसादयस्ते पक्वे न सन्ति। (सु० सू० ४०.३)

३. नित्यत्वाच्च, नित्यं हि द्रव्यमनित्या गुणा:, यथा कालादिप्रविभाग:, स एव संपन्नरसगन्धो व्यापन्नरसगन्धो वा भवति। (सु० सू० ४०.३)

४. अनियतावस्थायिनो गुणा अनित्या उच्यन्ते, द्रव्यं च तदपेक्षया नियतावस्थायि नित्य-माख्यायते। (सु० सू० ४०.३-हा०)

५. नित्यत्वं च द्रव्याणां कालपरिणामेनान्यथाभावेऽपि तदेवेदमिति प्रत्यभिज्ञायमानत्वा-दवगन्तव्यम्। (सु० सू० ४०.३-हा०)

६. स्वजात्यवस्थानाच्च, यथा हि पार्थिवं द्रव्यमन्यभावं न गच्छत्येवं शेषाणि। (सु० सू० ४०.३)

७. पञ्चेन्द्रियग्रहणाच्च, पञ्चभिरिन्द्रियैर्गृह्यते द्रव्यं न रसादय:। (सु० सू० ४०.३)
सर्वेन्द्रियोपलब्धे:। (र० वै० १.१०१)....
सर्वै: श्रोत्रादिभिरिन्द्रियैर्द्रव्यं गृह्यते। रसादयो ह्येकेन्द्रियग्राह्या:।....एकमनेकेन्द्रियग्राह्यत्वात् प्रधान द्रव्यमिति। (र० वै० भा०)

Scanned by CamScanner

का रसना, घ्राण आदि एक ही विशिष्ट इन्द्रिय से ग्रहण होता है। दूसरे शब्दों में, गुण स्वत: व्यष्टिरूप में रहते हैं व्यष्टि की अपेक्षा समष्टि प्रधान होता है अत: द्रव्य प्रधान है।

५. **आश्रयत्व**– द्रव्य आश्रय है तथा रसादि इसी का अधिष्ठान लेकर आश्रित होते हैं।[१] आश्रित परतन्त्र होने के कारण अप्रधान तथा आश्रय स्वतंत्र होने के कारण प्रधान होता है अत: द्रव्य प्रधान है। इसी आधार पर नागार्जुन ने द्रव्य का लक्षण लिखा है कि जो रसादि पदार्थों का आश्रय हो उसे द्रव्य कहते हैं।[२] अन्य आचार्यों ने भी द्रव्य के लक्षण में गुणकर्माश्रयत्व को ही प्रधानता दी है। वस्तुत: अकेला आश्रयत्व ही द्रव्य को सर्वोपरि स्थान देने में समर्थ है।

६. **आरम्भसामर्थ्य**– चिकित्सा या व्यवहार में आहरण आदि कर्मों के आरम्भ की योग्यता द्रव्य में ही है, रसादि में नहीं। यथा कोई कहे कि 'विदारिगंधादि' वर्ग को लाकर कूट कर पकाओ, तो यहाँ 'विदारिगंधादि' शब्द से उस वर्ग के अन्तर्गत द्रव्यों का ही बोध होता है न कि तदाश्रित रसों का।[३] 'मूल लाओ' कहने पर द्रव्य ही लाया जाता है, रसादि नहीं। रसादि लाये भी नहीं जा सकते क्योंकि ये निश्चेष्ट हैं, द्रव्य के आधार पर ही इनकी गति होती है। सर्वेन्द्रियसंपन्न गतिशील पुरुष पङ्गु की अपेक्षा प्रधान होता है अत: द्रव्य प्रधान है।[४]

७. **शास्त्रप्रामाण्य**– शास्त्र में द्रव्य ही प्रधान रूप में निर्दिष्ट है। विभिन्न योगों के वर्णन में द्रव्यों का ही उल्लेख किया गया है, रसों का नहीं। यथा

---

१. आश्रयत्वाच्च, द्रव्यमाश्रिता रसादय: (सु० सू० ४०.३)
अधिष्ठानादाश्रयात्। (र० वै० १.१०३)
द्रव्यमाश्रय: आश्रयिणो रसादय इति। आश्रयभूत: प्रधान: स्वामी दृष्ट इति।।
(र० वै० १.१०३-भा०)

२. द्रव्यमाश्रयलक्षणं पञ्चानाम्। (र० वै० १.१६६)
रसादीनां (पञ्चानां) पदार्थानां यदाश्रयभूतं तद् द्रव्यम्। (र० वै० १.१६६-भा०)

३. आरम्भसामर्थ्याच्च, द्रव्याश्रित आरम्भ:, यथा- 'विदारिगन्धादिमाहृत्य संक्षुद्य विपचेत्' इत्येवमादिषु न रसादिष्वारम्भ:। (सु० सू० ४०.३)

४. आरम्भसामर्थ्यात्। (र० वै० १.१०४)
आरम्भश्चिकित्सायां क्रियारम्भ: मूलमाहरेत्यादि तस्मिन् द्रव्यस्यैव सामर्थ्यं न रसादीनामारम्भ-सामर्थ्यम्। अविकलेन्द्रिय: पुरुष: प्रधानो दृष्ट: पङ्गोरिति। (र० वै०१.१०४-भा०)

Scanned by CamScanner

मिश्रकाध्याय में सुश्रुत ने मातुलुङ्ग, अग्निमन्थ आदि द्रव्यों का ही निर्देश किया है रसों का नहीं।[१] अतः आगम प्रमाण से भी द्रव्य प्रधान है।

८. **क्रमापेक्षितत्व**– रसादि गुण द्रव्य का अनुगमन करते हैं अतः उनका क्रम द्रव्य के अवस्थाक्रम पर निर्भर है। द्रव्य की जो स्थिति होगी तदाश्रित रसादि गुणों की भी वैसी ही स्थिति होगी; यथा द्रव्य की अपरिपक्वावस्था में रसादि भी अपरिपक्व और परिपक्वावस्था में ये भी परिपक्व होते हैं। अग्रणी प्रधान तथा अनुचर अप्रधान होता है अतः द्रव्य प्रधान तथा अन्य रसादि भाव अप्रधान हैं।[२]

९. **एकदेशसाध्यत्व**– द्रव्यों के एकदेश से भी चिकित्सा की जाती है किन्तु रसादि के एकदेश से कार्य नहीं चलता क्योंकि उनके अवयव होते ही नहीं यथा स्नुही के दुग्ध से ही अनेक रोगों की चिकित्सा की जाती है अतः विभिन्न अङ्गों के द्वारा प्रयोग बाहुल्य होने से द्रव्य प्रधान है।[३]

इनके अतिरिक्त, नागार्जुन ने निम्नाङ्कित युक्तियाँ और दी हैं–

---

१. शास्त्रप्रामाण्याच्च, शास्त्रे हि द्रव्यं प्रधानमुपदेशे हि योगानां, यथा–'मातुलुङ्गाग्निमन्थौ च' इत्यादौ न रसादय उपदिश्यन्ते। (सु० सू० ४०.३)
शास्त्रोपदेशसामर्थ्यात्। (र० वै० १.१०७)
आगमादित्यर्थः। शास्त्र एवोपदिश्यते हि य एव हि गुणा द्रव्ये शरीरेष्वपि ते स्मृताः। तान् द्रव्यैस्तद्गुणैरेव प्रयोगेष्वभिवर्धयेत्। इति सामान्यप्रयोगवचने विशिष्टेन प्रयोगो निर्दिश्यत इति। (र० वै० १.१०६-भा०)

२. क्रमापेक्षितत्वाच्च रसादीनां, रसादयो हि द्रव्यक्रममपेक्षन्ते यथा–तरुणे तरुणाः, संपूर्णे संपूर्णा इति। (सु० सू० ४०.३)
तदनुविधानाच्चेतरेषाम्। (र० वै० १.१०९)।
इतरेषां रसादीनां द्रव्यस्यानुविधानाद्, द्रव्यमनुवर्त्तन्ते हि रसादयः, तारुण्ये तरुणाः, संपत्तौ संपन्नाः, विपत्तौ विपन्ना भवन्तीति। ये यमनुवर्त्तन्ते, ते तस्मादप्रधाना दृष्टाः। तद्यथा–गुरोः शिष्या इति। (र० वै० १.१०९-भा०)
जन्म तु द्रव्यरसयोरन्योन्यापेक्षिकं स्मृतम्। अन्योन्यापेक्षिकं जन्म यथा स्याद् देहदेहिनोः।। (सु० सू० ४०.१६)

३. एकदेशसाध्यत्वाच्च, द्रव्याणामेकदेशेनापि व्याधयः साध्यन्ते, यथा–महावृक्षक्षीरेणेति; तस्माद्द्रव्यं प्रधानं, न रसादयः, कस्मात्? निरवयवत्वात्। (सु० सू० ४०.३)
अवयवेन सिद्धेः। (र० वै० १.१०८)
अवयवेन एकदेशेन प्रदेशेन सिद्धेः, प्रयोगेष्विति वाक्यशेषः। यथा मूलत्वगादिना अवयवेन यः साधयति, स प्रधानो दृष्टः। (र० वै० १.१०८-भा०)

Scanned by CamScanner

१०. **तरतमयोगानुपलब्धि–** गुणों में तारतम्य का प्रयोग होता है किन्तु द्रव्य में नहीं। इसका कारण यह है कि गुण अनियत होने के कारण उनकी मात्रा में न्यूनाधिक्य के वाचक 'तरतम' इन आपेक्षिक प्रत्ययों का प्रयोग होता है किन्तु द्रव्य व्यवस्थित होने के कारण उसके साथ ये प्रत्यय नहीं लगते। यथा मधुरतर, मधुरतम आदि शब्दों का बहुशः प्रयोग देखा जाता है किन्तु हरीतकीतर और हरीतकीतम ऐसे शब्दों का प्रयोग नहीं होता।[१] इसलिए द्रव्य प्रधान है।

११. **विकल्प-सामर्थ्य–** कल्क, कषाय आदि विविध कल्पनायें द्रव्य की ही होती हैं रसादि की नहीं, अतः विकल्प-बाहुल्य के कारण द्रव्य प्रधान है।[२]

१२. **प्रतीघात-सामर्थ्य–** द्रव्य मूर्त्तिमान होने के कारण आवरणात्मक अर्थात् अवकाश को घेरने वाले हैं। जिस स्थान में एक द्रव्य स्थित है उसी स्थान में उस समय दूसरा द्रव्य नहीं रह सकता किन्तु रसादि अमूर्त्त होने के कारण आवरणात्मक नहीं हैं। जिसमें आवरण की शक्ति होती है वह प्रधान होता है यथा चक्रवर्ती राजा। अतः द्रव्य प्रधान है।[३]

जैसा कि ऊपर संकेत किया गया है, इन सभी युक्तियों में आश्रयत्व की युक्ति सर्वप्रधान है। इसलिए आचार्यों ने द्रव्य के लक्षण का भी वही आधार बनाया है। द्रव्य-प्राधान्य-प्रकरण का उपसंहार करते हुए सुश्रुत ने भी इसी युक्ति को दुहराया है–

'बिना वीर्य के विपाक नहीं, विना रस के वीर्य नहीं और विना द्रव्य के रस नहीं होता अतः इन सबमें द्रव्य ही श्रेष्ठ माना गया है। वीर्यसंज्ञक आठ गुण भी द्रव्य ही में रहते हैं रस में नहीं क्योंकि रस गुण है और गुण में गुण की

---

१. तरतमयोगानुपलब्धेः। (र० वै० १.१००)
तरतमयोगो रसादिषु दृष्टः।....मधुरतरो, मधुरतमः; शीततरः, शीततमः, छर्दनीयतरं, छर्दनीयतमं, लघुतरः, लघुतमः, कर्मतरं, कर्मतमम् इति। द्रव्येषु नास्ति–यष्टीमधुकतरो यष्टीमधुकतम इति। तस्मात् तरतमयोगाभावाद् रसादिभ्यो द्रव्यं प्रधानमिति।
(र० वै० १.१००-भा०)

२. विकल्पसामर्थ्यात्। (र० वै० १.१०५)
विविधः कल्पो विकल्पः कल्ककषायादिभेदेन, तस्मिन् विकल्पे सामर्थ्यात्, तत् सर्वं द्रव्यस्यैव नान्यस्येति। (र० वै० १.१०५-भा०)

३. प्रतीघातसामर्थ्यात्। (र० वै० १.१०६)
प्रतीघात आवरणं, तस्मिन् सामर्थ्यं द्रव्यस्यैव भवति, मूर्त्तिमत्त्वात्।.....प्रतीघातसामर्थ्यात् स्वस्थानेऽन्यस्यानवकाशदानादिति। रसादयः संपृक्तास्तिष्ठन्तीति। आवरणार्थोऽपि स एव घटते। यः स्वस्मिन् स्थानेऽन्यस्यावकाशं निरुणद्धि, स प्रधानो दृष्टः चक्रवर्तीति।
(र० वै० १.१०६-भा०)

Scanned by CamScanner

स्थिति नहीं होती। विपाक भी द्रव्य का ही होता है रसादि का नहीं। अतः द्रव्य आश्रय और श्रेष्ठ है तथा शेष भाव उसके आश्रित और अप्रधान है।'[१]

नागार्जुन ने भी इस प्रसङ्ग की समाप्ति 'द्रव्यमाश्रयलक्षणं पञ्चानाम्' द्रव्य के इस आश्रयमूलक लक्षण से ही की। आचार्य सुश्रुत ने भी लिखा– 'द्रव्यलक्षणं तु क्रियागुणवत् समवायिकारणम्' इति– अर्थात् जो गुणकर्म का आश्रय तथा समवायिकारण हो उसे द्रव्य कहते हैं।

*

१. पाको नास्ति विना वीर्याद् वीर्यं नास्ति विना रसात्।
रसो नास्ति विना द्रव्याद् द्रव्यं श्रेष्ठतमः स्मृतम्।।
वीर्यसंज्ञा गुणा येऽष्टौ तेऽपि द्रव्याश्रयाः स्मृताः।
रसेषु न भवन्त्येते निर्गुणास्तु गुणाः स्मृताः।।
द्रव्ये द्रव्याणि यस्माद्धि विपच्यन्ते न षड्रसाः।
श्रेष्ठं द्रव्यमतो ज्ञेयं, शेषा भावास्तदाश्रयाः।। (सु० सू० ४०.१५,१७-१८)

Scanned by CamScanner

द्वितीय अध्याय

द्रव्यों का नामकरण एवं पर्याय

(Nomenclature and Synonyms of Dravyas)

द्रव्यों का नामकरण अनेक आधारों पर किया गया है। वैदिक काल में आख्यानों के आधार पर वनस्पतियों के नाम रक्खे गये हैं यथा अश्वत्थ (जिसमें अश्वरूप में अग्नि स्थित हो)। ऐसा वैदिक आख्यान है कि अग्नि अश्व का रूप धारण कर देवताओं के यहाँ से भाग आये और इस वनस्पति में छिप गये। अनेक पशु-पक्षियों से भी वनस्पतियों का सम्बन्ध बतलाया गया है। संभवत: उनके नामकरण में इसका भी आधार लिया गया हो यथा सर्पगन्धा, वाराही, नाकुली, हंसपदी आदि। 'सोम' संज्ञा संभवत: उसके सवन-कर्म में उपयोगी होने के कारण हो। दोषों एवं मलों का अपमार्जन (संशोधन) करने के कारण 'अपामार्ग' नाम सार्थक है। इसी प्रकार ऊर्ज (ओज) का वर्धन करने से 'ऊर्जयन्ती' है। 'अजशृङ्गी' 'उत्तानपर्णी' आदि संज्ञायें स्वरूपबोधक हैं। औक्षगंधि, सुगंधितेजन, अश्वगन्धा आदि गुणबोधक नाम हैं। स्वादु, शीतिका, वर्षाभू आदि नाम उद्भवस्थान के बोधक हैं। इस प्रकार वैदिक काल में वनस्पतियों की उद्भवबोधक, गुणबोधक, कर्मबोधक, स्वरूपबोधक आदि संज्ञाओं का स्रोत मिलता है।

राजनिघण्टुकार ने कहा है कि ओषधियों के नाम निम्नाङ्कित सात आधारों पर रक्खे गये हैं[१]–

१. रूढि– आटरूषक, गुडूची, टुण्टुक आदि।
२. प्रभाव– क्रिमिघ्न, हयमार आदि।
३. देश्योक्ति– मागधी, वैदेही, कालिङ्ग, कैरात आदि।
४. लाञ्छन– राजीफल, चित्रपर्णी आदि।
५. उपमा– शालपर्णी, मेषशृङ्गी, अजकर्ण आदि।
६. वीर्य– ऊषण, कटुका, मधुक आदि।[२]
७. इतराह्वय– शक्राह्व, काकाह्वा आदि।

---

१. नामानि क्वचिदिह रूढितः प्रभावाद् देश्योक्त्या क्वचन च लाञ्छनोपमाभ्याम्।
वीर्येण क्वचिदितराह्वयादि देशाद् द्रव्याणां ध्रुवमिति सप्तधोदितानि।। (रा०नि० प्रस्तावना १३)

२. 'वीर्य' शब्द यहाँ रस, गुण, वीर्य, विपाक का बोधक है।

Scanned by CamScanner

प्राचीन निघण्टुओं की रचना पर्यायशैली में हुई है, उनमें केवल पर्याय हैं। गुण-कर्म और प्रयोग का पृथक् से वर्णन नहीं है। नाम और रूप का ज्ञान आवश्यक तो था ही अत: इसके लिए विभिन्न पर्यायों का सृजन किया जाता था। पर्यायों के माध्यम से ही वनस्पति के आकार-प्रकार, उद्भवस्थान आदि का बोध कराया जाता था। इसके अतिरिक्त, विशिष्ट गुणों एवं कर्मों के बोध के लिए भी पर्याय बनाये जाते थे। अत: निघण्टुओं में उपलब्ध वानस्पतिक पर्यायों को निम्नाङ्कित वर्गों में विभक्त किया जा सकता है[१]–

१. स्वरूपबोधक

अणु, न्यग्रोध, पुनर्नवा, प्रसारिणी, जटामांसी आदि।

२. अवयवबोधक

पत्र– त्रिपर्णी, चतुष्पत्री, पञ्चाङ्गुल, दीर्घवृन्त।
पुष्प– शतपुष्पा, नागपुष्प, शतदल।
फल– मेषशृङ्गी, आवर्त्तनी, पृथुशिम्ब, तूलफल।
बीज– इन्द्रयव, कृष्णबीज।
काण्ड– त्रिवृत्, कालस्कन्ध, चक्राङ्गी।
मूल– शतमूली, दन्ती, शुक्लकन्दा।
क्षीर– पयस्या, स्वर्णक्षीरी।
ग्रन्थि– षड्ग्रन्था, ग्रन्थिपर्णी।
कण्टक– गोक्षुर, तीक्ष्णकण्टक।
सार– रक्तसार, पीतसार, नि:सारा।
वल्कल– स्थूलवल्कल, दृढवल्कल।
रोम– कपिरोमफला।

३. गुणबोधक

शब्द– गुञ्जा, घण्टारवा।
स्पर्श– दु:स्पर्शा, खरमञ्जरी।
रूप– कान्ता, रक्तयष्टिका।
रस– मधुरसा, वरतिक्त, कटुका, अम्लिका।
गन्ध– गन्धप्रियङ्गु, अश्वगन्धा, तीक्ष्णगन्धा, विट्खदिर।
अन्यगुण– तीक्ष्णफल, मृदुच्छद, स्निग्धदारु।
वीर्य– ऊषण, हिम।

---

१. अतिरिक्त सूचना के लिए लेखक की पुस्तक 'नामरूपज्ञानम्' देखें।

Scanned by CamScanner

४. **प्रभाव**– क्रिमिघ्न

५. **कर्मबोधक**

वातारि, रेचन, वामक, मेध्या, कृमिघ्न।

६. **उद्भवबोधक**

(क) योनि– कृमिजा, मृगनाभि।
(ख) रोहण– काण्डरुहा, पर्णबीज।
(ग) अधिष्ठान– जलज, वाप्य, वृक्षादनी।

७. **लोकोपयोगबोधक**

यज्ञिय, रथद्रुम, स्रुववृक्ष।

८. **आख्यानबोधक**

अमृतसंभवा, रुद्ररेतस्।

९. **इतिहासप्रसिद्धि**

बोधिद्रुम (अश्वत्थ)

१०. **प्रशस्तिबोधक**

भद्रदारु, मङ्गल्या।

११. **देशबोधक**

(क) उद्भव– मागधी, कालिङ्ग, धन्वयास।
(ख) व्यापार– बाह्लीक, धर्मपत्तन।

१२. **कालबोधक**

पुष्पकाल– वासन्त, शारद, ग्रैष्मिकी, प्रावृषेण्य।

ये उदाहरणमात्र हैं। इसी प्रकार अन्य पर्यायों को वर्गीकृत कर उन्हें क्रमबद्ध किया जा सकता है जिससे उनकी सार्थकता का सम्यक् ज्ञान हो सके।

*

Scanned by CamScanner

तृतीय अध्याय

द्रव्यों का मौलिक वर्गीकरण

(Basic classification of Dravyas)

संसार में द्रव्यों की संख्या अगणनीय है, अत: उनका पृथक्-पृथक् अध्ययन अतीव दु:साध्य है। इसके अतिरिक्त, नितान्त विभिन्न दृष्टिगोचर होने वाले द्रव्यों में भी कुछ न कुछ आभ्यन्तर साधर्म्य होता है।[१] इसलिए किसी शास्त्र के वैज्ञानिक अध्ययन के लिए उसके पदार्थों को व्यवस्थित करना सर्वप्रथम आवश्यक होता है। वह कार्य वर्गीकरण के द्वारा होता है। पदार्थों को विभिन्न वर्गों में व्यवस्थित कर देने से उनके साधर्म्य-वैधर्म्य पूर्णत: परिलक्षित हो जाते हैं और उनका अध्ययन सुकर हो जाता है। अत: वर्गीकरण वैज्ञानिक अध्ययन का प्रथम सोपान माना गया है। वैदिक वाङ्मय में ओषधियाँ चार प्रकार की कही गई हैं– आथर्वणी, आङ्गिरसी, दैवी तथा मानुषी।[२] इसके अतिरिक्त, उद्भवस्थान, गुण तथा कर्म के अनुसार भी वर्गीकरण उपलब्ध होता है।

आयुर्वेदीय आचार्यों ने द्रव्यों का वर्गीकरण अनेक दृष्टिकोणों से किया है–

(क) **कार्यकारणभेद से**– द्रव्य दो प्रकार के हैं– कारणद्रव्य और कार्यद्रव्य। सृष्टि के मौलिक तत्त्व जिनसे सभी द्रव्य उत्पन्न होते हैं कारणद्रव्य कहलाते हैं। ये संख्या में ९ हैं– पञ्चमहाभूत, आत्मा, मन, दिक् और काल।[३] इनसे उत्पन्न होने वाले सृष्टि के सभी द्रव्य कार्यद्रव्य कहलाते हैं यथा घट, पट, गोधूम, गुडूची आदि। द्रव्यगुणशास्त्र में कार्यद्रव्य ही विवक्षित हैं, यह पहले कहा जा चुका है।

(ख) **चेतनाभेद से**– चेतना की स्थिति के अनुसार द्रव्य दो प्रकार के होते हैं- चेतन (Animate) और अचेतन (Inanimate)।[४] चेतन उसे कहते हैं जिसमें चेतनाधातु (आत्मा) का निवास और अभिव्यक्ति हो यथा जीवजन्तु और वृक्ष आदि। इसके विपरीत, अचेतन वह है जिसमें चेतना की स्थिति और अभिव्यक्ति न हो यथा स्वर्ण आदि धातु तथा अन्य पार्थिव द्रव्य।[५] वैदिक वाङ्मय में इन्हें क्रमश:

---

१. Unity in diversity.

२. **आथर्वणीराङ्गिरसी: दैवी मनुष्यजा उत।**
ओषधय: प्रजायन्ते यदा तं प्राण जिन्वसि।। (अथर्व० ११.४.१६)

३. **खादीन्यात्मा मन: कालो दिशश्च द्रव्यसंग्रह:।** (च० सू० १.४८)

४. **तच्चेतनावदचेतनञ्च...।** (च० सू० २६.१०)

५. **सेन्द्रियं चेतनं द्रव्यं, निरिन्द्रियमचेतनम्।** (च० सू० १.४८)

Scanned by CamScanner

साशन और अनशन कहा गया है। चेतन द्रव्य भी औषध में प्राय: अचेतन रूप में ही प्रयुक्त होते हैं। चेतन द्रव्य पुन: दो शाखाओं में विभक्त होते हैं- अन्तश्चेतन और बहिरन्तश्चेतन। अन्तश्चेतन वह है जिसमें चेतना की पूर्ण अभिव्यक्ति नहीं होती और जीवन की संवेदनायें प्रच्छन्न और अस्फुट रूप से चलती हैं। इस वर्ग में औद्भिद या स्थावर द्रव्यों का समावेश होता है।[१] बहिरन्तश्चेतन वह है जिसमें अन्तश्चेतना की बाह्य अभिव्यक्ति भी स्फुट और पूर्ण होती है यथा जाङ्गम द्रव्य। औद्भिद वर्ग में चेतना की स्थिति तथा इन्द्रियाभिव्यक्ति के अनेक दृष्टान्त टीकाकारों ने दिये हैं यथा सूर्यमुखी का सूर्य के अनुसार घूमना, लवली में मेघगर्जन से फल लगना, बीजपूर में शृगालादि जन्तुओं की वसा की गन्ध से फलोत्पत्ति, मद्यपरिषेक से आम्र में फल लगना तथा लज्जालु का हस्तस्पर्श से सङ्कोच[२] इत्यादि। विश्वविख्यात वैज्ञानिक सर जगदीश चन्द्र बोस के अनेक अनुसन्धान इस सम्बन्ध में महत्त्वपूर्ण हैं जिनसे उद्भिद् जाति की अन्तश्चेतना का संकेत मिलता है।

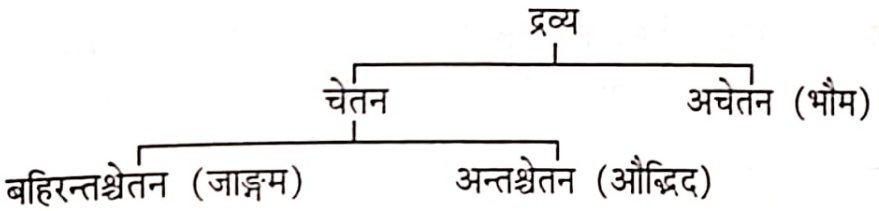

(ग) **निष्पत्ति (भौतिक सङ्घटन) भेद से**- यह पहले कहा जा चुका है कि महाभूतों के उत्कर्ष के अनुसार द्रव्यों की पार्थिव आदि संज्ञायें होती हैं। इस दृष्टि से द्रव्य पाँच प्रकार के होते हैं- पार्थिव, आप्य, तैजस, वायव्य, आकाशीय। इसमें तत्तद् महाभूत की अधिकता होती है जिसके कारण उनके गुणकर्म में विशेषता आ जाती है। इन पाँचों वर्गों का स्वरूप तथा गुणकर्म निम्नाङ्कित तालिका से स्पष्ट होगा।

पाञ्चभौतिक द्रव्यों के गुण-कर्म[३]

वर्ग	इन्द्रियार्थ	रस	गुण	कर्म	विपाक
१. पार्थिव	गन्ध	मधुर, ईषत्कषाय	गुरु, खर, कठिन, मन्द, स्थिर, विशद, सान्द्र, स्थूल	उपचय, सङ्घात, गौरव, स्थैर्य, बल, अधोगमन	गुरु

क्रमश:...

१. गुच्छगुल्मं बहुविधं तथैव तृणजातय:। बीजकाण्डरुहाण्येव प्रताना वल्ल्य एव च।।
तमसा बहुरूपेण वेष्टिता: कर्महेतुना। अन्त:संज्ञा भवन्त्येते सुखदु:खसमन्विता:।।
(मनु० १.४८-४९)

२. (च० सू० १.४८-चक्र०)

३. तत्र स्थूलसान्द्रमन्दस्थिरगुरुकठिनं गन्धबहुलमीषत्कषायं प्रायशो मधुरमिति पार्थिवं; तत् स्थैर्य-बल-गौरव-सङ्घातोपचयकरं विशेषतश्चाधोगतिस्वभावमिति; शीतस्तिमितस्निग्ध-

क्रमश:...

Scanned by CamScanner

वर्ग	इन्द्रियार्थ	रस	गुण	कर्म	विपाक
२.आप्य	रस	मधुर, ईषत्कषा-याम्ललवण	द्रव, स्निग्ध, शीत, मन्द, मृदु, सान्द्र, पिच्छिल, स्तिमित, सर	क्लेदन, स्नेहन, बन्धन, विष्यन्दन, मार्दव, प्रह्लादन	गुरु
३. तैजस	रूप	कटु, ईषद्-म्ललवण	उष्ण, तीक्ष्ण, सूक्ष्म, लघु, रूक्ष, विशद, खर	दहन, पचन, प्रभा, वर्ण, प्रकाशन, दारण, तापन, ऊर्ध्वगमन	लघु
५. वायव्य	स्पर्श	कषाय, ईषत्तिक्त	लघु, शीत, रूक्ष, खर, विशद, सूक्ष्म, विकाशी, व्यवायी	विरूक्षण, विचारण, ग्लपन, वैशद्यकर, लाघवकर, कर्शन, आशुकारी	लघु
५.आका-शीय	शब्द	अव्यक्त	मृदु, लघु, श्लक्ष्ण, सूक्ष्म, व्यवायी, विशद, विविक्त	मार्दव, शौषिर्य, लाघव, विवरण	लघु

(घ) **योनिभेद से**– द्रव्य तीन प्रकार के होते हैं– जाङ्गम, औद्भिद और भौम।[१] जाङ्गम या जान्तव (Animal product) उसे कहते हैं जो जङ्गम प्राणियों से प्राप्त होते हैं[२] यथा कस्तूरी, गोरोचन, दुग्ध, घृत आदि। औद्भिद या वानस्पतिक द्रव्य (Vegetable or Plant) वह है जो पृथिवी से फूट कर निकलता है[३] यथा गोधूम, हरीतकी आदि। भौम या पार्थिव द्रव्य (Mineral or Inorganic) वह है जो भूमि से प्राप्त होता है या उसका विकार है[४] यथा पारद, गन्धक, लवण, धातु आदि।

मन्दगुरुसरसान्द्रमृदुपिच्छिलं रसबहुलमीषत्कषायाम्ललवणं मधुररसप्रायमाप्यं; तत् स्नेहनह्लादनक्लेदनबन्धनविष्यन्दनकरमिति; उष्णतीक्ष्णसूक्ष्मरूक्षखरलघुविशदं रूपबहुल-मीषदम्ललवणं कटुकरसप्रायं विशेषतश्चोर्ध्वगतिस्वभावमिति तैजसं; तद्दहन-पचन-दारण-तापन-प्रकाशन-प्रभावर्णकरमिति; सूक्ष्मरूक्षखरशिशिरलघुविशदं स्पर्शबहुलमीषत्तिक्तं विशेषतः कषायमिति वायवीयं; तद्वैशद्यलाघवग्लपनविरूक्षणविचारणकरमिति; श्लक्ष्णसूक्ष्म-मृदुव्यवायिविशदविविक्तमव्यक्तरसं शब्दबहुलमाकाशीयं; तन्मार्दवशौषिर्यलाघवकरमिति।
(सु० सू० ४१.५(१-५)

तत्र द्रव्याणि गुरुखर.....लाघवकराणि (च० सू० २६.११)

१. तत्पुनस्त्रिविधं प्रोक्तं जाङ्गमं भौममौद्भिदम्। (च० सू० १.६८)

२. जङ्गमप्रभवं जाङ्गमं गोरसमध्वादि। (च० सू० १.६९-यो०)

३. उद्भिद्य पृथिवीं जायत इति औद्भिदं वृक्षादि। (च० सू० १.६८-चक्र०)

४. भूमेर्विकारः भौमं सुवर्णादिकम्। (च० सू० १.६९-यो०)

Scanned by CamScanner

जाङ्गम द्रव्य पुनः चार प्रकार के होते हैं– जरायुज, अण्डज, स्वेदज, उद्भिज्ज।[१] जरायुज उन प्राणियों को कहते हैं जो गर्भावस्था में जरायु से आवृत रहते हैं यथा मनुष्य, पशु आदि। अण्डज उन्हें कहते हैं जो अण्डे से उत्पन्न होते हैं यथा पक्षी, सर्प आदि। स्वेदज वे हैं जो पृथिवी के बाष्प या प्राणियों के स्वेद से उत्पन्न होते हैं यथा कृमि, कीट, पिपीलिका आदि। उद्भिज्ज प्राणि वे हैं जो पृथिवी के भीतर कुछ काल तक रहते हैं और पुनः पृथिवी को फाड़ कर बाहर निकलते हैं यथा बीरबहूटी, मण्डूक आदि।

इसी प्रकार औद्भिद द्रव्य भी चार विभागों में विभक्त हैं– वनस्पति, वीरुध्, वानस्पत्य, ओषधि। जिनमें दृश्य पुष्प नहीं होते उन्हें वनस्पति कहते हैं यथा वट, उदुम्बर, प्लक्ष आदि। लता और गुल्म को वीरुध् कहते हैं यथा प्रसारिणी, कुश आदि। वानस्पत्य वे हैं जिनमें पुष्प और फल दोनों स्पष्ट रूप से लगते हैं यथा आम्र, जम्बू आदि। ओषधि वह है जो फल लगने या पक्व होने पर नष्ट हो जाती है यथा गोधूम, यव, दूर्वा आदि।[२] सुश्रुत ने 'वानस्पत्य' के लिए 'वृक्ष' शब्द दिया है। वस्तुतः वनस्पति[३] बड़े वृक्ष (Tall trees), वानस्पत्य मध्यम प्रमाण के वृक्ष (Medium trees)। यास्क ने वृक्ष की निरुक्ति में कहा है कि जो भूमि को आच्छादित करे।[४] वीरुध्[५] गुल्म और लतायें (Shrubs and weak plants) तथा ओषधि छोटे क्षुप (Herbs) हैं। उन्होंने ओषधि की निरुक्ति कई प्रकार से की है; सबका तात्पर्य यह है कि जो शरीर को शक्ति प्रदानकर उसका पोषण करे और विकारों का निवारण करे।[६] यह कार्य ओष (रसादिगुण) के द्वारा होता है जो ओषधि में स्थित रहता है।[७]

---

१. जङ्गमाः खल्वपि चतुर्विधाः–जरायुजाण्डजस्वेदजोद्भिज्जाः। तत्र पशुमनुष्यव्यालादयो जरायुजाः, खगसर्पसरीसृपप्रभृतयोऽण्डजाः, कृमिकीटपिपीलिकाप्रभृतयः स्वेदजाः, इन्द्रगोप-मण्डूकप्रभृतय उद्भिज्जाः। (सु० सू० १.३०)

२. .....औद्भिदं तु चतुर्विधम्। वनस्पतिस्तथा वीरुद्वानस्पत्यस्तथौषधिः।।
फलैर्वनस्पतिः पुष्पैर्वानस्पत्यः फलैरपि। ओषध्यः फलपाकान्ताः प्रतानैर्वीरुधः स्मृताः।।
(च० सू० १.७१-७२)
अत्र केचित् फलान्ताः पाकान्ताश्चौषध्य इति वदन्ति; तेन विनाऽपि फलं पाकेनैवान्तो येषां दूर्वादीनां तेऽपि गृह्यन्ते। (च० सू० १.७२-चक्र०)

३. वनानां पाता पालयिता वा। (या० नि० ८.३)

४. वृत्वा क्षां तिष्ठति। (या० नि० १२.२९)
वृक्षति, वृक्ष आवरणे धातोः। (अ० को० २.४.५-रामा०)

५. वीरुधः.....विरोहणात्। (या० नि० ६.३)

६. ओषध्य ओषद्धयन्तीति वा। ओषत्येना धयन्तीति वा। दोषं धयन्तीति वा। (या० नि० ९.२९)

७. ओसो नाम रसः सोऽस्यां धीयते यत्तदोषधिः।
ओसादारोग्यमाधत्ते तस्मादोषधिरोषधः।। (का० खि० ३.२७)

Scanned by CamScanner

भौम द्रव्य भी दो प्रकार के होते हैं– एक जो प्राकृतावस्था में भूमि से निकलते हैं उन्हें प्राकृत या खनिज कहते हैं और दूसरे जो कृत्रिम विधियों से बनाये जाते हैं उन्हें कृत्रिम कहते हैं। लौह, अभ्रक आदि खनिज तथा लवण (सोडियम क्लोराइड), क्षार (सोडा बाइकार्ब) आदि कृत्रिम हैं।

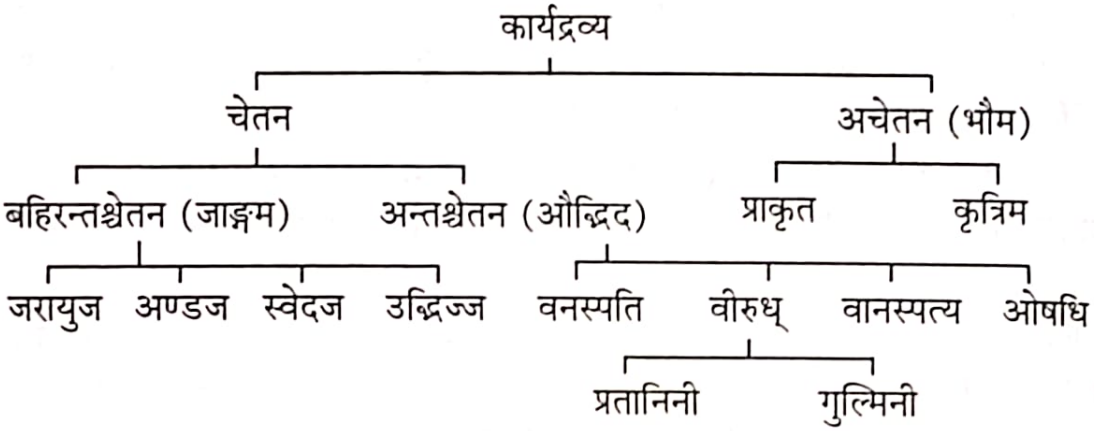

(च) **प्रयोगभेद से**– द्रव्य दो वर्गों में विभाजित हैं– औषधद्रव्य और आहारद्रव्य। औषधद्रव्यों के प्रयोग से शरीर में मुख्यत: शीत, उष्ण आदि गुणों का आधान होता है; रस आदि धातुओं का पोषण इनसे उस प्रकार नहीं होता यथा हरीतकी, पिप्पली आदि। आहारद्रव्यों से प्रधानतया शरीर के रस आदि धातुओं का ही पोषण होता है, शीत, उष्ण आदि गुणों की उत्पत्ति गौणरूप से होती है यथा शालि, गोधूम आदि। दूसरे शब्दों में, यह भी कहते हैं कि औषधद्रव्य वीर्यप्रधान तथा आहारद्रव्य रसप्रधान होते हैं।[१] इसलिए औषधद्रव्यों का प्रयोग रोगनिवारण के लिए विशिष्ट अवस्थाओं में विशेष उद्देश्य एवं योजना के अनुसार करते हैं[२] तथा आहारद्रव्य शरीर की रक्षा एवं वृद्धि के लिए सामान्यत: प्रयुक्त होते हैं।[३] औषधद्रव्य भी गुणों के तारतम्य के अनुसार पुन: तीन प्रकार के बतलाये गये हैं– तीक्ष्णवीर्य, मध्यवीर्य, मृदुवीर्य।[४] शुण्ठी आदि तीक्ष्णवीर्य, बिल्व, अग्निमन्थ आदि मध्यवीर्य, तथा आमलक आदि मृदुवीर्य द्रव्य हैं।

---

१. यवागूसाधनद्रव्यं तावद् द्विविधं– वीर्यप्रधानमौषधद्रव्यं, तथा रसप्रधानमाहारद्रव्यञ्च। (च० सू० २.१७-चक्र०)

२. तं तं युक्तिविशेषमर्थं चाभिसमीक्ष्य स्ववीर्यगुणयुक्तानि द्रव्याणि कार्मुकाणि भवन्ति। (सु० सू० ४१.५)

३. प्राणिनां पुनर्मूलमाहारो बलवर्णौजसां च। स षट्सु रसेष्वायत्त:। (सु० सू० १.२८; ४६.३)

४. तत्राप्यौषधद्रव्यं त्रिविधं, वीर्यभेदात्– तीक्ष्णवीर्यं यथा शुण्ठ्यादि, मध्यवीर्यं बिल्वाग्निमन्थादि, मृदुवीर्यञ्चामलकादि। (च० सू० २.१७-चक्र०)

Scanned by CamScanner

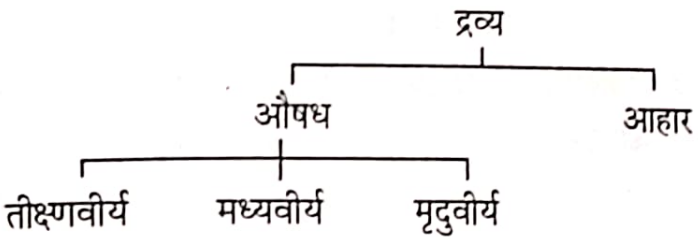

इस तारतम्य-ज्ञान का प्रयोजन यह है कि इसी के अनुसार द्रव्यों की मात्रा निर्धारित होती है। नियमत: तीक्ष्ण द्रव्य की एक कर्ष, मध्य की अर्धपल तथा मृदुवीर्य की एक-एक पल मात्रा बतलाई गई है। आहारद्रव्य सामान्यत: चार पल लिये जाते हैं।[१]

(छ) **अङ्गभेद से**– औषध दो प्रकार की है– द्रव्यभूत (मूर्त) और अद्रव्यभूत (अमूर्त)।[२] 'द्रव्य' से दोनों का ग्रहण होता है।

(ज) **रसभेद से**– रसभेद से द्रव्यों के छ: वर्ग किये गये हैं– मधुरस्कन्ध, अम्लस्कन्ध, लवणस्कन्ध, कटुकस्कन्ध, तिक्तस्कन्ध तथा कषायस्कन्ध। सुश्रुत ने 'स्कन्ध' को 'वर्ग' कहा है।

१. मधुरस्कन्ध

काकोली, क्षीरकाकोली, जीवक, ऋषभक, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, मेदा, महामेदा, गुडूची, कर्कटशृङ्गी, ऋद्धि, वृद्धि, जीवन्ती, मधुक, क्षीर, घृत, वसा, मज्जा, शालि, षष्टिक, यव, गोधूम, माष, शृङ्गाटक, कशेरुक, त्रपुष, एर्वारुक, कर्कारुक, अलाबू, कालिन्द, कतक, पियाल, पुष्करबीज, काश्मर्य, मधूक, द्राक्षा, खर्जूर, राजादन, ताल, नारिकेल, इक्षुविकार, कपिकच्छू, विदारी, क्षीरविदारी, गोक्षुर, क्षीरमोरट, मधूलिका, कूष्माण्ड, शतावरी, भूम्यामलकी, शालपर्णी, पृश्निपर्णी, शतपुष्पा, मुण्डी, महामुण्डी, बलाचतुष्टय, अश्वगन्धा, पुनर्नवा, कण्टकारी, बृहती, एरण्ड, परूषक, दर्भ, कुश, काश, शर, इत्कट, गुन्द्र, राजक्षवक, वनकार्पास, हंसपदी, काकनासा, उच्चटा, सूक्ष्मैला, सारिवा, सोमलता आदि।[३]

---

१. तीक्ष्णानां कर्ष:, मध्यानामर्धपलं, मृदूनां पलमित्युत्सर्ग:।...अत्र चतुष्पलद्रव्याभिधानं रसप्रधानद्रव्याभिप्रायेणैव। (च० सू० २.१७-चक्र०)

२. एतच्चैव भेषजमङ्गभेदादपि द्विविधं– द्रव्यभूतम्, अद्रव्यभूतं च। (च० वि० ८.८७)
सर्वं द्रव्यमिहाख्यातं पञ्चभूतविनिर्मितम्। अद्रव्यं तद्विपर्यस्तमन्तर्भूतं तदात्मनि।। (स्व०)

३. काकोल्यादि: क्षीरघृतवसामज्जशालिषष्टिकयवगोधूममाषशृङ्गाटककशेरुकत्रपुषैर्वारु-कर्कारुकालाबूकालिंदकतकगिलोड्यप्रियालपुष्करबीजकाश्मर्यमधूकद्राक्षाखर्जूरराजादनताल-नालिकेरेक्षुविकारबलातिबलात्मगुप्ताविदारीपयस्यागोक्षुरकक्षीरमोरटमधूलिकाकूष्माण्ड-प्रभृतीनि समासेन मधुरो वर्ग:। (सु० सू० ४२.११)

क्रमश:...

Scanned by CamScanner

२. अम्लस्कन्ध

दाडिम, आमलक, मातुलुङ्ग, आम्रातक, कपित्थ, करमर्द, बदर, कोल, प्राचीनामलक, तिन्तिडीक, कोशाम्र, भव्य, पारावत, वेत्रफल, लकुच, अम्लवेतस, दन्तशठ (जम्बीर), दधि, तक्र, सुरा, शुक्त, सौवीरक, तुषोदक, धान्याम्ल, आम्र, वृक्षाम्ल, धन्वन, अश्मन्तक, चाङ्गेरी आदि।[१]

३. लवणस्कन्ध

सैन्धव, सौवर्चल, काल, विड, सामुद्र, औद्भिद, यवक्षार, सुवर्चिका आदि।[२]

४. कटुकस्कन्ध

पिप्पली, पिप्पलीमूल, गजपिप्पली, चव्य, चित्रक, शुण्ठी, मरिच, अजमोदा, आर्द्रक, विडङ्ग, धनिया, पीलु, तेजबल, एला, कुष्ठ, भल्लातक, हिङ्गु, देवदारु, मूलक, सर्षप, लशुन, करञ्ज, शिग्रु, मधुशिग्रु, गन्धतृण, तुलसी, क्षार,

---

तद्यथा–जीवकर्षभकौ जीवन्ती वीरा तामलकी काकोली क्षीरकाकोली मुद्गपर्णी माषपर्णी शालपर्णी पृश्निपर्ण्यसनपर्णी मधुपर्णी मेदा महामेदा कर्कटशृङ्गी शृङ्गाटिका छिन्नरुहा च्छत्राऽतिच्छत्रा श्रावणी महाश्रावणी सहदेवा विश्वदेवा शुक्ला क्षीरशुक्ला बलाऽतिबला विदारी क्षीरविदारी क्षुद्रसहा महासहार्ष्यगन्धाश्वगन्धा वृश्चीरः पुनर्नवा बृहती कण्टकारिकोरुबूको मोरटः श्वदंष्ट्रा संहर्षा शतावरी शतपुष्पा मधूकपुष्पी यष्टीमधु मधूलिका मृद्वीका खर्जूरं परूषकमात्मगुप्ता पुष्करबीजं कशेरुकं राजकशेरुकं राजादनं कतकं काश्मर्यं शीतपाक्योदनपाकी तालखर्जूरमस्तकमिक्षुरिक्षुबालिका दर्भः कुशः काशः शालिर्गुन्द्रेत्कटकः शरमूलं राजक्षवः ऋष्यप्रोक्ता द्वारदा भारद्वाजी वनत्रपुष्यभीरुपत्री हंसपादी काकनासिका कुलिङ्गाक्षी क्षीरवल्ली कपोलवल्ली कपोतवल्ली सोमवल्ली गोपवल्ली मधुवल्ली चेति.....मधुरस्कन्धः। (च० वि० ८.१३९)

१. दाडिमामलकमातुलुङ्गाम्रातककपित्थकरमर्दबदरकोलप्राचीनामलकतिन्तिडीककोशाम्रक-भव्यपारावतवेत्रफललकुचाम्लवेतसदन्तशठदधितक्रसुराशुक्तसौवीरकतुषोदकधान्याम्ल-प्रभृतीनि समासेनाम्लो वर्गः। (सु० सू० ४२.११)
आम्राम्रातकलकुचकरमर्दवृक्षाम्लाम्लवेतसकुवलबदरदाडिममातुलुङ्गगण्डीरामलकनन्दी-तकशीतकतिन्तिडीकदन्तशठैरावतककोशाम्रधन्वनानां फलानि, पत्राणि चाम्रातकाश्मन्तक-चाङ्गेरीणां चतुर्विधानां चाम्लिकानां द्वयोश्च कोलयोश्चामशुष्कयोर्द्वयोश्चैव शुष्काम्लिकयो-र्ग्राम्यारण्ययोः, आसवद्रव्याणि च सुरासौवीरकतुषोदकमैरेयमेदकमदिरामधुशुक्तशीधुदधि-दधिमण्डोदश्विद्धान्याम्लादीनि च ....इत्यम्लस्कन्धः। (च० वि० ८.१४०)

२. सैन्धवसौवर्चलकालविडपाक्यानूपकूप्यवालुकैलमौलकसामुद्ररोमकौद्भिददौषरपाटेयकपांशु-जान्येवंप्रकाराणि चान्यानि....इति लवणस्कन्धः। (च० वि० ८.१४१)
सैन्धवसौवर्चलविडपाक्यरोमकसामुद्रकपक्त्रिमयवक्षारोषरप्रसूतसुवर्चिकाप्रभृतीनि समासेन लवणो वर्गः। (सु० सू० ४२.११)

Scanned by CamScanner

मूत्र, पित्त, कर्पूर, बाकुची, चोरपुष्पी, गुग्गुलु, मुस्तक, लाङ्गली आदि तथा सुश्रुतोक्त पिप्पल्यादि, सुरसादि तथा सालसारादि गण के अधिकांश द्रव्य।[१]

५. तिक्तस्कन्ध

चन्दन, जटामांसी, आरग्वध, नक्तमाल, निम्ब, तुम्बुरु, कुटज, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, मुस्त, मूर्वा, किराततिक्तक, कटुरोहिणी, त्रायमाणा, कारवेल्लिका, करवीर, केबुक, पुनर्नवा, वासा, मण्डूकपर्णी, कर्कोटक, वार्त्ताक, काकमाची, काकोदुम्बर, अतिविषा, पटोल, पाठा, गुडूची, वेत्राग्र, वेतस, विकङ्कत, बकुल, कट्फल, सप्तपर्ण, जाती, अर्क, बाकुची, वचा, तगर, अगुरु, बालक, उशीर, करीर, इन्द्रयव, वरुण, बृहतीद्वय, यवतिक्ता, द्रवन्ती, त्रिवृत्, कृतवेधन, शङ्खपुष्पी, अपामार्ग, अरणी, वृश्चिकाली, ज्योतिष्मती आदि तथा सुश्रुतोक्त आरग्वधादि और गुडूच्यादि गण।[२]

६. कषायस्कन्ध

प्रियङ्गु, आम्रास्थि, पाठा, अरलु, लोध्र, मोचरस, लज्जालु, धातकीपुष्प, कमलकेशर, जम्बू, आम्र, प्लक्ष, वट, अश्वत्थ, पारीष, उदुम्बर, भल्लातक, अश्मन्तक, शिरीष, शिंशपा, श्वेतखदिर, तिन्दुक, प्रियाल, बदर, खदिर, सप्तपर्ण, अश्वकर्ण, तिनिश, अर्जुन, असन, अरिमेद, एलवालुक, कैवर्त्तमुस्तक, कदम्ब, शल्लकी, जिंगिणी, काश, कशेरु, राजकशेरुक, कट्फल, वंश, पद्मक, अशोक,

---

१. पिप्पलीपिप्पलीमूलहस्तिपिप्पलीचव्यचित्रकशृङ्गवेरमरिचाजमोदार्द्रकविडङ्गकुस्तुम्बुरुपीलुतेजोवत्येलाकुष्ठभल्लातकास्थिहिङ्गुनिर्यासकिलिममूलकसर्षपलशुनकरञ्जशिग्रुकमधुशिग्रुकखरपुष्पभूस्तृणसुमुखसुरसकुठेरकार्जकगण्डीरकालमालकपर्णासक्षवकफणिज्झकक्षारमूत्रपित्तानि... इति कटुकस्कन्धः। (च० वि० ८.१४२)
पिप्पल्यादिः, सुरसादिः शिग्रुमधुशिग्रुमूलकलशुनसुमुखशीतशिवकुष्ठदेवदारुहरेणुकावल्गुजफलचण्डागग्गुलुमुस्तलाङ्गलकीशुकनासापीलुप्रभृतीनि सालसारादिश्च प्रायशः कटुको वर्गः। (सु० सू० ४२.११)

२. चन्दननलदकृतमालनक्तमालनिम्बतुम्बुरुकुटजहरिद्रादारुहरिद्रामुस्तमूर्वाकिराततिक्तकटुरोहिणीत्रायमाणाकारवेल्लिकाकरीरकरवीरकेबुककठिल्लकवृषमण्डूकपर्णीकर्कोटकवार्ताकुकर्कशकाकमाचीकाकोदुम्बरिकासुषव्यतिविषापटोलकुलकपाठागुडूचीवेत्राग्रवेतसविकङ्कतबकुलसोमवल्कसप्तपर्णसुमनार्कावल्गुजवचातगरागुरुबालकोशीराणि.....इति तिक्तस्कन्धः। (च० वि० ८.१४३)
आरग्वधादिर्गुडूच्यादिर्मण्डूकपर्णीवेत्रकरीरहरिद्राद्वयेन्द्रयववरुणस्वादुकण्टकसप्तपर्णबृहतीद्वयशङ्खिनीद्रवन्तीत्रिवृत्कृतवेधनकर्कोटककारवेल्लवार्ताककरीरकरवीरसुमनःशङ्खपुष्यपामार्गत्रायमाणाशोकरोहिणीवैजयन्तीसुवर्चलापुनर्नवावृश्चिकालीज्योतिष्मतीप्रभृतीनि समासेन तिक्तो वर्गः। (सु० सू० ४२.११)

Scanned by CamScanner

शाल, धव, सर्ज, भूर्ज, शणपुष्पी, शमी, माचिका, पुन्नाग, अजकर्ण, बिभीतक, कुम्भीक, कमलबीज, कमलमूल, मृणाल, ताल, खर्जूर, बकुल, कतक, शाकफल, पाषाणभेद, उदुम्बर आदि के फल, कुरबक, कोविदार, जीवन्ती, पालक, सुनिषण्णक आदि तथा सुश्रुतोक्त न्यग्रोधादि, अम्बष्ठादि, प्रियंग्वादि, रोध्रादि, त्रिफला एवं सालसारादि गण के अधिकांश द्रव्य।[१]

वाग्भट ने रस-स्कन्धों में पार्थिव द्रव्यों का भी समावेश किया है यथा स्वर्ण का मधुर में, रजत का अम्ल में, नाग का लवण में, कांस्य और लौह का तिक्त में और मुक्ता, प्रवाल, अञ्जन और गैरिक का कषाय में। (अ० ह० सू० १०.२२-३२)।

(झ) **वीर्यभेद से**– अष्टविध वीर्यवादियों के मत में आठ (गुरु, लघु, शीत, उष्ण, स्निग्ध, रूक्ष, मृदु, तीक्ष्ण) वीर्य होते हैं। द्विविधवीर्यवादी शीत और उष्ण दो प्रकार के मानते हैं। तदनुसार द्रव्य भी दो प्रकार के होते हैं– शीतवीर्य और उष्णवीर्य। व्यवहार में यही मत अधिक प्रचलित है।

१. शीतवीर्य द्रव्य (चन्दनादि)

चन्दन, पद्मक, उशीर, सारिवा, प्रपौण्डरीक, नागकेशर, पद्म, उत्पल, शैवाल, कशेरुक, धन्वयास, कुश, काश, इक्षु, दर्भ, शर, शालिमूल, जम्बू, वेतस, ककुभ, असन, अश्वकर्ण, तिनिश, शाल, ताल, धव, खदिर, कदर, कदम्ब, काश्मर्यफल, सर्ज, प्लक्ष, कपीतन, उदुम्बर, अश्वत्थ, न्यग्रोध, धातकी, दूर्वा, इत्कट, शृङ्गाटक, पुष्करबीज, कोविदार, कदली, कुम्भिका, शतावरी, बला, विदारी, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, मोचरस, वासा, बकुल, कुटज, पटोल, निम्ब, शाल्मली, नारिकेल, खजूर, मृद्वीका, प्रियाल, प्रियङ्गु, धन्वन, आत्मगुप्ता, मधूक,

---

१. प्रियङ्ग्वनन्ताम्रास्थ्यम्बष्ठकीकट्वङ्गलोध्रमोचरससमङ्गाधातकीपुष्पपद्मापद्मकेशर-जम्ब्वाम्रप्लक्षवटपीतनोदुम्बराश्वत्थभल्लातकस्थ्यश्मन्तकशिरीषशिंशपासोमवल्कतिन्दुक-प्रियालबदरखदिरसप्तपर्णार्श्वकर्णस्यन्दनार्जुनारिमेदैलवालुकपरिपेलवकदम्बशल्लकीजिङ्गिनी-काशकशेरुकरराजकशेरुककट्फलवंशपद्मकाशोकशालधवसर्जभूर्जशणखरपुष्पापुरशमीमाचीकवर-कतुङ्गाजकर्णार्श्वकर्णस्फूर्जकबिभीतककुम्भीकपुष्करबीजबिसमृणालतालखर्जूरतरुणानि इति....। कषायस्कन्धः। (च० वि० ८.१४४)

न्यग्रोधादिरम्बष्ठादिः प्रियङ्ग्वादी रोध्रादिस्त्रिफलाशल्लकीजम्ब्वाम्रबकुलतिन्दुकफलानि कतकशाकफलपाषाणभेदकवनस्पतिफलानि सालसारादिश्च प्रायशः कुरुवककोविदार-जीवन्तीचिल्लीपालङ्क्यासुनिषण्णकप्रभृतीनि वरकादयो मुद्गादयश्च समासेन कषायो वर्गः। (सु० सू० ४२.११)

Scanned by CamScanner

आदि द्रव्य।[१] यह चन्दनादि गण कहलाता है। च० चि० ४.१०२-१०५ में रक्तपित्त की चिकित्सा में भद्रश्रियादि गण का निर्देश है। इसमें भी यही शीतवीर्य द्रव्य हैं।

२. उष्णवीर्य द्रव्य (अगुर्वादि)

अगुरु, कुष्ठ, तगर, पत्र, नलद, शैलेय, स्थौणेयक, एला, त्वक्, गुग्गुलु, रोहिष, सरल, शल्लकी, देवदारु, अग्निमन्थ, बिल्व, श्योनाक, काश्मर्य, पाटला, पुनर्नवा, कण्टकारी, बृहती, शालपर्णी, पृश्निपर्णी, माषपर्णी, मुद्गपर्णी, गोक्षुर, एरण्ड, शोभाञ्जन, वरुण, अर्क, चिरबिल्व, तिल्वक, शटी, पुष्करमूल, अश्मन्तक, मातुलुङ्ग, मूलक, पीलुपर्णी, तिलपर्णी, मूर्वा, हिंस्रा, दन्तशठ, भल्लातक, काण्डीर, काकाण्ड, करञ्ज, धान्यक, अजमोदा, पृथ्वीका, तुलसी, आर्द्रक, पिप्पली, सर्षप, अश्वगन्धा, रास्ना, वचा, बला, अतिबला, गुडूची, शतपुष्पा, नाकुली, गन्धनाकुली, ज्योतिष्मती, चित्रक, तिल, कुलत्थ, माष आदि।[२] यह अगुर्वादि गण कहा जाता है। इसमें कुष्ठ और तगर तीक्ष्ण होने के कारण अनेक स्थलों में इन्हें हटा कर प्रयोग करने का विधान है। इन दोनों के हटाने पर 'अगुरुपत्रादि गण' बनता है जिसका उल्लेख चरक ने धूमपान-प्रकरण में किया है 'गन्धाश्चागुरुपत्राद्याः' (च० सू० ५.२७)।

---

१. चन्दनभद्रश्रीकालानुसार्यकालीयकपद्मापद्मकोशीरसारिवामधुकप्रपौण्डरीकनागपुष्पोदीच्य-वन्यपद्मोत्पलनलिनकुमुदसौगन्धिकपुण्डरीकशतपत्रबिसमृणालशालूकशैवालकशेरुका-नन्ताकुशकाशेक्षुदर्भशरनलशालिमूलजम्बुवेतसवानीरगुन्द्राककुभासनाश्वकर्णस्यन्दन-वातपोथशालतालधवतिनिशखदिरकदरकदम्बकाश्मर्यफलसर्जप्लक्षकपीतनोदुम्ब-राश्वत्थन्यग्रोधधातकीदूर्वेत्कटशृङ्गाटकमञ्जिष्ठाज्योतिष्मतीपुष्करबीजक्रौञ्चादनबदरी-कोविदारकदलीसंवर्तकारिष्टशतपर्वाश्वेतकुम्भिकाशतावरीश्रीपर्णीश्रावणीमहाश्रावणीरोहिणी-शीतपाक्योदनपाकीकालाबलापयस्याविदारीजीवकर्षभकमेदामहामेदामधुरसर्ष्यप्रोक्ता-तृणशून्यमोचरसाटरूषकबकुलकुटजपटोलनिम्बशाल्मलीनारिकेलखर्जूरमृद्वीकाप्रियाल-प्रियङ्गुधन्वनात्मगुप्तामधूकानामन्येषां च शीतवीर्याणां यथालाभमौषधानां कषायं कारयेत्।
(च० चि० ३.२५८)

२. अगुरुकुष्ठतगरपत्रनलदशैलेयध्यामकहरेणुकास्थौणेयकक्षेमकैलावराङ्गदलपुरतमालपत्र-भूतीकरोहिषसरलशल्लकीदेवदार्वग्निमन्थबिल्वश्योनाककाश्मर्यपाटलापुनर्नवावृश्चीरकण्टका-रीबृहतीशालपर्णीपृश्निपर्णीमाषपर्णीमुद्गपर्णीगोक्षुरकैरण्डशोभाञ्जनकवरुणार्कचिरबिल्व-तिल्वकशटीपुष्करमूलगण्डीरोरुबूकपत्तूराक्षीवाश्मन्तकशिग्रुमातुलुङ्गपीलुकमूलकपर्णीतिलपर्णी-पीलुपर्णीमेषशृङ्गीहिंस्रादन्तशठैरावतकभल्लातकास्फोतकाण्डीरात्मगुप्ताकाकाण्डैकेषीका-करञ्जधान्यकाजमोदपृथ्वीकासुमुखसुरसकुठेरककालमालकपर्णासक्षवककफणिञ्झकभूस्तृणशृङ्ग-वेरपिप्पलीसर्षपाश्वगन्धारास्नारुहावरोहावचाबलातिबलागुडूचीशतपुष्पाशीतवल्लीनाकुलीगन्ध-नाकुलीश्वेताज्योतिष्मतीचित्रकाध्यण्डाम्लचाङ्गेरीतिलबदरकुलत्थमाषाणामेवंविधानामन्येषां चोष्णवीर्याणां यथालाभमौषधानां कषायं कारयेत्। (च० चि० ३.२६७)

Scanned by CamScanner

(ट) **दोषकर्मभेद से**– द्रव्य तीन प्रकार के होते हैं– शमन, कोपन और स्वस्थहित।[१] शमन द्रव्य उसे कहते है जो कुपित दोषों को शान्त करे। कोपन द्रव्य उसे कहते हैं जो दोषों को कुपित करे। स्वस्थहित द्रव्य वह है जो दोषों को समावस्था में बनाये रक्खे। ये द्रव्य तीनों दोषों पर प्रभाव डालते हैं और उन्हें प्रतिकूल नहीं होने देते। शमन और कोपन ये दोनों पुनः दोष के अनुसार तीन-तीन भागों में विभक्त हो जाते हैं यथा वातसंशमन, पित्तसंशमन और कफसंशमन; वातकोपन, पित्तकोपन और कफकोपन।

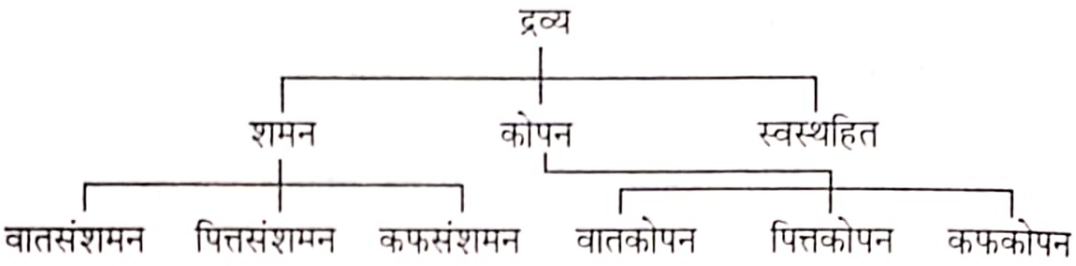

१. वातसंशमन

देवदारु, कुष्ठ, हरिद्रा, वरुण, मेषशृङ्गी, बला, अतिबला, आर्त्तगल, शल्लकी, वीरतरु, सहचर, अग्निमन्थ, गुडूची, एरण्ड, पाषाणभेद, अर्क, अलर्क, शतावरी, पुनर्नवा, भार्ङ्गी, कार्पासी, वृश्चिकाली, बदर, यव, कोल, कुलत्थ आदि तथा विदारिगन्धादि और दशमूल गण।[२] सामायन्तः स्निग्ध, गुरु, स्थूल, स्थिर, पिच्छिल और श्लक्ष्ण गुणवाले[३]; मधुर, अम्ल, लवणरसयुक्त;[४] मधुरविपाक[५] तथा उष्णवीर्य द्रव्य[६] वातसंशमन होते हैं।

---

१. शमनं कोपनं स्वस्थहितं द्रव्यमिति त्रिधा। (अ० हृ० सू० १.१६)
किंचिद्दोषप्रशमनं किंचिद्धातुप्रदूषणम्। स्वस्थवृत्तौ मतं किंचित्त्रिविधं द्रव्यमुच्यते।
(च० सू० १.६७)

२. तत्र भद्रदारुकुष्ठहरिद्रावरुणमेषशृङ्गीबलातिबलार्तगलकच्छुराशल्लकीकुबेराक्षीवीरतरुसहचराग्निमन्थवत्सादन्येरण्डाश्मभेदकालर्कार्कशतावरीपुनर्नवावासुकवशिरकाञ्चनकभार्गी-कार्पासीवृश्चिकालीपत्तूरबदरयवकोलकुलत्थप्रभृतीनि विदारिगन्धादिश्च द्वे चाद्ये पञ्चमूल्यौ समासेन वातसंशमनो वर्गः। (सु० सू० ३९.७)

३. रूक्षः शीतो लघुः सूक्ष्मश्चलोऽथ विशदः खरः। विपरीतगुणैर्द्रव्यैर्मारुतः संप्रशाम्यति।।
(च० सू० १.५९)

४. तत्र, मधुराम्ललवणा वातघ्नाः। (सु० सू० ४२.४)

५. गुरुपाको वातपित्तघ्नः। (सु० सू० ४१.११)

६. तत्र, उष्णस्निग्धौ वातघ्नौ। (सु० सू० ४१.११)

Scanned by CamScanner

२. पित्तसंशमन

चन्दन, रक्तचन्दन, ह्रीबेर, उशीर, मञ्जिष्ठा, क्षीरविदारी, विदारी, शतावरी, गुन्द्रा, शैवाल, कह्लार, कुमुद, उत्पल, कन्दली, दूर्वा, मूर्वा आदि तथा काकोल्यादि, सारिवादि, अञ्जनादि, उत्पलादि, न्यग्रोधादि और तृणपञ्चमूल गण।[1] सामान्यतः रूक्ष, मृदु, सान्द्र, स्थिर गुणों से युक्त;[2] कषाय, मधुर और तिक्तरसयुक्त;[3] मधुरविपाक[4] तथा शीतवीर्य[5] द्रव्य पितसंशमन होते हैं।

३. कफसंशमन

कालेयक, अगुरु, तिलपर्णी, कुष्ठ, हरिद्रा, कर्पूर, शतपुष्पा, सरल, रास्ना, करञ्जद्वय, इङ्गुदी, जाती, काकादनी, लाङ्गली, हस्तिकर्ण आदि तथा कण्टकपञ्चमूल, पिप्पल्यादि, बृहत्यादि, मुष्ककादि, वचादि, सुरसादि और आरग्वधादि गण।[6] सामान्यतः लघु, तीक्ष्ण, रूक्ष, सर, विशदगुणयुक्त[7]; कटु, तिक्त, कषायरसयुक्त[8]; कटुविपाक;[9] उष्णवीर्य द्रव्य कफसंशमन होते हैं।

४. वातकोपन / धातुप्रदूषण (चरक)

शुष्कशाक, शुष्कमांस, वरक, उद्दालक, कोरदूष, श्यामाक, नीवार, मुद्ग, मसूर, आढकी, चणक, कलाय, निष्पाव, विरूढक, तृणधान्य, करीर, तुम्ब,

---

१. चन्दनकुचन्दनह्रीबेरोशीरमञ्जिष्ठापयस्याविदारीशतावरीगुन्द्राशैवलकह्लारकुमुदोत्पलकन्द(द)लीदूर्वामूर्वाप्रभृतीनि काकोल्यादिः सारिवादिरञ्जनादिरुत्पलादिर्न्यग्रोधादिस्तृणपञ्चमूलमिति समासेन पित्तसंशमनो वर्गः। (सु० सू० ३९.८)

२. सस्नेहमुष्णं तीक्ष्णं च द्रवमम्लं सरं कटु। विपरीतगुणैः पित्तं द्रव्यैराशु प्रशाम्यति।। (च० सू० १.६०)

३. मधुरतिक्तकषायाः पित्तघ्नाः। (सु० सू० ४२.४)

४. गुरुपाको वातपित्तघ्नः। (सु० सू० ४१.११)

५. शीतमृदुपिच्छिलाः पित्तघ्नाः। (सु० सू० ४१.११)

६. कालेयकागुरुतिलपर्णीकुष्ठहरिद्राशीतशिवशतपुष्पासरलरास्नाप्रकीर्योदकीर्येङ्गुदीसुमनाकाकादनीलाङ्गलकीहस्तिकर्णमुञ्जातकलामज्जकप्रभृतीनि वल्लीकण्टकपञ्चमूल्यौ पिप्पल्यादिर्बृहत्यादिर्मुष्ककादिर्वचादिः सुरसादिरारग्वधादिरिति समासेन श्लेष्मसंशमनो वर्गः। (सु० सू० ३९.९)

७. गुरुशीतमृदुस्निग्धमधुरस्थिरपिच्छिलाः। श्लेष्मणः प्रशमं यान्ति विपरीतगुणैर्गुणाः। (च० सू० १.६१)

८. कटुतिक्तकषायाः श्लेष्मघ्नाः। (सु० सू० ४२.४)

९. लघुपाकः श्लेष्मघ्नः। (सु० सू० ४१.११)

Scanned by CamScanner

कालिङ्गक, चिर्भट, बिस, शालूक, जाम्बव, तिन्दुक आदि।[१] सामान्यतः रूक्ष, लघु, सूक्ष्म, चल, विशद, खरगुणयुक्त; कटुतिक्तकषायरस; कटुविपाक; शीतवीर्य तथा विष्टम्भी द्रव्य वातकोपन होते हैं।

५. पित्तकोपन

तिलतैल, पिण्याक, कुलत्थ, सर्षप, अतसी, हरितकशाक, गोधामांस, मत्स्यमांस, आजमांस, आविकमांस, दधि, तक्र, कूर्चिका, मस्तु, सुरा, सौवीरक, अम्लफल, क्षार, शुक्त, शाण्डाकी, मूत्र, काञ्जी, माष, निष्पाव, पीलु, भल्लातकास्थि, लाङ्गली, मरिच आदि तथा कुठेरकादि वर्ग। सामान्यतः स्निग्ध, तीक्ष्ण, द्रव, सर गुणयुक्त; कटु-अम्ल-लवणरस; कटु-अम्ल विपाक; उष्णवीर्य तथा विदाही द्रव्य पित्तकोपन होते हैं।[२]

६. कफकोपन

यवक, इत्कट, माष, महामाष, गोधूम, तिलविकार, पिष्टविकार, दधि, दुग्ध, कृशरा, पायस, इक्षुविकार, आनूपमांस, औदकमांस, वसा, बिस, मृणाल, कसेरुक, शृङ्गाटक, मधुरफल, वल्लीफल, नवान्न, पृथुक, लड्डू आदि स्थूल भक्ष्य, शष्कुली, कच्चा दूध, किलाट (छेना), मोरट, कूर्चिका, तक्रपिण्डक, पीयूष, कदलीफल, खजूर, भव्य, नारिकेल आदि। सामान्यतः गुरु, मृदु, स्निग्ध, स्थिर, पिच्छिलगुणयुक्त; मधुर, अम्ल-लवणरस; मधुरविपाक; शीतवीर्य तथा अभिष्यन्दी द्रव्य कफकोपन होते हैं।[३]

---

१. तत्र... कटुकषायतिक्तरूक्षलघुशीतवीर्यशुष्कशाकवल्लूरवरकोद्दालककोरदूषश्यामाकनीवार-मुद्गमसूराढकीहरेणुकलायनिष्पाव...वेगविघातादिभिर्विशेषैर्वायुः प्रकोपमापद्यते। (सु० सू० २१.१९)
अथ तिक्तकटुकषायरूक्षलघुशीतविष्टम्भिविरूढकतृणधान्यकलायचणककरीरतुम्बकालिङ्ग-चिर्भिटबिसशालूकजाम्बवतिन्दुक.....शोकोत्कण्ठादिभिरतिसेवितैः....वायुः प्रकोपमापद्यते। (अ० सं० नि० १.१३)

२. ...कट्वम्ललवणतीक्ष्णोष्णलघुविदाहितिलतैलपिण्याककुलत्थसर्षपातसीहरितकशाक-गोधामत्स्याजाविकमांसदधितक्रकूर्चिकामस्तुसौवीरकसुराविकाराम्लफलकट्वरप्रभृतिभिः पित्तं प्रकोपमापद्यते। (सु० सू० २१.२१)
कट्वम्ललवणक्षारोष्णतीक्ष्णविदाहिशुक्तशाण्डाकीमद्यमूत्रमस्तुदधिधान्याम्लतैलकुलत्थमाष-निष्पावतिलान्नकट्वरकुठेरकादिवर्गाम्राम्रातकाम्लीकापीलुभल्लातकास्थिलाङ्गलिकामरिच.... मैथुनोपगमनादिभिः पित्तं (प्रकोपमापद्यते)। (अ० सं० नि० १.१४)

३. ...मधुराम्ललवणशीतस्निग्धगुरुपिच्छिलाभिष्यन्दिहायनकयवकनैषधेत्कटमाषमहा-माषगोधूमतिलपिष्टविकृतिदधिदुग्धकृशरापायसेक्षुविकारानूपौदकमांसवसाबिसमृणालकसेरु-कशृङ्गाटकमधुरवल्लीफल...प्रभृतिभिः श्लेष्मा प्रकोपमापद्यते। (सु० सू० २१.२३)
मधुराम्ललवणस्निग्धगुरुपिच्छिलाभिष्यन्दिनवान्नपिष्टपृथुकस्थूलभक्ष्यशष्कुल्यामक्षीर-किलाटमोरटकूर्चिकातक्रपिण्डकपीयूषेक्षुरसफाणितगुडानूपपिशितमोचखर्जूरभव्यनारिकेल... विरेचनाद्ययोगादिभिः...श्लेष्मा (प्रकोपमापद्यते)। (अ० सं० नि० १.१५)

Scanned by CamScanner

७. स्वस्थहित

रक्तशालि, मुद्ग, आन्तरीक्ष जल, सैन्धव, जीवन्तीशाक, ऐणमृगमांस, लावपक्षिमांस, गोधामांस, रोहितमत्स्य, गव्यघृत, गोदुग्ध, तिलतैल, वराहवसा, पाकहंसवसा, कुक्कुटवसा, अजमेद, शृङ्गवेर, मृद्वीका, शर्करा, दाडिम, आमलक आदि।[१] इनके अतिरिक्त, रसायन और वाजीकरण गण के द्रव्य भी स्वस्थहित हैं।

शमन द्रव्यों का प्रयोग चिकित्सा में होता है। कोपन द्रव्यों का निर्देश रोगों के निदान में है, उनके ज्ञान का महत्त्व चिकित्सा में निदानपरिवर्जन के रूप में है। स्वस्थहित द्रव्यों का उपयोग स्वास्थ्यरक्षण, धातुवृद्धि, दीर्घायुष्य तथा जराव्याधि प्रतिषेध के लिए किया जाता है।

(ठ) **सांस्थानिक कर्मभेद से**– द्रव्यों का शरीर के विभिन्न अङ्गों या संस्थानों पर जो कर्म होता है उसके अनुसार उनके अनेक वर्ग निर्धारित किये गये हैं। ये विभिन्न कर्म दो वर्गों में समाविष्ट किये गये हैं– संशोधन और संशमन। संशोधन कर्म शरीरस्थ मलों को बाहर निकालते हैं और संशमन कर्म शरीरस्थ कुपित दोषों को शान्त करते हैं। चरक और सुश्रुत ने कर्मों के अनुसार द्रव्यों के अनेक गण निर्धारित किये हैं। उनका वर्णन वहीं किया जायेगा। सांस्थानिक कर्मों के अनुसार द्रव्यों को नवीन शैली से व्यवस्थित किया जा सकता है। आकृति या कुल के अनुसार वानस्पतिक वर्गीकरण वनस्पति-परिचय के लिए उपयोगी है और चिकित्सकों के लिए कर्मानुसार वर्गीकरण व्यवहारतः अधिक उपादेय है।

*

---

१. लोहितशालयः शूकधान्यानां पथ्यतमत्वेन श्रेष्ठतमा भवन्ति, मुद्गाः शमीधान्यानाम्, आन्तरीक्षमुदकानां, सैन्धवं लवणानां, जीवन्तीशाकं शाकानाम्, ऐणेयं मृगमांसानां, लावः पक्षिणां, गोधा बिलेशयानां, रोहितो मत्स्यानां, गव्यं सर्पिः सर्पिषां, गोक्षीरं क्षीराणां, तिलतैलं स्थावरजातानां स्नेहानां, वराहवसा आनूपमृगवसानां, चुलुकीवसा मत्स्यवसानां, पाकहंसवसा जलचरविहङ्गवसानां, कुक्कुटवसा विष्किरशकुनिवसानाम्, अजमेदः शाखादमेदसां, शृङ्गवेरं कन्दानां, मृद्वीका फलानां, शर्करेक्षुविकाराणाम्, इति प्रकृत्यैव हिततमानामाहारविकाराणां प्राधान्यतो द्रव्याणि व्याख्यातानि भवन्ति। (च० सू० २५.३८)

तद्यथा– रक्तशालिषष्टिककङ्गुकमुकुन्दकपाण्डुकपीतकप्रमोदककालकासनपुष्पक-कर्दमकशकुनाहतसुगन्धककलमनीवारकोद्रवोद्दालकश्यामाकगोधूमयववैणववैणहरिण-कुरङ्गमृगमातृकाश्वदंष्ट्राकरालक्रकरकपोतलावतित्तिरिकपिञ्जलवर्तीरवर्तिकामुद्गवनमुद्ग-मकुष्ठकलायमसूरमङ्गल्यचणकहरेण्वाढकीसतीनाश्चिल्लिवास्तुकसुनिषण्णकजीवन्ती-तण्डुलीयकमण्डूकपर्ण्यः, गव्यं घृतं, सैन्धवं, दाडिमामलकमित्येष वर्गः सर्वप्राणिनां सामान्यतः पथ्यतमः। (सु० सू० २०.५)

Scanned by CamScanner

चतुर्थ अध्याय

द्रव्यों का रचनात्मक वर्गीकरण

(Morphological classification)

यह लिखा जा चुका है कि अति प्राचीन काल में महर्षियों ने वनस्पतियों का अध्ययन रचनानुसार कर लिया था क्योंकि वे उनके निरन्तर सान्निध्य में रहते थे। आगे चल कर निघण्टुकारों ने भी वनस्पति के विभिन्न अङ्गों की रचना पर प्रकाश डाला है। विशेषत: राजनिघण्टु का प्रयास इस दिशा में प्रशंसनीय कहा जा सकता है।

आधुनिक और प्राचीन रचनानुसार वर्गीकरण में अन्तर

आधुनिक वैज्ञानिकों ने विभिन्न वनस्पतियों का रचनामूलक वर्गीकरण उनके आकृतिगत साम्य विशेषत: लैङ्गिक अवयवों की समानता के आधार पर किया है इसलिए उसे कुलानुसार वर्गीकरण भी कहते हैं। किन्तु प्राचीन विद्वानों ने उनकी व्यावहारिक उपादेयता तथा लोक-प्रचलित उपयोग के आधार पर उनका वर्गीकरण किया। प्राचीन महर्षियों की मीमांसा का आधार लोकनिरीक्षण रहा है, अत: इस क्षेत्र में भी उन्होंने इसी आधार से काम लिया है। विभिन्न वनस्पतियों के जिन अङ्गों का उपयोग लोक में मुख्यत: होता है उन्हीं के आधार पर द्रव्यों के विभिन्न वर्ग बनाये हैं यथा जिन द्रव्यों के फल का विशेषत: उपयोग होता है उनका समावेश फलवर्ग में तथा जिनके पुष्पों का उपयोग विशेषत: होता है उनका समावेश पुष्पवर्ग में किया गया है। सर्वप्रथम आहार में उपयोगी द्रव्यों का ही इस प्रकार वर्गीकरण प्रारम्भ हुआ किन्तु क्रमश: औषधद्रव्यों के भी इस प्रकार वर्ग बनाये गये और अन्त में जाकर तो सभी द्रव्यों के वर्गीकरण का यही आधार रह गया। निघण्टुओं में गन्ध-द्रव्यों का पृथक् वर्ग बनाया गया।

चरकोक्त वर्ग

चरक ने इस प्रकार से आहारद्रव्यों का ही वर्गीकरण किया है[१] और समस्त द्रव्यों को बारह वर्गों में विभाजित किया है[२] जो निम्नाङ्कित हैं–

---

१. परमतो वर्गसंग्रहेणाहारद्रव्याण्यनुव्याख्यास्याम:। (च० सू० २७.५)

२. शूकधान्यशमीधान्यमांसशाकफलाश्रयान्। वर्गान् हरितमद्याम्बुगोरसेक्षुविकारिकान्।।
दश द्वौ चापरौ वर्गौ कृतान्नाहारयोगिनाम्। रसवीर्यविपाकैश्च प्रभावैश्च प्रचक्ष्महे।।
(च० सू० २७.६)

Scanned by CamScanner

१. शूकधान्य– शालि, यव गोधूम आदि।
२. शमीधान्य– मुद्ग, माष, कुलत्थ आदि।
३. मांस– योनिभेद से इसके आठ उपवर्ग किये गये हैं प्रसह, भूमिशय, आनूप आदि।[१]
४. शाक– वास्तुक, सूरण, पटोल आदि क्रमशः पत्र-कन्द-फलाश्रय शाक।
५. फल– मृद्वीका, परूषक, नारिकेल।
६. हरित– आर्द्रक, नींबू, मूलों आदि जिनका हरित अवस्था में प्रयोग होता है।
७. मद्य– अरिष्ट, आसव, सुरा आदि।
८. जल– दिव्य, भौम आदि।
९. गोरस– गव्य, माहिष आदि दुग्ध, दधि, घृत।
१०. इक्षु– इक्षुरस, गुड, शर्करा आदि।
११. कृतान्न– मण्ड, पेया, सक्तु आदि।
१२. आहारयोगी– तैल, लवण, हिङ्गु आदि।

इनमें शूकधान्य, शमीधान्य, शाक, फल, हरित, इक्षु– ये वर्ग विशिष्ट वानस्पतिक रचना एवं उपादेय अङ्गों के आधार पर निर्धारित किये गये हैं।

सुश्रुतोक्त वर्ग

सुश्रुत ने द्रव्यों को द्रव और अन्न इन दो महावर्गों में विभाजित किया है और दोनों का पृथक्-पृथक् अपनी संहिता के दो स्वतन्त्र अध्यायों (सूत्रस्थान ४५ और ४६ अ०) में विशद रूप में वर्णन किया है। इन दोनों महावर्गों में भी अनेक वर्ग बनाये गये हैं–

(क) द्रवद्रव्य

१. जलवर्ग	२. क्षीरवर्ग	३. दधिवर्ग	४. तक्रवर्ग	५. घृतवर्ग
६. तैलवर्ग	७. मधुवर्ग	८. इक्षुवर्ग	९. मद्यवर्ग	१०. मूत्रवर्ग

(ख) अन्नद्रव्य

१. शालिवर्ग, २. कुधान्य, ३. वैदल, ४. मांसवर्ग– इसके ६ उपवर्ग तथा अनेक अवान्तर वर्ग किये गये हैं।[२] ५. फलवर्ग, ६. शाकवर्ग, ७. पुष्पवर्ग,

---

१. प्रसह्य भक्षयन्तीति प्रसहास्तेन संज्ञिताः। भूशया बिलशायित्वादानूपाऽनूपसंश्रयात्।।
जले निवासाज्जलजा जलेचर्याज्जलेचराः। स्थलजा जाङ्गलाः प्रोक्ता मृगा जाङ्गलचारिणः।।
विकीर्य विष्किराश्चेति प्रतुद्य प्रतुदाः स्मृताः। योनिरष्टविधा त्वेषा मांसानां परिकीर्तिता।।
(च० सू० २७.५३-५५)

२. जलेशया, आनूपा, ग्राम्याः, क्रव्यभुज, एकशफा, जांगलाश्चेति षण्मांसवर्गाः। (सु० सू० ४६.५३)

Scanned by CamScanner

८. कन्दवर्ग, ९. लवणवर्ग, १०. क्षारवर्ग, ११. धातुवर्ग, १२. रत्नवर्ग, १३. कृतान्नवर्ग।

इनमें शालिवर्ग, कुधान्य, वैदल, फल, शाक, पुष्प, कन्द तथा इक्षु के वर्ग वनस्पतियों से सम्बद्ध हैं।

चरक और सुश्रुत का रचनात्मक वर्गीकरण- एक तुलनात्मक समीक्षा

चरक और सुश्रुत के रचनात्मक वर्गीकरण की तुलना करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि चरक की अपेक्षा सुश्रुत का वर्गीकरण अधिक विशद और विकसित है। चरक ने सामान्यत: आहारद्रव्यों के बारह वर्ग बनाये हैं, किन्तु आभ्यन्तर साम्य और वैषम्य के आधार पर उनका सूक्ष्म विभाजन नहीं किया; अपनी सूत्रशैली के अनुसार संक्षेप में ही उनका परिगणन किया है। सुश्रुत ने इस पर विशेष ध्यान दिया है और समस्त द्रव्यों को पहले उन्होंने द्रव और अन्न दो महावर्गों में विभाजित किया। द्रव में दस और अन्न में तेरह वर्ग समाविष्ट किये गये। चरक ने गोरसवर्ग में ही दुग्ध, दधि, घृत आदि का वर्णन संक्षेप में कर दिया है किन्तु सुश्रुत ने इसको अधिक पल्लवित कर इनका वर्णन क्षीरवर्ग, दधिवर्ग, तक्रवर्ग तथा घृतवर्ग- इन चार वर्गों में पृथक्-पृथक् विशद रूप से किया है। तैलवर्ग तथा मधुवर्ग सुश्रुत के नवीन हैं। अन्नद्रव्यों में भी पुष्पवर्ग, लवणवर्ग, क्षारवर्ग, धातुवर्ग, रत्नवर्ग इनका वर्णन चरक में पृथक् नहीं मिलता यद्यपि अन्य वर्गों तथा स्थलों में उनका सङ्केत उपलब्ध है। इसका एक कारण शैलीभेद तो है ही दूसरा कारण यह भी है कि चरक ने इस वर्गीकरण में केवल आहारद्रव्यों पर ही दृष्टि रक्खी है किन्तु सुश्रुत के काल तक अनेक औषधद्रव्यों का भी लोक में विशेष प्रचलन हो गया था, इसलिए उन्होंने अपने वर्गीकरण में अनेक नवीन औद्भिद, जाङ्गम तथा पार्थिव द्रव्यों का समावेश किया है और इसके लिए पृथक् वर्गों की कल्पना करनी पड़ी है। यथा मूत्रवर्ग औषध में ही प्रयुक्त होता है, आहार में नहीं, अत: चरक ने इसका पृथक् वर्ग में उल्लेख नहीं किया किन्तु सुश्रुत ने किया है। इसी प्रकार मांसवर्ग का भी विशदीकरण किया गया है। पार्थिव द्रव्यों के भी लवणवर्ग, क्षारवर्ग, धातुवर्ग एवं रत्नवर्ग ये नवीन और स्वतंत्र वर्ग बनाये गये हैं।

औद्भिद द्रव्यों का आधुनिक रचनात्मक वर्गीकरण

(Morphological classification)

(क) **उद्भवभेद से**- औद्भिद द्रव्य चार प्रकार के होते हैं- स्थलज (Terrestrial), जलज (Acquatic), वृक्षरुह (Epiphytic) तथा वृक्षादन (Parasitic)।

१. **स्थलज**- उन्हें कहते हैं जो स्थल में उत्पन्न होते हैं यथा हरीतकी, बिभीतक आदि।

Scanned by CamScanner

२. **जलज**– उन्हें कहते हैं जो जल में उत्पन्न होते हैं यथा कमल, जलकुम्भी आदि।

३. **वृक्षरुह**– जो द्रव्य वृक्ष पर चढ़े रहते हैं किन्तु अपने जीवन के लिए उस पर निर्भर नहीं होते उन्हें वृक्षरुह कहते हैं यथा जीवन्ती, गुडूची आदि।

४. **वृक्षादन**– उन्हें कहते हैं जो दूसरे वृक्षों का रस लेकर अपना पोषण करते हैं यथा वन्दाक।

(ख) **आयुभेद से**– द्रव्य तीन प्रकार के होते हैं– एकवर्षायु (Annuals), द्विवर्षायु (Biennials) तथा बहुवर्षायु (Perennials)। जो द्रव्य एक ऋतु या वर्ष तक जीवित रहते हैं, उन्हें एक वर्षायु कहते हैं यथा गेहूँ, यव आदि। जो द्रव्य दो ऋतुओं या वर्षों तक जीवित रहते हैं उन्हें द्विवर्षायु कहते हैं यथा शलगम, गाजर आदि। जो द्रव्य दो वर्षों से अधिक काल तक बने रहते हैं उन्हें बहुवर्षायु या चिरायु कहते हैं यथा नीम, वट आदि।

(ग) **आकृति-भेद से**– द्रव्यों की आकृति तथा प्रमाण के अनुसार चार मुख्य भेद होते हैं– वृक्ष, गुल्म, क्षुप तथा लता।

१. **वृक्ष** (Tree)– इनकी ऊँचाई ५ से ३५ मी० तक होती है। काण्ड दृढ़ और शाखायें ऊपर की ओर तथा दृढ़ होती हैं। इनके भी तीन उपवर्ग किये गये हैं–

(क) **महावृक्ष** (Tall tree)– इनकी ऊँचाई १६ मी० से अधिक होती है यथा देवदारु।

(ख) **वृक्ष** (Medium tree)– इनकी ऊँचाई १३-१६ मी० तक होती है यथा आम, जामुन आदि।

(ग) **वृक्षक** (Small tree)– इनकी ऊँचाई ५-६ मी० होती है यथा पपीता, कुटज आदि।

२. **गुल्म** (Shrub)– जिनमें एक ही मूल से अनेक काण्ड निकल कर झाड़ सा बन जाय उन्हें गुल्म कहते हैं यथा धातकी। छोटे गुल्मों को 'गुल्मक' (Under-shrub) कहते हैं यथा अर्क, दन्ती आदि।

३. **क्षुप** (Herb)– इनकी ऊँचाई ०.५-१ मी० से १.५-२ मी० तक होती है। इनका मूल छोटा और शाखायें कोमल होती हैं यथा चक्रमर्द आदि। ०.५-१ मी० से कम ऊँचाई वाले क्षुप को 'क्षुपक' (Under-herbs) कहते हैं।

४. **लता** (Weak Plants)– जो पौधे काण्ड दुर्बल होने के कारण स्वयं स्थिर नहीं रह सकते और कोई आधार लेकर आगे बढ़ते हैं उन्हें लता कहते हैं। यह पुन: चार प्रकार की होती हैं– प्रसर, वल्ली, आरोहिणी और प्रतानिनी।

Scanned by CamScanner

(क) **प्रसर** (Prostrate)– जिनमें काण्ड से शाखायें निकल कर भूमि पर थोड़ी दूर तक फैल जाती हैं उन्हें 'प्रसर' कहते हैं यथा कण्टकारी।

(ख) **वल्ली** (Twinning plants)– यह अपने आश्रयभूत वृक्ष आदि को चारों ओर से लपेटती हुई आगे बढ़ती है। इसके भी वामावर्तिनी और दक्षिणावर्तिनी दो भेद हैं। वामावर्तिनी बाईं ओर से यथा उत्तमारणी, अमृतस्रवा आदि तथा दक्षिणावर्तिनी यथा गुडूची, विदारी आदि दाहिनी ओर से आश्रय को लपेटती हैं।

(ग) **आरोहिणी** (Climbing plants)– जो वृक्ष को बिना लपेटे सामान्य रूप से ऊपर चढ़ती है उसे आरोहिणी कहते हैं। इसके पुन: मूलारोहिणी (Root climbers), सूत्रारोहिणी (Tendril climbers), बडिशारोहिणी (Hook climbers) तथा पत्रारोहिणी (Leaf climbers) ये चार भेद किये गये हैं। ये क्रमश: मूलों, सूत्रों, बडिशों तथा पत्रों के द्वारा आगे बढ़ती हैं। इनके उदाहरण क्रमश: पान, कद्दू, बेत और कलिहारी हैं।

(घ) **प्रतानिनी** (Lianes)– जो लतायें वृक्ष के शिखर पर अमर्यादित रूप से फैलती जायें उन्हें प्रतानिनी कहते हैं यथा माधवी, मालझन आदि।

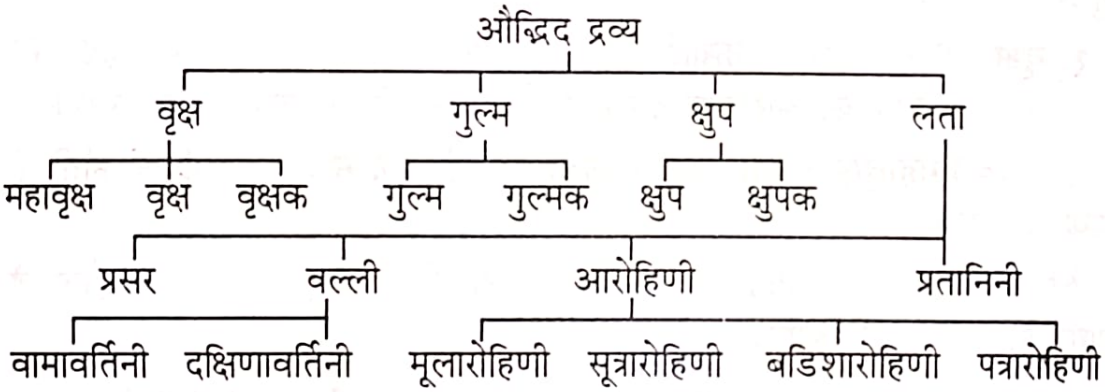

(घ) **कुल-भेद से**– आधुनिक वनस्पति-विज्ञान-वेत्ताओं ने १७वीं शती के अन्त में औद्भिद द्रव्यों का नवीन क्रम से वर्गीकरण करना प्रारम्भ किया और अब तक प्राय: सभी ज्ञात द्रव्यों को वर्गक्रम से व्यवस्थित किया जा चुका है। इसका आधार आकृतिगत तथा प्रकृतिगत साधर्म्य (Morphological and natural similarity) है। द्रव्यों के विभिन्न अङ्गों विशेषत: लैङ्गिक अवयवों की रचना के आधार पर उनके विभिन्न कुल स्थापित किये गये और फिर उनकी विभिन्न प्रजातियाँ और जातियाँ बनाई गईं। कुलसाधर्म्य के आधार पर होने के कारण यह वर्गीकरण 'कुलगत' (Genaeological) भी कहलाता है।

आधुनिक वर्गीकरण के भिन्न-भिन्न स्तरों पर अनेक सोपान हैं जिनसे किसी द्रव्य का उस कुलक्रम में विशिष्ट स्थान निश्चित किया जाता है। इस क्रम में निम्नाङ्कित सोपान हैं।

Scanned by CamScanner

विभाग (Division)
|
उपविभाग (Subdivision)
|
श्रेणी (Class)
|
उपश्रेणी (Subclass)
|
गण (Order)
|
कुल (Family)
|
प्रजाति (Genus)
|
जाति (Species)

जब कोई वर्ग बड़ा होता है तो उसमें उपविभाग कर दिया जाता है यथा गण के बाद एक उपगण हो सकता है जिसके अन्त में 'इनी' (ineae) होता है। इसी प्रकार कुल के भी उपविभाग होते हैं यथा उपकुल, वंश (Tribe) तथा उपवंश जिनके अन्त में क्रमशः 'ऑयडी' (oideae), 'ई' (eae) तथा 'इनी' (inae) होते हैं। प्रजाति के उपविभाग उपप्रजाति और खण्ड (Sections) होते हैं। जाति के उपविभाग भी कभी-कभी दृष्टिगोचर होते हैं यथा उपजाति, प्रकार (Variety), उपप्रकार और आकृति (Form)।

कुछ प्रमुख प्रचलित ओषधियों का उल्लेख परिशिष्ट में किया गया है।

आकृतिगत साधर्म्य के अनुसार वर्गीकरण का सङ्केत वेदों में भी मिलता है तथा आयुर्वेद में उपलब्ध एतत्सम्बन्धी तथ्यों का उल्लेख पीछे हो चुका है। आयुर्वेद की विभिन्न संहिताओं ने चिकित्सा की दृष्टि से उपादेय होने के कारण कर्मानुसार वर्गीकरण (Pharmacotherapeutical classification) को ही प्रश्रय दिया।

*

Scanned by CamScanner

पञ्चम अध्याय

द्रव्यों का कर्मात्मक वर्गीकरण

(Pharmacotherapeutical classification)

आयुर्वेद की प्राचीन संहिताओं में द्रव्यों का कर्मानुसार वर्गीकरण अत्यन्त विशद और वैज्ञानिक रूप में मिलता है। शरीर के प्रत्येक संस्थान पर होने वाले कर्मों का अध्ययन कर उनके अनुसार द्रव्यों को विभिन्न वर्गों में विभक्त किया गया है। चरक और सुश्रुत दोनों ने द्रव्यों का कर्मानुसार वर्गीकरण किया है। यद्यपि इन दोनों में आपाततः कुछ अन्तर दृष्टिगोचर होता है किन्तु मूलतः कोई भेद नहीं है। चरक ने वर्गों का नाम कर्मों के अनुसार रक्खा है तो सुश्रुत ने मुख्य द्रव्य के अनुसार; यथा जीवनीय कर्म करने वाले द्रव्यों के वर्ग का नाम चरक ने कर्म के अनुसार 'जीवनीय' दिया और सुश्रुत ने मुख्य द्रव्य 'काकोली' के अनुसार उसे 'काकोल्यादि' कहा।

संहिताओं में एक औषधद्रव्य के विभिन्न कर्मों का अध्ययन तो किया ही गया, विभिन्न औषधद्रव्यों को किसी सामान्य कर्म के आधार पर एक वर्ग में भी व्यवस्थित किया गया; क्योंकि कोई एक द्रव्य ऐसा मिलना कठिन है जो अकेले सब कर्मों के सम्पादन में समर्थ हो। अतः अनेक कर्मों के लिए भिन्न-भिन्न औषधियों का प्रयोग करना पड़ता है। इस प्रकार व्यस्त और समस्त, अनुलोम और प्रतिलोम दोनों विधियों से द्रव्यों के गुण-कर्म का वैज्ञानिक अध्ययन किया गया है। चरक संहिता-सूत्रस्थान के चतुर्थ अध्याय में इस विषय की स्थापना बड़े सुन्दर ढंग से की गई है। प्रसङ्ग की अवतारणा में अग्निवेश ने यह प्रश्न किया है कि अध्याय के प्रारम्भ में स्थापित पाँच सौ कषायद्रव्यों की संख्या पूरी नहीं उतरती क्योंकि एक ही द्रव्य अनेक गणों में कई बार दुहराये गये हैं और इस प्रकार उनकी कुल संख्या कम हो जाती है। इसका उत्तर देते हुए भगवान् आत्रेय ने अपना सैद्धान्तिक दृष्टिकोण स्पष्ट किया है। उन्होंने कहा कि जिस प्रकार एक पुरुष अनेक कर्मों का सम्पादन करता है तथा उन-उन कर्मों के अनुसार उसकी अनेक गौण संज्ञायें होती हैं, उसी प्रकार एक औषधद्रव्य के भी अनेक कर्म होते हैं और वह अपने विविध कर्मों के अनुसार विभिन्न गणों में स्थान पाता है।[१]

---

१. एकोऽपि ह्यनेकां संज्ञां लभते कार्यान्तराणि कुर्वन्, तद्यथा- पुरुषो बहूनां कर्मणां करणे समर्थो भवति, स यद्यत् कर्म करोति तस्य तस्य कर्मणः कर्तृ-करण-कार्यसंप्रयुक्तं तत्तद्गौणं नामविशेषं प्राप्नोति, तद्वदौषधद्रव्यमपि द्रष्टव्यम्। यदि चैकमेव किंचिद्-द्रव्यमासादयामस्तथागुणयुक्तं यत्सर्वकर्मणां करणे समर्थं स्यात्, कस्ततोऽन्यदिच्छेदुपधारयितुमुपदेष्टुं वा शिष्येभ्य इति। (च० सू० ४.२२)

Scanned by CamScanner

दूसरी बात इस सम्बन्ध में यह ध्यान में रखने की है कि वर्गीकरण के सम्बन्ध में आचार्य ने केवल सैद्धान्तिक दृष्टि से पथप्रदर्शन किया है, विषय की इयत्ता नहीं बतलाई है अतः वैज्ञानिक अनुसन्धान का पथ सदैव प्रशस्त और उन्मुक्त है। जो कुछ भी आचार्य ने बतलाया है वह सङ्केतमात्र समझना चाहिए जिसमें मध्यममार्ग अपनाकर सामान्य बुद्धि वाले व्यक्तियों के लिए पर्याप्त ज्ञान दिया गया है और यह स्पष्ट कर दिया गया है कि इसी आधार पर वैज्ञानिक पद्धति से अन्य अज्ञात द्रव्यों या वर्गों का निर्धारण बुद्धिमान् लोग कर सकते हैं।[१] अतः कर्मों के अनुसार वर्गों की संख्या में भी वृद्धि हो सकती है और एक-एक वर्ग के द्रव्यों की संख्या में भी।

चरकोक्त वर्ग

चरकसंहिता सूत्रस्थान के चतुर्थ अध्याय में द्रव्यों के कर्मानुसार पचास महाकषाय (वर्ग) वर्णित हैं जिनका उल्लेख नीचे किया जाता है। प्रत्येक वर्ग में दस द्रव्य हैं, इस प्रकार कुल ५०० द्रव्यों का समावेश इनमें होता है। द्रव्यों की दस संख्या सम्भवतः इस कारण रक्खी गई कि दिशायें भी दस होती हैं और इस प्रकार यह संख्या दिशानिर्देश का प्रतीक है। गण के स्वरूप के दिग्दर्शन के लिए यह पर्याप्त है।

१. **जीवनीय**– जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, जीवन्ती, यष्टीमधु।[२]

२. **बृंहणीय**– क्षीरिणी, दुग्धिका, अश्वगन्धा, काकोली, क्षीरकाकोली, बला, अतिबला, वनकपास, पयस्या, विधारा।[३]

३. **लेखनीय**– मुस्तक, कुष्ठ, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, वचा, अतिविषा, कटुका, चित्रक, चिरबिल्व, श्वेतवचा।[४]

---

१. एतावन्तो ह्यलमल्पबुद्धीनां व्यवहाराय, बुद्धिमतां च स्वालक्षण्यानुमानयुक्तिकुशलाना-मनुक्तार्थज्ञानायेति। (च० सू० ४.२०)
मन्दानां व्यवहाराय, बुधानां बुद्धिवृद्धये। पञ्चाशत्को ह्ययं वर्गः कषायाणामुदाहृतः।।
(च० सू० ४.२८)
(इन कर्मों की व्याख्या कर्मखण्ड में देखें।)

२. जीवकर्षभकौ मेदा महामेदा काकोली क्षीरकाकोली मुद्गपर्णीमाषपर्ण्यौ जीवन्ती मधुकमिति दशेमानि जीवनीयानि भवन्ति। (च० सू० ४.९(१)

३. क्षीरिणीराजक्षवकाश्वगंधाकाकोलीक्षीरकाकोलीवाट्यायनीभद्रौदनीभारद्वाजीपयस्यर्ष्यगन्धा इति दशेमानि बृंहणीयानि भवन्ति। (च० सू० ४.९(२)

४. मुस्तकुष्ठहरिद्रादारुहरिद्रावचातिविषाकटुरोहिणीचित्रकचिरबिल्वहैमवत्य इति दशेमानि लेखनीयानि भवन्ति। (च० सू० ४.९(३)

Scanned by CamScanner

४. **भेदनीय–** त्रिवृत्, अर्क, एरण्ड, लाङ्गली, दन्ती, चित्रक, चिरबिल्व, शङ्खिनी, कटुका, स्वर्णक्षीरी।[१]

५. **सन्धानीय–** यष्टीमधु, गुडूची, पृश्निपर्णी, पाठा, लज्जालु, मोचरस, धातकी, लोध्र, प्रियङ्गु, कट्फल।[२]

६. **दीपनीय–** पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, चित्रक, शुण्ठी, अम्लवेतस, मरिच, अजमोदा, भल्लातक, हिंगु।[३] इसमें प्रथम पाँच द्रव्य पञ्चकोल के अन्तर्गत आते हैं।

७. **बल्य–** ऐन्द्री, कपिकच्छु, शतावरी, माषपर्णी, क्षीरविदारी, अश्वगन्धा, शालपर्णी, रोहिणी, बला, अतिबला।[४]

८. **वर्ण्य–** चन्दन, पुन्नाग, पद्मक, उशीर, यष्टीमधु, मञ्जिष्ठा, सारिवा, क्षीरविदारी, श्वेतदूर्वा, श्यामदूर्वा।[५]

९. **कण्ठ्य–** सारिवा, इक्षुमूल, मधुयष्टी, पिप्पली, द्राक्षा, क्षीरविदारी, कट्फल, हंसपादी, बृहती, कण्टकारी।[६]

१०. **हृद्य–** आम्र, आम्रातक, लकुच, करमर्द, वृक्षाम्ल, अम्लवेतस, कुवल, बदर, दाडिम, मातुलुङ्ग।[७]

११. **तृप्तिघ्न–** शुण्ठी, चव्य, चित्रक, विडङ्ग, मूर्वा, गुडूची, वचा, मुस्त, पिप्पली, पटोल।[८]

---

१. सुवहार्कोरुबुकाग्निमुखीचित्राचित्रकचिरबिल्वशङ्खिनीशकुलादनीस्वर्णक्षीरिण्य इति दशेमानि भेदनीयानि भवन्ति। (च० सू० ४.९(४)

२. मधुकमधुपर्णीपृश्निपर्ण्यम्बष्ठकीसमङ्गामोचरसधातकीलोध्रप्रियङ्गुकट्फलानीति दशेमानि सन्धानीयानि भवन्ति। (च० सू० ४.९(५)

३. पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकशृङ्गवेराम्लवेतसमरिचाजमोदाभल्लातकास्थिङ्गुनिर्यासा इति दशेमानि दीपनीयानि भवन्ति। (च० सू० ४.९(६)

४. ऐन्द्र्यृषभ्यतिरसर्ष्यप्रोक्तापयस्याश्वगन्धास्थिरारोहिणीबलातिबला इति दशेमानि बल्यानि भवन्ति। (च० सू० ४.१०(७)

५. चन्दनतुङ्गपद्मकोशीरमधुकमञ्जिष्ठासारिवापयस्यासितालता इति दशेमानि वर्ण्यानि भवन्ति। (च० सू० ४.१०(८)

६. सारिवेक्षुमूलमधुकपिप्पलीद्राक्षाविदारीकैटर्यहंसपादीबृहतीकण्टकारिका इति दशेमानि कण्ठ्यानि भवन्ति। (च० सू० ४.१०(९)

७. आम्राम्रातकलिकुचकरमर्दवृक्षाम्लाम्लवेतसकुवलबदरदाडिममातुलुङ्गानीति दशेमानि हृद्यानि भवन्ति। (च० सू० ४.१० (१०)

८. नागरचव्यचित्रकविडङ्गमूर्वागुडूचीवचामुस्तपिप्पलीपटोलानीति दशेमानि तृप्तिघ्नानि भवन्ति। (च० सू० ४.११(११)

Scanned by CamScanner

१२. **अर्शोघ्न**– कुटज, बिल्व, चित्रक, शुण्ठी, अतिविषा, हरीतकी, धन्वयास, दारुहरिद्रा, वचा, चव्य।[१]

१३. **कुष्ठघ्न**– खदिर, हरीतकी, आमलकी, हरिद्रा, भल्लातक, सप्तपर्ण, आरग्वध, करवीर, विडङ्ग, चमेली के पत्ते।[२]

१४. **कण्डूघ्न**– चन्दन, उशीर, आरग्वध, करञ्ज, निम्ब, कुटज, सर्षप, यष्टीमधु, दारुहरिद्रा, मुस्त।[३]

१५. **कृमिघ्न**– शोभाञ्जन, मरिच, गण्डीर, केवुक, विडङ्ग, निर्गुण्डी, किणिही, गोक्षुर, वृषपर्णी, मूषापर्णी।[४]

१६. **विषघ्न**– हरिद्रा, मञ्जिष्ठा, रास्ना, सूक्ष्म एला, त्रिवृत्, चन्दन, निर्मली, शिरीष, सिन्दुवार, लसोड़ा।[५]

१७. **स्तन्यजनन**– वीरण, शालि, षष्टिक, इक्षुवालिका, दर्भ, कुश, काश, गुन्द्रा, इत्कट, कतृण-इनके मूल।[६]

१८. **स्तन्यशोधन**– पाठा, शुण्ठी, देवदारु, मुस्त, मूर्वा, गुडूची, इन्द्रयव, चिरायता, कुटकी, सारिवा।[७]

१९. **शुक्रजनन**– जीवक, ऋषभक, काकोली, क्षीरकाकोली, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, मेदा, शतावरी, उच्चटा, कुलिंग।[८]

---

१. कुटजबिल्वचित्रकनागरातिविषाभयाधन्वयासकदारुहरिद्रावचाचव्यानीति दशेमान्यर्शोघ्नानि भवन्ति। (च० सू० ४.११ (१२)

२. खदिराभयामलकहरिद्रारुष्करसप्तपर्णारग्वधकरवीरविडङ्गजातीप्रवाला इति दशेमानि कुष्ठघ्नानि भवन्ति। (च० सू० ४.११(१३)

३. चन्दननलदकृतमालनक्तमालनिम्बकुटजसर्षपमधुकदारुहरिद्रामुस्तानीति दशेमानि कण्डूघ्नानि भवन्ति। (च० सू० ४.११ (१४)

४. अक्षीवमरिचगण्डीरकेबुकविडङ्गनिर्गुण्डीकिणिहीश्वदंष्ट्रावृषपर्णिकाखुपर्णिका इति दशेमानि क्रिमिघ्नानि भवन्ति। (च० सू० ४.११(१५)

५. हरिद्रामञ्जिष्ठासुवहासूक्ष्मैलापालिन्दीचन्दनकतकशिरीषसिन्धुवारश्लेष्मातका इति दशेमानि विषघ्नानि भवन्ति। (च० सू० ४.११(१६)

६. वीरणशालिषष्टिकेक्षुवालिकादर्भकुशकाशगुन्द्रेत्कटकतृणमूलानीति दशेमानि स्तन्यजननानि भवन्ति। (च० सू० ४.१२(१७)

७. पाठामहौषधसुरदारुमुस्तमूर्वागुडूचीवत्सकफलकिराततिक्तककटुरोहिणीसारिवा इति दशेमानि स्तन्यशोधनानि भवन्ति। (च० सू० ४.१२(१८)

८. जीवकर्षभककाकोलीक्षीरकाकोलीमुद्गपर्णीमाषपर्णीमेदावृद्धरुहाजटिलाकुलिङ्गा इति दशेमानि शुक्रजननानि भवन्ति। (च० सू० ४.१२(१९)

Scanned by CamScanner

२०. **शुक्रशोधन–** कुष्ठ, एलवालुक, कट्फल, समुद्रफेन, कदम्बनिर्यास, इक्षु, काण्डेक्षु, इक्षुरक, वसुक, उशीर।[१]

२१. **स्नेहोपग–** मृद्वीका, यष्टीमधु, गुडूची, मेदा, विदारी, काकोली, क्षीरकाकोली, जीवक, जीवन्ती, शालपर्णी।[२]

२२. **स्वेदोपग–** शोभाञ्जन, एरण्ड, अर्क, वृश्चीर(श्वेत पुनर्नवा), पुनर्नवा, यव, तिल, कुलत्थ, माष, बदर।[३]

२३. **वमनोपग–** मधु, मधुयष्टी, कोविदार, कर्बुदार, नीप, समुद्रफल, बिम्बी, शणपुष्पी, अर्क, अपामार्ग।[४]

२४. **विरेचनोपग–** द्राक्षा, गम्भारी, परूषक, हरीतकी, आमलक, बिभीतक, कुवल, बदर, क्षुद्रबदर, पीलु।[५]

२५. **आस्थापनोपग–** त्रिवृत्, बिल्व, पिप्पली, कुष्ठ, सर्षप, वचा, इन्द्रयव, शतपुष्पा, यष्टीमधु, मदनफल।[६]

२६. **अनुवासनोपग–** रास्ना, देवदारु, बिल्व, मदनफल, शतपुष्पा, वृश्चीर, पुनर्नवा, गोक्षुर, अग्निमन्थ, श्योनाक।[७]

२७. **शिरोविरेचनोपग–** ज्योतिष्मती, छिक्किका, मरिच, पिप्पली, विडङ्ग, शिग्रु, सर्षप, अपामार्गबीज, श्वेता, महाश्वेता।[८]

---

१. कुष्ठैलवालुककट्फलसमुद्रफेनकदम्बनिर्यासेक्षुकाण्डेक्ष्विक्षुरकवसुकोशीराणीति दशेमानि शुक्रशोधनानि भवन्ति। (च० सू० ४.१२(२०)

२. मृद्वीकामधुकमधुपर्णीमेदाविदारीकाकोलीक्षीरकाकोलीजीवकजीवन्तीशालपर्ण्य इति दशेमानि स्नेहोपगानि भवन्ति। (च० सू० ४.१३(२१)

३. शोभाञ्जनकैरण्डार्कवृश्चीरपुनर्नवायवतिलकुलत्थमाषबदराणीति दशेमानि स्वेदोपगानि भवन्ति। (च० सू० ४.१३(२२)

४. मधुमधुककोविदारकर्बुदारनीपविदुलबिम्बीशणपुष्पीसदापुष्पाप्रत्यक्पुष्पा इति दशेमानि वमनोपगानि भवन्ति। (च० सू० ४.१३(२३)

५. द्राक्षाकाश्मर्यपरूषकाभयामलकबिभीतककुवलबदरकर्कन्धुपीलूनीति दशेमानि विरेचनोपगानि भवन्ति। (च० सू० ४.१३(२४)

६. त्रिवृद्बिल्वपिप्पलीकुष्ठसर्षपवचावत्सकफलशतपुष्पामधुकमदनफलानीति दशेमान्यास्थापनोपगानि भवन्ति। (च० सू० ४.१३(२५)

७. रास्नासुरदारुबिल्वमदनशतपुष्पावृश्चीरपुनर्नवाश्वदंष्ट्राग्निमन्थश्योनाका इति दशेमान्यनुवासनोपगानि भवन्ति। (च० सू० ४.१३(२६)

८. ज्योतिष्मतीक्षवकमरिचपिप्पलीविडङ्गशिग्रुसर्षपापामार्गतण्डुलश्वेतामहाश्वेता इति दशेमानि शिरोविरेचनोपगानि भवन्ति। (च० सू० ४.१३(२७)

Scanned by CamScanner

२८. **छर्दिनिग्रहण**– जम्बूपल्लव, आम्रपल्लव, मातुलुङ्ग, अम्लबदर, दाडिम, यव, षष्टिक, उशीर, मिट्टी, लाजा।[१]

२९. **तृष्णानिग्रहण**– शुण्ठी, धन्वयास, मुस्त, पर्पट, चन्दन, चिरायता, गुडूची, ह्रीवेर, धान्यक, पटोल।[२]

३०. **हिक्कानिग्रहण**– शटी, पुष्करमूल, बदरबीज, कण्टकारी, बृहती, बन्दाक, हरीतकी, पिप्पली, धन्वयास, कर्कटशृङ्गी।[३]

३१. **पुरीषसङ्ग्रहणीय**– प्रियङ्गु, अनन्ता, आम्रास्थि, अरलु, लोध्र, मोचरस, लज्जालु, धातकीपुष्प, भार्ङ्गी, पद्मकेशर।[४]

३२. **पुरीषविरजनीय**– जम्बूत्वक्, शल्लकीत्वक्, कच्छुरा, मधूक, शाल्मली, श्रीवेष्टक, भृष्टमृत्, क्षीरविदारी, उत्पल, तिल।[५]

३३. **मूत्रसङ्ग्रहणीय**– जम्बू, आम्र, प्लक्ष, वट, पारीश, उदुम्बर, अश्वत्थ, भल्लातक, अश्मन्तक, सोमवल्क।[६]

३४. **मूत्रविरजनीय**– पद्म, उत्पल, नलिन, कुमुद, सौगन्धिक, पुण्डरीक, शतपत्र, यष्टीमधु, प्रियङ्गु, धातकीपुष्प।[७]

३५. **मूत्रविरेचनीय**– वन्दाक, गोक्षुर, वसुक, वशिर, पाषाणभेद, दर्भ, कुश, काश, गुन्द्रा, इत्कट के मूल।[८]

---

१. जम्ब्वाम्रपल्लवमातुलुङ्गाम्लबदरदाडिमयवषष्टिकोशीरमृल्लाजा इति दशेमानि छर्दिनिग्रहणानि भवन्ति। (च० सू० ४.१४(२८)

२. नागरधन्वयवासकमुस्तपर्पटकचन्दनकिराततिक्तकगुडूचीह्रीवेरधान्यकपटोलानीति दशेमानि तृष्णानिग्रहणानि भवन्ति। (च० सू० ४.१४(२९)

३. शटीपुष्करमूलबदरबीजकण्टकारिकाबृहतीवृक्षरुहाभयापिप्पलीदुरालभाकुलीरशृङ्ग्य इति दशेमानि हिक्कानिग्रहणानि भवन्ति। (च० सू० ४.१४(३०)

४. प्रियङ्ग्वनन्ताम्रास्थिकट्वङ्गलोध्रमोचरससमङ्गाधातकीपुष्पपद्मापद्मकेशराणीति दशेमानि पुरीषसङ्ग्रहणीयानि भवन्ति। (च० सू० ४.१५(३१)

५. जम्बुशल्लकीत्वक्कच्छुरामधूकशाल्मलीश्रीवेष्टकभृष्टमृत्पयस्योत्पलतिलकणा इति दशेमानि पुरीषविरजनीयानि भवन्ति। (च० सू० ४.१५(३२)

६. जम्ब्वाम्रप्लक्षवटकपीतनोदुम्बराश्वत्थभल्लातकाश्मन्तकसोमवल्का इति दशेमानि मूत्र-सङ्ग्रहणीयानि भवन्ति। (च० सू० ४.१५(३३)

७. पद्मोत्पलनलिनकुमुदसौगन्धिकपुण्डरीकशतपत्रमधुकप्रियङ्गुधातकीपुष्पाणीति दशेमानि मूत्रविरजनीयानि भवन्ति। (च० सू० ४.१५(३४)

८. वृक्षादनीश्वदंष्ट्रावसुकवशिरपाषाणभेददर्भकुशकाशगुन्द्रेत्कटमूलानीति दशेमानि मूत्र-विरेचनीयानि भवन्ति। (च० सू० ४.१५(३५)

Scanned by CamScanner

३६. **कासहर**– द्राक्षा, हरीतकी, आमलक, पिप्पली, धन्वयास, कर्कटशृङ्गी, कण्टकारी, वृश्चीर, पुनर्नवा, भूम्यामलकी।[१]

३७. **श्वासहर**– शटी, पुष्करमूल, अम्लवेतस, एला, हिंगु, अगुरु, तुलसी, भूम्यामलकी, जीवन्ती, चोरपुष्पी।[२]

३८. **श्वयथुहर**– पाटला, अग्निमन्थ, श्योनाक, बिल्व, गम्भारी, कण्टकारी, बृहती, शालपर्णी, पृश्निपर्णी, गोक्षुर। ये दशमूल के द्रव्य हैं।[३]

३९. **ज्वरहर**– सारिवा, शर्करा, पाठा, मंजिष्ठा, द्राक्षा, पीलु, परूषक, हरीतकी, बिभीतक, आमलक।[४]

४०. **श्रमहर**– द्राक्षा, खर्जूर, प्रियाल, बदर, दाडिम, अञ्जीर, परूषक, इक्षु, यव, षष्टिक।[५]

४१. **दाहप्रशमन**– लाजा, चन्दन, गम्भारीफल, मधूक, शर्करा, नीलोत्पल, उशीर, सारिवा, गुडूची, ह्रीबेर।[६]

४२. **शीतप्रशमन**– तगर, अगुरु, धान्यक, शृङ्गवेर, अजवायन, वचा, कण्टकारी, अग्निमन्थ, श्योनाक, पिप्पली।[७]

४३. **उदर्दप्रशमन**– तिन्दुक, प्रियाल, बदर, खदिर, श्वेतखदिर, सप्तपर्ण, अश्वकर्ण, अर्जुन, असन, अरिभेद।[८]

---

१. द्राक्षाभयामलकपिप्पलीदुरालभाशृङ्गीकण्टकारिकावृश्चीरपुनर्नवातामलक्य इति दशेमानि कासहराणि भवन्ति। (च० सू० ४.१६(३६)

२. शटीपुष्करमूलाम्लवेतसैलाहिङ्ग्वगुरुसुरसातामलकीजीवन्तीचण्डा इति दशेमानि श्वासहराणि भवन्ति। (च० सू० ४.१६(३७)

३. पाटलाग्निमन्थश्योनाकबिल्वकाश्मर्यकण्टकारिकाबृहतीशालपर्णीपृश्निपर्णीगोक्षुरका इति दशेमानि श्वयथुहराणि भवन्ति। (च० सू० ४.१६(३८)

४. सारिवाशर्करापाठामञ्जिष्ठाद्राक्षापीलुपरूषकाभयामलकबिभीतकानीति दशेमानि ज्वरहराणि भवन्ति। (च० सू० ४.१६(३९)

५. द्राक्षाखर्जूरप्रियालबदरदाडिमफल्गुपरूषकेक्षुयवषष्टिका इति दशेमानि श्रमहराणि भवन्ति। (च० सू० ४.१६(४०)

६. लाजाचन्दनकाश्मर्यफलमधूकशर्करानीलोत्पलोशीरसारिवागुडूचीह्रीबेराणीति दशेमानि दाहप्रशमनानि भवन्ति। (च० सू० ४.१७(४१)

७. तगरागुरुधान्यकशृङ्गवेरभूतीकवचाकण्टकार्यग्निमन्थश्योनाकपिप्पल्य इति दशेमानि शीतप्रशमनानि भवन्ति। (च० सू० ४.१७(४२)

८. तिन्दुकप्रियालबदरखदिरकदरसप्तपर्णाश्वकर्णार्जुनासनारिमेदा इति दशेमान्युदर्दप्रशमनानि भवन्ति। (च० सू० ४.१७(४३)

Scanned by CamScanner

४४. **अङ्गमर्दप्रशमन**– शालपर्णी, पृश्निपर्णी, बृहती, कण्टकारी, एरण्ड, काकोली, चन्दन, उशीर, एला, मधुयष्टी।[१]

४५. **शूलप्रशमन**– पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, चित्रक, शुण्ठी, मरिच, अजमोदा, अजगन्धा, जीरक, गंडीर। इनमें प्रथम छः द्रव्य षड्षण के अन्तर्गत आते हैं।[२]

४६. **शोणितस्थापन**– मधु, यष्टीमधु, रक्त, मोचरस, मृत्कपाल, लोध्र, गैरिक, प्रियङ्गु, शर्करा, लाजा।[३]

४७. **वेदनास्थापन**– शाल, कट्फल, कदम्ब, पद्मक, तुम्ब, मोचरस, शिरीष, वेतस, एलवालुक, अशोक।[४]

४८. **संज्ञास्थापन**– हिंगु, कैटर्य, अरिमेद, वचा, चोरक, ब्राह्मी, भूतकेशी, जटामांसी, गुग्गुलु, कुटकी।[५]

४९. **प्रजास्थापन**– ऐन्द्री, ब्राह्मी, दूर्वा, दुर्वाभेद, लक्ष्मणा, गुडूची, आमलकी, नागबला, बला, प्रियङ्गु।[६]

५०. **वयःस्थापन**– गुडूची, हरीतकी, आमलक, रास्ना, श्वेता, जीवन्ती, शतावरी, मण्डूकपर्णी, शालपर्णी, पुनर्नवा।[७]

इन महाकषायों को ध्यान से देखा जाय तो स्पष्ट होगा कि दोष-धातु-मल, अग्नि, स्रोत तथा विभिन्न अवयवों का विचार करते हुए इनकी योजना की गई है।

---

१. विदारीगन्धापृश्निपर्णीबृहतीकण्टकारिकैरण्डकाकोलीचन्दनोशीरैलामधुकानीति दशेमान्यङ्गमर्दप्रशमनानि भवन्ति। (च० सू० ४.१७(४४)

२. पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकशृङ्गवेरमरिचाजमोदाजगन्धाजाजीगण्डीराणीति दशेमानि शूलप्रशमनानि भवन्ति। (च० सू० ४.१७(४५)

३. मधुमधुकरुधिरमोचरसमृत्कपाललोध्रगैरिकप्रियङ्गुशर्करालाजा इति दशेमानि शोणितस्थापनानि भवन्ति। (च० सू० ४.१८(४६)

४. शालकट्फलकदम्बपद्मकतुम्बमोचरसशिरीषवञ्जुलैलवालुकाशोका इति दशेमानि वेदनास्थापनानि भवन्ति। (च० सू० ४.१८(४७)

५. हिङ्गुकैटर्यारिमेदवचाचोरकवयःस्थागोलोमीजटिलापलङ्कषाशोकरोहिण्य इति दशेमानि संज्ञास्थापनानि भवन्ति। (च० सू० ४.१८(४८)

६. ऐन्द्रीब्राह्मीशतवीर्यासहस्रवीर्याऽमोघाऽव्यथाशिवाऽरिष्टावाट्यपुष्पीविष्वक्सेनकान्ता इति दशेमानि प्रजास्थापनानि भवन्ति। (च० सू० ४.१८(४९)

७. अमृताऽभयाधात्रीमुक्ताश्वेताजीवन्त्यतिरसामण्डूकपर्णीस्थिरापुनर्नवा इति दशेमानि वयःस्थापनानि भवन्ति। (च० सू० ४.१८(५०)

Scanned by CamScanner

इनके अतिरिक्त, चरकसंहिता सूत्रस्थान द्वितीय अध्याय तथा विमानस्थान अष्टम अध्याय में संशोधन कर्मों में प्रयुक्त होने वाले द्रव्यों का उल्लेख किया गया है–

१. **वमन–** मदनफल, देवदाली, कटुतुम्बी, कड़वी नेनुआ, कड़वी तोरई, कुटज के फल तथा निम्ब।[१]

२. **विरेचन–** त्रिवृत्, अमलतास, तिल्वक, स्नुही, सप्तला, शंखिनी, दन्ती, द्रवन्ती– इनके क्षीर, मूल, त्वक्, पत्र, पुष्प और फल। इनके अतिरिक्त त्रिफला, नीलिनी, कम्पिल्लक, वचा, इन्द्रायण, स्वर्णक्षीरी, लताकरञ्ज, पीलु, समुद्रफल।[२]

३. **आस्थापन–** आस्थापन द्रव्य रसभेद से ६ वर्गों में विभाजित हैं जिनका रसानुसार वर्गीकरण में उल्लेख किया गया है।[३] इनमें प्रमुख ये हैं- पाटला, अग्निमन्थ, बिल्व, श्योनाक, गम्भारी, शालपर्णी, पृश्निपर्णी, निदिग्धिका, बला, गोक्षुर, बृहती, एरण्ड, पुनर्नवा, यव, कोल, कुलत्थ, गुडूची, मदनफल, भूतृण, स्नेह और लवण।[४]

४. **अनुवासन–** अनुवासन में भी आस्थापन के ही द्रव्य प्रयुक्त होते हैं।[५]

५. **शिरोविरेचन–** आश्रयभेद से इसके सात उपवर्ग दिये गये हैं[६]–

(क) **फल–** अपामार्ग, पिप्पली, मरिच, विडङ्ग, शिग्रु, शिरीष, धान्यक, पीलु, जीरक, अजमोदा, वार्ताकी, पृथ्वीका, एला, हरेणुका।

---

१. यानि तु खलु वमनादिषु भेषजद्रव्याण्युपयोगं गच्छन्ति तान्यनुव्याख्यास्यामः। तद्यथा-
फलजीमूतकेक्ष्वाकुधामार्गवकुटजकृतवेधनफलानि। (च० वि० ८.१३५)
मदनं मधुकं निम्बं जीमूतं कृतवेधनम्। पिप्पलीकुटजेक्ष्वाकूण्येलां धामार्गवाणि च।।
उपस्थिते श्लेष्मपित्ते व्याधावामाशयाश्रये। वमनार्थं प्रयुञ्जीत भिषग्देहमदूषयन्।।
(च० सू० २.७-८)

२. विरेचनद्रव्याणि तु श्यामात्रिवृच्चतुरङ्गुलतिल्वकमहावृक्षसप्तलाशङ्खिनीदन्तीद्रवन्तीनां क्षीरमूलत्वक्पत्रपुष्पफलानि। (च० सू० ८.१३६)
त्रिवृतां त्रिफलां दन्तीं नीलिनीं सप्तलां वचाम्। कम्पिल्लकं गवाक्षीं च क्षीरिणीमुदकीर्यकाम्।।
पीलून्यारग्वधं द्राक्षां द्रवन्तीं निचुलानि च। पक्वाशयगते दोषे विरेकार्थं प्रयोजयेत्।।
(च० सू० २.९-१०)

३. तस्माद्द्रव्याणां चैकदेशमुदाहरणार्थं रसेष्वनुविभज्य रसैकैकश्येन च नामलक्षणार्थं षडास्थापनस्कन्धा रसतोऽनुविभज्य व्याख्यास्यन्ते। (च० वि० ८.१३७)

४. पाटलां चाग्निमन्थं च बिल्वं श्योनाकमेव च। काश्मर्यं शालपर्णीं च पृश्निपर्णीं निदिग्धिकाम्।।
बलां श्वदंष्ट्रां बृहतीमेरण्डं सपुनर्नवम्। यवान् कुलत्थान् कोलानि गुडूचीं मदनानि च।।
पलाशं कत्तृणं चैव स्नेहांश्च लवणानि च। उदावर्ते विबन्धेषु युञ्ज्यादास्थापनेषु च।।
(च० सू० २.११-१३)

५. अत एवौषधगणात् संकल्प्यमनुवासनम्। मारुतघ्नमिति प्रोक्तः संग्रहः पाञ्चकर्मिकः।।
(च० सू० २.१४)

६. शिरोविरेचनं सप्तविधं, फल-पत्र-मूल-कन्द-पुष्प-निर्यास-त्वगाश्रयभेदात्।
(च० वि० ८.१५१)

Scanned by CamScanner

(ख) **पत्र**– तुलसी की अनेक जातियाँ, छिक्किका, हरिद्रा, आर्द्रक, मूली, लशुन, अरणी, सर्षप।

(ग) **मूल**– अर्क, अलर्क, कुष्ठ, नागदन्ती, वचा, अपामार्ग, श्वेतापराजिता, ज्योतिष्मती, इन्द्रायण, गण्डीरपुष्पी, अधःपुष्पी, वृश्चिकाली, ब्राह्मी, अतिविषा।

(घ) **कन्द**– हरिद्रा, आर्द्रक, मूली, लशुन।

(च) **पुष्प**– लोध्र, मदनफल, सप्तपर्ण, निम्ब, अर्क।

(छ) **निर्यास**– देवदारु, अगुरु, सरल, शल्लकी, जिंगिणी, असन, हिंगु।

(ज) **त्वक्**– तेजोवती, त्वक्, इङ्गुदी, शोभाञ्जन, बृहती, कण्टकारी।[१]

रसभेद से इसके चार उपवर्ग हैं- लवण, कटु, तिक्त, कषाय।[२]

इनके अतिरिक्त, कुछ अन्य वर्गों का भी सङ्केत चरक में मिलता है जिनका उल्लेख यहाँ किया जाता है–

१. **दन्तधावन**– करञ्ज, करवीर, अर्क, मालती, ककुभ, असन आदि।[३]

२. **मुखशोधन**– जातीफल, लताकस्तूरी, पूग, लवङ्ग, कंकोल, एला, ताम्बूलपत्र, कर्पूरनिर्यास।[४]

३. **लङ्घन**– लघु, उष्ण, तीक्ष्ण, विशद, रूक्ष, सूक्ष्म, खर, सर तथा कठिन गुण वाले द्रव्य यथा गुडूची, भद्रमुस्त, त्रिफला, तक्र, निम्ब, मधु, विडङ्ग, शुण्ठी, क्षार, लौहभस्म, मधु, यवचूर्ण, आमलक, बृहत्पञ्चमूल (मधुयुक्त), शिलाजतु

---

१. शिरोविरेचनद्रव्याणि पुनरपामार्गपिप्पलीमरिचविडङ्गशिग्रुशिरीषकुस्तुम्बुरुपील्वजाज्यजमोदावार्ताकीपृथ्वीकैलाहरेणुकाफलानि च, सुमुखसुरसकुठेरकगण्डीरकालमालकपर्णासक्षवकफणिज्झकहरिद्राशृङ्गवेरमूलकलशुनतर्कारीसर्षपपत्राणि च, अर्कालर्ककुष्ठनागदन्तीवचापामार्गश्वेताज्योतिष्मतीगवाक्षीगण्डीरपुष्प्यवाक्पुष्पीवृश्चिकालीवयःस्थातिविषामूलानि च, हरिद्राशृङ्गवेरमूलकलशुनकन्दाश्च, लोध्रमदनसप्तपर्णनिम्बार्कपुष्पाणि च, देवदार्वगुरुसरलशल्लकीजिङ्गिन्यसनहिङ्गुनिर्यासाश्च, तेजोवतीवराङ्गेङ्गुदीशोभाञ्जनबृहतीकण्टकारिकात्वचश्चेति। (च० वि० ८.१५१)

२. लवणकटुतिक्तकषायाणि चेन्द्रियोपशयानि तथाऽपराण्यनुक्तान्यपि द्रव्याणि यथायोगविहितानि शिरोविरेचनार्थमुपदिश्यन्त इति। (च० वि० ८.१५१)

३. करञ्जकरवीरार्कमालतीककुभासनाः। शस्यन्ते दन्तपवने ये चाप्येवंविधा द्रुमाः।।
(च० सू० ५.७३-)

४. जातीकटुकपूगानां लवङ्गस्य फलानि च। कक्कोलस्य फलं पत्रं ताम्बूलस्य शुभं तथा।।
तथा कर्पूरनिर्यासः सूक्ष्मैलायाः फलानि च। धार्याण्यास्येन वैशद्यरुचिसौगन्ध्यमिच्छता।।
(च० सू० ५.७६-७७)

Scanned by CamScanner

(अग्निमन्थक्वाथ के साथ), प्रशातिका, प्रियङ्गु, श्यामाक, यवक, यव, जूर्णाह्व, कोद्रव, मुद्ग, कुलत्थ, चक्रमर्द, आढकी, पटोल, मधूदक और अरिष्ट आदि।[१]

४. **बृंहण**– गुरु, शीत, मृदु, स्निग्ध, बहल, स्थूल, पिच्छिल, मन्द, स्थिर, श्लक्ष्ण गुणवाले द्रव्य यथा नवान्न, शालि, माष, गोधूम, इक्षुविकार, ग्राम्य-आनूप-औदक मांस, दधि, दुग्ध, घृत, वृष्य और रसायन द्रव्य।[२]

५. **रूक्षण**– रूक्ष, लघु, खर, तीक्ष्ण, उष्ण, स्थिर, अपिच्छिल, कठिन गुणवाले द्रव्य[३] यथा यव, मधु, भृष्ट अन्न आदि।

६. **स्नेहन**– द्रव, सूक्ष्म, सर, स्निग्ध, पिच्छिल, गुरु, शीतल, मन्द, मृदु गुणवाले द्रव्य[४] यथा मधुयष्टी, घृत, आदि।

७. **स्वेदन**– उष्ण, तीक्ष्ण, सर, स्निग्ध, रूक्ष, सूक्ष्म, द्रव, स्थिर तथा गुरु गुण वाले द्रव्य[५] यथा शोभाञ्जन, चित्रक, विडङ्ग आदि।

८. **स्तम्भन**– शीत, मन्द, मृदु, श्लक्ष्ण, रूक्ष, सूक्ष्म, द्रव, स्थिर और लघु गुण वाले द्रव्य[६] यथा कुटज, धातकी, अरलु आदि।

---

१. गुडूचीभद्रमुस्तानां प्रयोगस्त्रैफलस्तथा। तक्रारिष्टप्रयोगश्च प्रयोगो माक्षिकस्य च।।
विडङ्ग नागरं क्षारः काललोहरजो मधु। यवामलकचूर्णं च प्रयोगः श्रेष्ठ उच्यते।।
बिल्वादिपञ्चमूलस्य प्रयोगः क्षौद्रसंयुतः। शिलाजतुप्रयोगश्च साग्निमन्थरसः परः।।
प्रशातिका प्रिङ्गुश्च श्यामाका यवका यवाः। जूर्णाह्वाः कोद्रवा मुद्गाः कुलत्थाश्चक्रमुद्गकाः।।
आढकीनां च बीजानि पटोलामलकैः सह। भोजनार्थं प्रयोज्यानि पानं चानु मधूदकम्।।
अरिष्टांश्चानुपानार्थे मेदोमांसकफापहान्। अतिस्थौल्यविनाशाय संविभज्य प्रयोजयेत्।।
(च० सू० २१.२२-२७)

२. नवान्नानि नवं मद्यं ग्राम्यानूपौदका रसाः। संस्कृतानि च मांसानि दधि सर्पिः पयांसि च।।
इक्षवः शालयः माषा गोधूमा गुडवैकृतम्। बस्तयः स्निग्धमधुरास्तैलाभ्यङ्गश्च सर्वदा।।
स्निग्धमुद्वर्तनं स्नानं गन्धमाल्यनिषेवणम्। शुक्लं वासो यथाकालं दोषाणामवसेचनम्।।
रसायनानां वृष्याणां योगानामुपसेवनम्। हत्वाऽतिकार्श्यमाधत्ते नृणामुपचयं परम्।।
(च० सू० २१.३०-३३)

३. रूक्षं लघु खरं तीक्ष्णमुष्णं स्थिरमपिच्छिलम्।
प्रायशः कठिनं चैव यद्द्रव्यं तद्धि रूक्षणम्।। (च० सू० २२.१४-)

४. द्रवं सूक्ष्मं सरं स्निग्धं पिच्छिलं गुरु शीतलम्।
प्रायो मन्दं मृदु च यद्द्रव्यं तत्स्नेहनं मतम्।। (च० सू० २२.१५)

५. उष्णं तीक्ष्णं सरं स्निग्धं रूक्षं सूक्ष्मं द्रवं स्थिरम्।
द्रव्यं गुरु च यत् प्रायस्तद्धि स्वेदनमुच्यते।। (च० सू० २२.१६)

६. शीतं मन्दं मृदु श्लक्ष्णं रूक्षं सूक्ष्मं द्रवं स्थिरम्।
यद्द्रव्यं लघु चोद्दिष्टं प्रायस्तत् स्तम्भनं स्मृतम्।। (च० सू० २२.१७)

Scanned by CamScanner

९. **निद्राकर**– ग्राम्य, आनूप, औदक मांसरस, शाल्यन्न, दधि, दुग्ध, स्नेह, मद्य, नेत्रतर्पण, शिरोलेप, मुखलेप आदि।[१]

१०. **निद्राहर**– वमन, विरेचन, शिरोविरेचन, लङ्घन आदि।[२]

११. **अपतर्पण**– त्रिकटु, विडङ्ग, त्रिफला, शोभाञ्जन, कुटकी, बृहतीद्वय, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, पाठा, अतिविषा, स्थिरा, हिङ्गु, केबुक, यवानी, धान्यक, चित्रक, सौवर्चल, जीरक, हपुषा।[३]

१२. **सन्तर्पण**– मांसरस, क्षीर, घृत, शर्करा आदि।[४]

१३. **संज्ञाप्रबोधन**– तीक्ष्ण मद्य, मातुलुङ्गरस (शुण्ठीयुक्त), सौवर्चल, हिंगु, त्रिकटु, अञ्जन, कपिकच्छूघर्षण आदि।[५]

१४. **हिततम**– रक्तशालि, मुद्ग, सैन्धव आदि।[६]

---

१. अभ्यङ्गोत्सादनं स्नानं ग्राम्यानूपौदका रसाः। शाल्यन्नं सदधि क्षीरं स्नेहो मद्यं मनःसुखम्।
मनसोऽनुगुणा गन्धाः शब्दाः संवाहनानि च। चक्षुषोस्तर्पणं लेपः शिरसो वदनस्य च।।
स्वास्तीर्णं शयनं वेश्म सुखं कालस्तथोचितः। आनयन्त्यचिरान्निद्रां प्रनष्टा या निमित्ततः।।
(च० सू० २१.५२-५४)

२. कायस्य शिरसश्चैव विरेकश्छर्दनं भयम्। चिन्ता क्रोधस्तथा धूमो व्यायामो रक्तमोक्षणम्।।
उपवासोऽसुखा शय्या सत्त्वौदार्यं तमोजयः। निद्राप्रसङ्गमहितं वारयन्ति समुत्थितम्।।
(च० सू० २१.५५-५६)

३. व्योषं विडङ्गं शिग्रूणि त्रिफलां कटुरोहिणीम्। बृहत्यौ द्वे हरिद्रे द्वे पाठामतिविषां स्थिराम्।।
हिङ्गु केबुकमूलानि यवानीधान्यचित्रकान्। सौवर्चलमजाजीं च हपुषां चेति चूर्णयेत्।।
(च० सू० २३.१९-२०)

४. हिता मांसरसास्तस्मै पयांसि च घृतानि च। स्नानानि बस्तयोऽभ्यङ्गास्तर्पणास्तर्पणाश्च ये।।
(च० सू० २३.३३)

५. अञ्जनान्यवपीडाश्च धूमाः प्रधमनानि च। सूचीभिस्तोदनं शस्तं दाहः पीडा नखान्तरे।।
लुञ्चनं केशलोम्नां च दन्तैर्दशनमेव च। आत्मगुप्तावघर्षश्च हितं तस्यावबोधने।।
संमूर्च्छितानि तीक्ष्णानि मद्यानि विविधानि च। प्रभूतकटुयुक्तानि तस्यास्ये गालयेन्मुहुः।।
मातुलुङ्गरसं तद्वन्महौषधसमायुतम्। तद्वत् सौवर्चलं दद्याद्युक्तं मद्याम्लकाञ्जिकैः।।
हिङ्गूषणसमायुक्तं यावत् संज्ञाप्रबोधनम्।। (च० सू० २४.४६-४९-)

६. तद्यथा–लोहितशालयः शूकधान्यानां पथ्यतमत्वे श्रेष्ठतमा भवन्ति, मुद्गाः शमीधान्यानाम्, आन्तरीक्षमुदकानां, सैन्धवं लवणानां, जीवन्तीशाकं शाकानाम्, ऐणेयं मृगमांसानां, लावः पक्षिणां, गोधा बिलेशयानां, रोहितो मत्स्यानां, गव्यं सर्पिः सर्पिषां, गोक्षीरं क्षीराणां, तिलतैलं स्थावरजातानां स्नेहानां, वराहवसा आनूपमृगवसानां, चुलुकीवसा मत्स्यवसानां, पाकहंसवसा जलचरविहङ्गवसानां, कुक्कुटवसा विष्किरशकुनिवसानाम्, अजमेदः शाखादमेदसां, शृङ्गवेरं कन्दानां, मृद्वीका फलानां, शर्करेक्षुविकाराणाम्, इति प्रकृत्यैव हिततमानामाहारविकाराणां प्राधान्यतो द्रव्याणि व्याख्यातानि भवन्ति। (च० सू० २५.३८)

Scanned by CamScanner

१५. **अहिततम–** यवक, माष, सर्षप आदि।[१]

विभिन्न वर्गों में हिततम और अहिततम द्रव्यों की सूची निम्नाङ्कित तालिका में दी गई है–

सं०	वर्ग	हिततम	अहिततम
१.	शूकधान्य	रक्तशालि	यवक
२.	शमीधान्य	मुद्ग	माष
३.	उदक	आन्तरीक्ष	वर्षानादेय
४.	लवण	सैन्धव	औषर
५.	शाक	जीवन्ती	सर्षप
६.	मृगमांस	ऐणेय	गोमांस
७.	पक्षी	लाव	काणकपोत
८.	बिलेशय	गोधा	मण्डूक
९.	मत्स्य	रोहित	चिलिचिम
१०.	घृत	गोघृत	आविकघृत
११.	दुग्ध	गोदुग्ध	अविक्षीर
१२.	स्थावर स्नेह	तिलतैल	कुसुम्भतैल
१३.	आनूप मृगवसा	वराहवसा	महिषवसा
१४.	मत्स्यवसा	चुलुकीवसा	कुम्भीरवसा
१५.	जलचरविहङ्गवसा	पाकहंसवसा	काकमद्गुवसा
१६.	विष्किरशकुनिवसा	कुक्कुटवसा	चटकवसा
१७.	शाखादमेद	अजमेद	हस्तिमेद
१८.	कन्द	शृङ्गवेर	आलुक
१९.	फल	मृद्वीका	लिकुच
२०.	इक्षुविकार	शर्करा	फाणित

१. यवकाः शूकधान्यानामपथ्यतमत्वेन प्रकृष्टतमा भवन्ति, माषाः शमीधान्यानां, वर्षानादेयमुदकानाम्, औषरं लवणानां, सर्षपशाकं शाकानां, गोमांसं मृगमांसानां, काणकपोताः पक्षिणां, भेको बिलेशयानां, चिलिचिमो मत्स्यानाम्, आविकं सर्पिः सर्पिषाम्, अविक्षीरं क्षीराणां, कुसुम्भस्नेहाः स्थावरस्नेहानां, महिषवसा आनूपमृगवसानां, कुम्भीरवसा मत्स्यवसानां, काकमद्गुवसा जलचरविहङ्गवसानां, चटकवसा विष्किरशकुनिवसानां, हस्तिमेदः शाखादमेदसां, निकुचं फलानाम्, आलुकं कन्दानां, फाणितमिक्षुविकाराणाम्, इति प्रकृत्यैवाहिततमानामाहारविकाराणां प्रकृष्टतमानि द्रव्याणि व्याख्यातानि भवन्ति।

(च० सू० २५.३९)

Scanned by CamScanner

१६. **अग्र्य**– अन्न, उदक, सुरा, क्षीर, मांस, मांसरस, लवण, अम्ल, कुक्कुट, नक्ररेत, मधु, घृत, तैल, वमन, विरेचन, बस्ति, स्वेद, व्यायाम, क्षार, तिन्दुक, आमकपित्थ, आविकघृत, अजाक्षीर, अविक्षीर, महिषीक्षीर, मन्दक दधि, गवेधुकान्न, उद्दालकान्न, इक्षु, यव, जाम्बव, शष्कुली, कुलत्थ, माष, मदनफल, त्रिवृत्, चतुरङ्गुल, स्नुहीक्षीर, अपामार्ग, विडङ्ग, शिरीष, खदिर, रास्ना, आमलक, हरीतकी, एरण्डमूल, पिप्पलीमूल, चित्रकमूल, पुष्करमूल, मुस्त, ह्रीबेर, अरलु, अनन्तमूल, गुडूची, बिल्व, अतिविषा, उत्पल-कुमुद-पद्म-किंजल्क, दुरालभा, गन्धप्रियङ्गु, कुटजत्वक्, काश्मर्यफल, पृश्निपर्णी, विदारिगन्धा (शालपर्णी), वला, गोक्षुर, हिङ्गु, अम्लवेतस, यवक्षार, तक्राभ्यास, क्रव्यादमांसरसाभ्यास, क्षीरघृताभ्यास, समघृतसक्तुप्राशाभ्यास, तैलगण्डूषाभ्यास, चन्दन-उदुम्बर, रास्ना-अगुरु, लामज्जक-उशीर, कुष्ठ, मधुयष्टी, वायु, अग्नि, जल, मद्य, सर्वरसाभ्यास, एकरसाभ्यास।[१]

---

१. अन्नं वृत्तिकराणां श्रेष्ठम्, उदकमाश्वासकराणां, सुरा श्रमहराणां, क्षीरं जीवनीयानां, मांसं बृंहणीयानां, रसस्तर्पणीयानां, लवणमन्नद्रव्यरुचिकराणाम्, अम्लं हृद्यानां, कुक्कुटो वल्यानां, नक्ररेतो वृष्याणां, मधु श्लेष्मपित्तप्रशमनानां, सर्पिर्वातपित्तप्रशमनानां, तैलं वातश्लेष्मप्रशमनानां, वमनं श्लेष्महराणां, विरेचनं पित्तहराणां, बस्तिर्वातहराणां, स्वेदो मार्दवकराणां, व्यायामः स्थैर्यकराणां, क्षारः पुंस्त्वोपघातिनां, तिन्दुकमनन्नद्रव्यरुचिकराणाम्, आमं कपित्थमकण्ठ्यानाम्, आविकं सर्पिरहृद्यानाम्, अजाक्षीरं शोषघ्नस्तन्यसात्म्यरक्तसांग्राहिकरक्तपित्तप्रशमनानाम्, अविक्षीरं श्लेष्मपित्तजननानां, महिषीक्षीरं स्वप्नजननानां, मन्दकं दध्यभिष्यन्दकराणां, गवेधुकान्नं कर्शनीयानाम्, उद्दालकान्नं विरूक्षणीयानाम्, इक्षुर्मूत्रजननानां, यवाः पुरीषजननानां, जाम्ववं वातजननानां, शष्कुल्यः श्लेष्मपित्तजननानां, कुलत्था अम्लपित्तजननानां, माषाः श्लेष्मपित्तजननानां, मदनफलं वमनास्थापनानुवासनोपयोगिनां, त्रिवृत् सुखविरेचनानां, चतुरङ्गुलो मृदुविरेचनानां, स्नुक्पयस्तीक्ष्णविरेचनानां, प्रत्यक्पुष्पा शिरोविरेचनानां, विडङ्गं क्रिमिघ्नानां, शिरीषो विषघ्नानां, खदिरः कुष्ठघ्नानां, रास्ना वातहराणाम्, आमलकं वयःस्थापनानां, हरीतकी पथ्यानाम्, एरण्डमूलं वृष्यवातहराणां, पिप्पलीमूलं दीपनीयपाचनीयानाहप्रशमनानां, चित्रकमूलं दीपनीयपाचनीयगुदशोथार्शःशूलहराणां, पुष्करमूलं हिक्काश्वासकास-पार्श्वशूलहराणां, मुस्तं सांग्राहिकपाचनीयदीपनीयानाम्, उदीच्यं निर्वापणीयदीपनीय-पाचनीयच्छर्द्यतीसारहराणां, कट्वङ्गं सांग्राहिकपाचनीयदीपनीयानाम्, अनन्ता सांग्राहिकरक्तपित्तप्रशमनानाम्, अमृता सांग्राहिकवातहरदीपनीयश्लेष्मशोणितविबन्ध-प्रशमनानां, बिल्वं सांग्राहिकदीपनीयवातकफप्रशमनानाम्, अतिविषा दीपनीयपाचनीय-सांग्राहिकसर्वदोषहराणाम्, उत्पलकुमुदपद्मकिञ्जल्कः सांग्राहिकरक्तपित्तप्रशमनानां, दुरालभा पित्तश्लेष्मप्रशमनानां, गन्धप्रियङ्गुः शोणितपित्तातियोगप्रशमनानां, कुटजत्वक् श्लेष्मपित्तरक्तसांग्राहिकोपशोषणानां, काश्मर्यफलं रक्तसांग्राहिकरक्तपित्तप्रशमनानां,

क्रमशः ....

Scanned by CamScanner

अग्र्य-वर्ग

सं०	वर्ग	द्रव्य
१.	वृत्तिकर	अन्न
२.	आश्वासकर	जल
३.	श्रमहर	सुरा
४.	जीवनीय	दुग्ध
५.	बृंहणीय	मांस
६.	तर्पणीय	मांसरस
७.	रुचिकर	लवण
८.	हृद्य	अम्ल
९.	बल्य	कुक्कुट
१०.	वृष्य	नक्रेत
११.	कफपित्तप्रशमन	मधु
१२.	वातपित्तप्रशमन	घृत
१३.	वातकफप्रशमन	तैल
१४.	कफहर	वमन
१५.	पित्तहर	विरेचन
१६.	वातहर	बस्ति
१७.	मार्दवकर	स्वेद
१८.	स्थैर्यकर	व्यायाम
१९.	पुंस्त्वहर	क्षार
२०.	अरुचिकर	तिन्दुक
२१.	अकण्ठ्य	आम कपित्थ

पृश्निपर्णी सांग्राहिकवातहरदीपनीयवृष्याणां, विदारिगन्धा वृष्यसर्वदोषहराणां, बला सांग्राहिकबल्यवातहराणां, गोक्षुरको मूत्रकृच्छ्रानिलहराणां, हिङ्गुनिर्यासश्छेदनीयदीपनीयानुलोमिकवातकफप्रशमनानाम्, अम्लवेतसो भेदनीयदीपनीयानुलोमिकवातश्लेष्महराणां, यावशूकः स्रंसनीयपाचनीयार्शोघ्नानां, तक्राभ्यासो ग्रहणीदोषशोफार्शोघृतव्यापत्प्रशमनानां, क्रव्यान्मांसरसाभ्यासो ग्रहणीदोषशोषार्शोघ्नानां, क्षीरघृताभ्यासो रसायनानां, समघृतसक्तुप्राशाभ्यासो वृष्योदावर्तहराणां, तैलगण्डूषाभ्यासो दन्तबलरुचिकराणां, चन्दनोदुम्बरे दुर्गन्धहरदाहनिर्वापणालेपनानां, रास्नागुरुणी शीतापनयनप्रलेपनानां, लामज्जकोशीरे दाहत्वग्दोषस्वेदापनयनप्रलेपनानां, कुष्ठं वातहराभ्यङ्गोपनाहोपयोगिनां, मधुकं चक्षुष्यवृष्यकेश्यकण्ठ्यवर्ण्यविरजनीयरोपणीयानां, वायुः प्राणसंज्ञाप्रदानहेतूनाम्, अग्निरामस्तम्भशीतशूलोद्वेपनप्रशमनानां, जलं स्तम्भनीयानां, ...मद्यं सौमनस्यजननानां, ...सर्वरसाभ्यासो बलकराणाम्, एकरसाभ्यासो दौर्बल्यकराणाम्...। (च० सू० २५.४०)

Scanned by CamScanner

सं०	वर्ग	द्रव्य
२२.	अहृद्य	अविघृत
२३.	शोषघ्न-स्तन्य-सात्म्य-रक्तसाङ्ग्राहिक-रक्तपित्तशामक	अजाक्षीर
२४.	कफपित्तकर	अविक्षीर
२५.	निद्राकर	महिषीक्षीर
२६.	अभिष्यन्दकर	मन्दक दधि
२७.	कर्शनीय	गवेधुकान्न
२८.	विरूणक्षीय	उद्दालकान्न
२९.	मूत्रजनन	इक्षु
३०.	पुरीषजनन	यव
३१.	वातजनन	जाम्बव
३२.	कफपित्तजनन	शष्कुली
३३.	अम्लपित्तजनन	कुलत्थ
३४.	कफपित्तजनन	माष
३५.	वमन-आस्थापन-अनुवासनोपयोगी	मदनफल
३६.	सुखविरेचन	त्रिवृत्
३७.	मृदुविरेचन	आरग्वध
३८.	तीक्ष्णविरेचन	स्नुहीक्षीर
३९.	शिरोविरेचन	अपामार्ग
४०.	क्रिमिघ्न	विडङ्ग
४१.	विषघ्न	शिरीष
४२.	कुष्ठघ्न	खदिर
४३.	वातहर	रास्ना
४४.	वय:स्थापन	आमलक
४५.	पथ्य	हरीतकी
४६.	वृष्य-वातहर	एरण्डमूल
४७.	दीपनीय-पाचनीय-आनाहप्रशमन	पिप्पलीमूल
४८.	दीपनीय-पाचनीय-गुदशूल-शोथ-अर्शोहर	चित्रकमूल
४९.	हिक्का-श्वास-कास-पार्श्वशूलहर	पुष्करमूल
५०.	साङ्ग्राहिक-दीपनीय-पाचनीय	मुस्त
५१.	निर्वापणीय-दीपनीय-पाचनीय-छर्दि-अतिसारहर	उदीच्य
५२.	सांग्राहिक-पाचनीय-दीपनीय	कट्वङ्ग
५३.	साङ्ग्राहिक-रक्तपित्तप्रशमन	अनन्ता

Scanned by CamScanner

सं०	वर्ग	द्रव्य
५४.	साङ्ग्राहिक-वातहर-दीपनीय-श्लेष्मशोणित-विबन्धप्रशमन	अमृता
५५.	सांग्राहिक-दीपनीय-वातकफप्रशमन	बिल्व
५६.	दीपनीय-पाचनीय-सांग्राहिक-सर्वदोषहर	अतिविषा
५७.	सांग्राहिक-रक्तपित्तप्रशमन	उत्पलकुमुदपद्म-किंजल्क
५८.	पित्तकफप्रशमन	दुरालभा
५९.	शोणितपित्तातियोगप्रशमन	गन्धप्रियङ्गु
६०.	श्लेष्मपित्तरक्तसाङ्ग्राहिक-उपशोषण	कुटजत्वक्
६१.	रक्तसाङ्ग्राहिक-रक्तपित्तप्रशमन	काश्मर्यफल
६२.	साङ्ग्राहिक-वातहर-दीपनीय-वृष्य	पृश्निपर्णी
६३.	वृष्य-सर्वदोषहर	शालपर्णी
६४.	सांग्राहिक-बल्य-वातहर	बला
६५.	मूत्रकृच्छ्र-वातहर	गोक्षुर
६६.	छेदनीय-दीपनीय-आनुलोमिक-वातकफप्रशमन	हिंगुनिर्यास
६७.	भेदनीय-दीपनीय-आनुलोमिक-वातकफहर	अम्लवेतस
६८.	स्रंसनीय-पाचनीय-अर्शोघ्न	यवक्षार
६९.	ग्रहणीदोष-शोफ-अर्शो-घृतव्यापत्प्रशमन	तक्राभ्यास
७०.	ग्रहणीदोष-शोष-अर्शोघ्न	क्रव्यान्मांसरसाभ्यास
७१.	रसायन	क्षीरघृताभ्यास
७२.	वृष्य-उदावर्तहर	समघृतसक्तुप्राशाभ्यास
७३.	दन्तबल-रुचिकर	तैलगण्डूषाभ्यास
७४.	दुर्गन्धहर-दाहनिर्वापणालेपन	चन्दन-उदुम्बर
७५.	शीतापनयनप्रलेपन	रास्ना-अगुरु
७६.	दाह-त्वग्दोष-स्वेदापनयनप्रलेपन	लामज्जक-उशीर
७७.	वातहर-अभ्यङ्ग-उपनाहोपयोगी	कुष्ठ
७८.	चक्षुष्य-वृष्य-केश्य-कण्ठ्य-वर्ण्य-विरजनीय-रोपणीय	मधुक
७९.	प्राणसंज्ञाप्रदानहेतु	वायु
८०.	आम-स्तम्भ-शीत-शूल-उद्वेपनप्रशमन	अग्नि
८१.	स्तम्भनीय	जल
८२.	सौमनस्यजनन	मद्य
८३.	बलकर	सर्वरसाभ्यास
८४.	दौर्बल्यकर	एकरसाभ्यास

Scanned by CamScanner

१७. **वातावजयन**– स्नेह, स्वेद; स्नेह-उष्ण-मधुर-अम्ल-लवणयुक्त मृदु-संशोधन, सुरासव, बस्ति।[१]

१८. **पित्तावजयन**– मधुर, तिक्त, कषाय, शीत, घृतपान, विरेचन, सौम्य भाव।[२]

१९. **श्लेष्मावजयन**– रूक्ष, कटु, तिक्त, कषाय, तीक्ष्ण संशोधन, तीक्ष्ण मद्य, धूमपान आदि।[३]

२०. **वातवर्धक**– कटु, तिक्त, कषाय, रूक्ष, लघु, शीत द्रव्य।[४]

२१. **पित्तवर्धक**– कटु, अम्ल, लवण, क्षार, उष्ण, तीक्ष्ण द्रव्य।[५]

२२. **कफवर्धक**– स्निग्ध, गुरु, मधुर, सान्द्र, पिच्छिल द्रव्य।[६]

२३. **मूत्रजनन**– इक्षुरस, वारुणी, मण्ड, द्रव, मधुर, अम्ल, लवण, उपक्लेदी द्रव्य।[७]

२४. **पुरीषजनन**– कुल्माष, माष, कुक्कुटाण्ड, अजमध्य, शाक, धान्याम्ल।[८]

---

१. तस्यावजयनं–स्नेहस्वेदौ विधियुक्तौ, मृदूनि च संशोधनानि स्नेहोष्णमधुराम्ललवणयुक्तानि, तद्वदभ्यवहार्याणि, अभ्यङ्गोपनाहनोद्वेष्टनोन्मर्दनपरिषेकावगाहनसंवाहनावपीडनावित्रासन-विस्मापनविस्मारणानि, सुरासवविधानं, स्नेहाश्चानेकयोनयो दीपनीयपाचनीयवातहर-विरेचनीयोपहितास्तथा शतपाकाः सहस्रपाकाः सर्वशश्च प्रयोगार्थाः, बस्तयः, बस्तिनियमः, सुखशीलता चेति। (च० वि० ६.१६)

२. तस्यावजयनं-सर्पिष्पानं, सर्पिषा च स्नेहनम्, अधश्च दोषहरणं, मधुरतिक्तकषायशीतानां चौषधाभ्यवहार्याणामुपयोगः, मृदुमधुरसुरभिशीतहृद्यानां गन्धानां चोपसेवा, मुक्तामणि-हारावलीनां च परमशिशिरवारिसंस्थितानां धारणमुरसा, क्षणे क्षणेऽग्र्यचन्दनप्रियङ्गु-कालीयमृणालशीतवातवारिभिरुत्पलकुमुदकोकनदसौगन्धिकपद्मानुगतैश्च वारिभिरभि-प्रोक्षणं...सेवनं च पद्मोत्पलनलिनकुमुदसौगन्धिकपुण्डरीकशतपत्रहस्तानां, सौम्यानां च सर्वभावानामिति। (च० वि० ६.१७)

३. तस्यावजयनं-विधियुक्तानि तीक्ष्णोष्णानि संशोधनानि, रूक्षप्रायाणि चाभ्यवहार्याणि कटुतिक्तकषायोपहितानि, ...विशेषतस्तीक्ष्णानां दीर्घकालस्थितानां च मद्यानामुपयोगः, सधूमपानः सर्वशश्चोपवासः, तथोष्णं वासः, सुखप्रतिषेधश्च सुखार्थमेव। (च० वि० ६.१८)

४. वातक्षये कटुकतिक्तकषायरूक्षलघुशीतानाम्। (च० शा० ६.११)

५. पित्तक्षयेऽम्ललवणकटुकक्षारोष्णतीक्ष्णानाम्। (च० शा० ६.११)

६. श्लेष्मक्षये स्निग्धगुरुमधुरसान्द्रपिच्छिलानां द्रव्याणाम्। (च० शा० ६.११)

७. मूत्रक्षये पुनरिक्षुरसवारुणीमण्डद्रवमधुराम्ललवणोपक्लेदिनाम्। (च० शा० ६.११)

८. पुरीषक्षये कुल्माषमाषकुष्कुण्डाजमध्ययवशाकधान्याम्लानाम्। (च० शा० ६.११)

Scanned by CamScanner

२५. **गर्भोपघातकर–** तीक्ष्ण, उष्ण, लवण, अम्ल, गोधामांस, वराहमांस, मत्स्यमांस आदि।[१]

२६. **गर्भस्थापन–** यष्टीमधु, घृत, क्षीरीवृक्ष, कषायवृक्ष, पद्म-उत्पल- कुमुद किञ्जल्क, शृङ्गाटक, पुष्करबीज, कशेरुक, गन्धप्रियङ्गु, पद्ममूल, बला, अतिबला, शालि, षष्टिक, इक्षुमूल, काकोली, रक्तशालि, लाव, कपिञ्जल, कुरङ्ग, हरिण का मांसरस आदि।[२]

२७. **गर्भवृद्धिकर–** भूतघ्न, जीवनीय, बृंहणीय, मधुर, वातहर द्रव्य, घृत, दुग्ध, आमगर्भ।[३]

२८. **गर्भप्रसुप्तिनिवारक (गर्भस्पन्दक)–** श्येन, मत्स्य, गवय, तित्तिर, ताम्रचूड, मयूर का मांसरस, घृत, माष, मूलकयूष, मृदु, मधुर, शीतद्रव्य।[४]

२९. **गर्भानुलोमन–** कुष्ठ, एला, लाङ्गली, वचा, चित्रक, चिरबिल्व, भूर्ज, शिंशपा।[५]

३०. **अपरापातन–** भूर्जपत्र, काचमणि, सर्पनिर्मोक, कुष्ठ, तालीश, कुलत्थ, मण्डूकपर्णी, पिप्पली, सूक्ष्मैला, देवदारु, शुण्ठी, विडङ्ग, कालागुरु, चव्य, चित्रक, उपकुञ्चिका, वृषभ या खर का कर्ण, आस्थापन आदि।[६]

---

१. तीक्ष्णोष्णातिमात्रसेविन्या...गर्भो म्रियतेऽन्तः कुक्षेः... मद्यनित्या पिपासालुमल्प-स्मृतिमनवस्थितचित्तं वा, गोधामांसप्राया शार्करिणमश्मरिणं शनैर्मेहिणं वा, वराहमांसप्राया रक्ताक्षं क्रथनमतिपरुषरोमाणं वा, मत्स्यमांसनित्या चिरनिमेषं स्तब्धाक्षं वा...यद्यच्च यस्य यस्य व्याधेर्निदानमुक्तं तत्तदासेवमानाऽन्तर्वत्नी तन्निमित्तविकारबहुलमपत्यं जनयति।
(च० शा० ८.२१)

२. ....तस्या गर्भस्थापनविधिमुपदेक्ष्यामः- पुष्पदर्शनादेवैनां ब्रूयात्...तथाऽस्या गर्भस्तिष्ठति।
(च० शा० ८.२४)

३. ....भौतिकजीवनीयबृंहणीयमधुरवातहरसिद्धानां सर्पिषां पयसामामगर्भाणां चोपयोगो गर्भवृद्धिकरः; तथा संभोजनमेतैरेव सिद्धैश्च घृतादिभिः सुभिक्षायाः। (च० शा० ८.२७)

४. यस्याः पुनर्गर्भः प्रसुप्तो न स्पन्दते तां श्येनमत्स्यगवयशिखिताम्रचूडतित्तिरीणामन्यतमस्य सर्पिष्मता रसेन माषयूषेण वा प्रभूतसर्पिषा मूलकयूषेण वा रक्तशालीनामोदनं मृदुमधुरशीतलं भोजयेत्। (च० शा० ८.२८)

५. ...अथास्यै दद्यात् कुष्ठैलालाङ्गलिकीवचाचित्रकचिरबिल्वचव्यचूर्णमुपघ्रातुं, सा तन्मुहुर्मुहुरुपजिघ्रेत्, तथा भूर्जपत्रधूमं शिंशपासारधूमं वा। ...अनेन कर्मणा गर्भोऽवाक् प्रतिपद्यते। (च० शा० ८.३८)

६. ...तस्याश्चेदपरा न प्रपन्ना स्यादथैनामन्यतमा....वायोरनुलोमगमनात्। (च० शा० ८.४१)

Scanned by CamScanner

३१. **नाभिपाकहर**– लोध्र, मधुक, प्रियङ्गु, दारुहरिद्रा।[१]

३२. **रक्षाकर (रक्षोघ्न)**– खदिर, कर्कन्धु, पीलु, परूषक, सर्षप, अतसी, बकुल, वचा, कुष्ठ, क्षौमिक, हिंगु, लशुन, तिन्दुक, यव, चोरपुष्पी, वय:स्था, जटामांसी, कुटकी, सर्पनिर्मोक आदि।[२]

३३. **शकुन**– दधि, अक्षत, रत्न, मोदक, श्वेतपुष्प, चन्दन, मनोज्ञ अन्नपान, प्रियङ्गु, घृत, सिद्धार्थ, रोचना, सुगन्ध, शुक्लवर्ण, मधुररस आदि।[३]

*

---

१. ...तस्य चेन्नाभिः पच्येत, तां लोध्रमधुकप्रियङ्गुसुरदारुहरिद्राकल्कसिद्धेन तैलेनाभ्यज्यात्, एषामेव तैलौषधानां चूर्णेनावचूर्णयेत्। (च० शा० ८.४४)

२. अथास्य रक्षां विदध्यात्- आदानीखदिरकर्कन्धुपीलुपरूषकशाखाभिरस्या गृहं समन्ततः परिवारयेत्। सर्वतश्च सूतिकागारस्य सर्षपातसीतण्डुलकणकणिकाः प्रकिरेयुः ...रक्षाविधानमुक्तम्। (च० शा० ८.४७)

३. दध्यक्षतद्विजातीनां वृषभाणां नृपस्य च। रत्नानां पूर्णकुम्भानां सितस्य तुरगस्य च।।.....विद्यादारोग्यलक्षणम्। (च० इ० १२.७१-७९)

Scanned by CamScanner

षष्ठ अध्याय

सुश्रुतोक्त गण

सुश्रुत ने संक्षेपतः द्रव्यो के ३७ वर्ग बनाये हैं।[१] ये वर्ग यद्यपि कर्मानुसार निर्धारित हैं, तथापि उनका नामकरण मुख्य द्रव्य के आधार पर किया गया है यथा-

१. **विदारिगन्धादि**- शालपर्णी, विदारी, नागबला, अतिबला, गोक्षुर, पृश्निपर्णी, शतावरी, सारिवा, कृष्णसारिवा, जीवक, ऋषभक, माषपर्णी, मुद्गपर्णी, बृहतीद्वय, पुनर्नवा, एरण्ड, हंसपदी, वृश्चिकाली, कपिकच्छू।[२]

२. **आरग्वधादि**- आरग्वध, मदनफल, गोपघोण्टा, कुटज, पाठा, विकंकत, पाटला, मूर्वा, इन्द्रयव, सप्तपर्ण, निम्ब, पीत सैरेयक, नील सैरयेक, गुडूची, चित्रक, शार्ङ्गेष्टा, करञ्ज, पूतीक, पटोल, चिरायता, करैला।[३]

३. **सालसारादि**- सालसार, सर्ज, खदिर, श्वेतखदिर, तिन्दुकभेद, क्रमुक, भूर्ज, मेषशृङ्ग, तिनिश, चन्दन, रक्तचन्दन, शिंशपा, शिरीष, असन, धव, अर्जुन, ताल, शाक, नक्तमाल, पूतिकरंज, अश्वकर्ण, अगुरु, पीतचन्दन।[४]

४. **वरुणादि**- वरुण, आर्तगल, शोभाञ्जन, मधुशिग्रु, तर्कारी, मेषशृङ्गी, पूतीक, नक्तमाल, मोरट, अग्निमन्थ, नील और पीत सैरेयक, बिम्बी, वसुक, अपामार्ग, चित्रक, शतावरी, बिल्व, अजशृङ्गी, दर्भ, बृहतीद्वय।[५]

५. **वीरतर्वादि**- वीरतरु, नील और पीत सैरेयक, दर्भ, वन्दाक, गुन्द्रा, नल, कुश, काश, पाषाणभेद, अग्निमन्थ, मोरट, वसुक, अपामार्ग, श्योनाक, शितिवार, शितिवारभेद, सुवर्चला, गोक्षुर।[६]

---

१. समासेन सप्तत्रिंशद् द्रव्यगणा भवन्ति। (सु० सू० ३८.३)

२. विदारिगन्धा विदारी विश्वदेवा सहदेवा श्वदंष्ट्रा पृथक्पर्णी शतावरी सारिवा कृष्णसारिवा जीवकर्षभकौ महासहा क्षुद्रसहा बृहत्यौ पुनर्नवैरण्डो हंसपादी वृश्चिकाल्यृषभी चेति। (सु० सू० ३८.४)

३. आरग्वधमदनगोपघोण्टाकण्टकीकुटजपाठापाटलामूर्वेन्द्रयवसप्तपर्णनिम्बकुरुण्टकदासी-कुरुण्टकगुडूचीचित्रकशार्ङ्ग(ङ्गे)ष्टाकरञ्जद्वयपटोलकिराततिक्तकानि सुषवी चेति। (सु० सू० ३८.६)

४. सालसाराजकर्णखदिरकदरकालस्कन्धक्रमुकभूर्जमेषशृङ्गतिनिशचन्दनकुचन्दनशिंश-पाशिरीषासनधवार्जुनतालशाकनक्तमालपूतीकाश्वकर्णागुरूणि कालीयकं चेति। (सु० सू० ३८.८)

५. वरुणार्तगलशिग्रुमधुशिग्रुतर्कारीमेषशृङ्गीपूतीकनक्तमालमोरटाग्निमन्थसैरेयकद्वयबिम्बी-वसुकवसिरचित्रकशतावरीबिल्वाजशृङ्गीदर्भा बृहतीद्वयं चेति। (सु० सू० ३८.१०)

६. वीरतरुसहचरद्वयदर्भवृक्षादनीगुन्द्रानलकुशकाशाश्मभेदकाग्निमन्थमोरटवसुकवसिर-भल्लूककुरण्टिकेन्दीवरकपोतवङ्काः श्वदंष्ट्रा चेति। (सु० सू० ३८.१२)

Scanned by CamScanner

६. **रोध्रादि**– रोध्र, सावर लोध्र, पलाश, श्योनाक, अशोक, फञ्जी, कट्फल, एलवालुक, शल्लकी, जिंगिणी, कदम्ब, शाल, कदली।[1]

७. **अर्कादि**– अर्क, अलर्क, करञ्ज, पूतीक, नागदन्ती, अपामार्ग, भार्ङ्गी, रास्ना, कलिहारी, श्वेता, महाश्वेता, वृश्चिकाली, ज्योतिष्मती, इङ्गुदी।[2]

८. **सुरसादि**– सुरसा (कृष्ण तुलसी), श्वेत तुलसी, फणिज्झक, अर्जक, भूस्तृण, गन्धतृण, राजिका, वर्वरी, कासमर्द, छिक्किका, खरपुष्प, विडङ्ग, कट्फल, सुरसी, निर्गुण्डी, मुण्डी, मूषाकर्णी, फञ्जी, काकजङ्घा, काकमाची, विषमुष्टि।[3]

९. **मुष्ककादि**– मुष्कक, पलाश, धव, चित्रक, मदन, कुटज, शिंशपा, स्नुही, त्रिफला।[4]

१०. **पिप्पल्यादि**– पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, चित्रक, शुण्ठी, मरिच, गजपिप्पली, हरेणुका, एला, अजमोदा, इन्द्रयव, पाठा, जीरा, सर्षप, महानिम्बफल, हिंगु, भार्ङ्गी, मधुरसा, अतिविषा, वचा, विडङ्ग, कुटकी।[5]

११. **एलादि**– एला, तगर, कुष्ठ, मांसी, रोहिष, त्वक्पत्र, नागपुष्प, प्रियङ्गु, हरेणुका, नखी (छोटी और बड़ी), चोरपुष्पी, थुनेर, श्रीवेष्टक, त्वक्, चोरक, एलवालुक, गुग्गुलु, सर्जरस, शिलारस, कुन्दुरु, अगुरु, स्रुक्का, उशीर, देवदारु, केशर, पुन्नागकेशर।[6]

१२. **वचादि**– वचा, मुस्ता, अतिविषा, हरीतकी, देवदारु, नागकेशर।[7]

१३. **हरिद्रादि**– हरिद्रा, दारुहरिद्रा, पृश्निपर्णी, इन्द्रयव, मुलेठी।[8]

---

१. रोध्रसावरलोध्रपलाशकुटन्नटाशोकफञ्जीकट्फलैलवालुकशल्लकीजिङ्गिनीकदम्बशालाः कदली चेति। (सु० सू० ३८.१४)

२. अर्कालर्ककरञ्जद्वयनागदन्तीमयूरकभार्गीरास्नेन्द्रपुष्पीक्षुद्रश्वेतामहाश्वेतावृश्चिकाल्यलवणास्तापसवृक्षश्चेति। (सु० सू० ३८.१६)

३. सुरसाश्वेतसुरसाफणिज्झकार्जकभूस्तृणसुगन्धकसुमुखकालमालकुठेरककासमर्दक्षवकखरपुष्पाविडङ्गकट्फलसुरसीनिर्गुण्डीकुलाहलोन्दुरुकर्णिकाफञ्जीप्राचीबलकाकमाच्यो विषमुष्टिकश्चेति। (सु० सू० ३८.१८)

४. मुष्ककपलाशधवचित्रकमदनवृक्षकशिंशपावज्रवृक्षास्त्रिफला चेति। (सु० सू० ३८.२०)

५. पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकशृङ्गवेरमरिचहस्तिपिप्पलीहरेणुकैलाजमोदेन्द्रयवपाठाजीरकसर्षपमहानिम्बफलहिङ्गुभार्गीमधुरसातिविषावचाविडङ्गानि कटुरोहिणी चेति। (सु० सू० ३८.२२)

६. एलातगरकुष्ठमांसीध्यामकत्वक्पत्रनागपुष्पप्रियङ्गुहरेणुकाव्याघ्रनखशुक्तिचण्डास्थौणेयकश्रीवेष्टकचोचचोरकवालुकगुग्गुलुसर्जरसतुरुष्ककुन्दुरुकागुरुस्रुक्कोशीरभद्रदारुकुङ्कुमानि पुन्नागकेशरं चेति। (सु० सू० ३८.२४)

७. वचामुस्तातिविषाभयाभद्रदारूणि नागकेशरं चेति। (सु० सू० ३८.२६)

८. हरिद्रादारुहरिद्राकलशीकुटजबीजानि मधुकं चेति। (सु० सू० ३८.२७)

Scanned by CamScanner

१४. **श्यामादि**– श्यामा, महाश्यामा (विधारा), त्रिवृत्, दन्ती, शङ्खिनी, तिल्वक, कम्पिल्लक, महानिम्ब, क्रमुक, द्रवन्ती, इन्द्रायण, आरग्वध, करञ्ज, पूतीकरञ्ज, गुडूची, सप्तला, वृद्धदारुकभेद, स्नुही, स्वर्णक्षीरी।[१]

१५. **बृहत्यादि**– बृहती, कंटकारी, इन्द्रयव, पाठा, मुलेठी।[२]

१६. **पटोलादि**– पटोल, चन्दन, रक्तचन्दन, मूर्वा, गुडूची, पाठा, कुटकी।[३]

१७. **काकोल्यादि**– काकोली, क्षीरकाकोली, जीवक, ऋषभक, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, मेदा, महामेदा, गुडूची, कर्कटशृङ्गी, वंशलोचन, पद्मक, प्रपौण्डरीक, ऋद्धि, वृद्धि, मृद्वीका, जीवन्ती, मुलेठी।[४]

१८. **ऊषकादि**– ऊषक (क्षारविशेष), सैन्धव, शिलाजतु, कासीसद्वय, हिंगु, तुत्थ।[५]

१९. **सारिवादि**– सारिवा, मुलेठी, चन्दन, रक्तचन्दन, पद्मक, गम्भारीफल, मधूकपुष्प, उशीर।[६]

२०. **अञ्जनादि**– सौवीराञ्जन, रसाञ्जन, नागकेशर, प्रियङ्गु, नीलोत्पल, मांसी, पद्मकेशर, मुलेठी।[७]

२१. **परूषकादि**– परूषक, द्राक्षा, कट्फल, दाडिम, राजादन, निर्मलीफल, शाकफल, त्रिफला।[८]

२२. **प्रियंग्वादि**– प्रियङ्गु, लज्जालु, धातकी, पुन्नाग, नागकेशर, चन्दन, रक्तचन्दन, मोचरस, रसाञ्जन, कुम्भीक, स्रोतोञ्जन, पद्मकेशर, मञ्जिष्ठा, धन्वयास।[९]

---

१. श्यामामहाश्यामात्रिवृद्दन्तीशङ्खिनीतिल्वककम्पिल्लकरम्यकक्रमुकपुत्रश्रेणीगवाक्षीराजवृक्ष-करञ्जद्वयगुडूचीसप्तलाच्छगलान्त्रीसुधाः स्वर्णक्षीरी चेति। (सु० सू० ३८.२९)

२. बृहतीकण्टकारिकाकुटजफलपाठा मधुकं चेति। (सु० सू० ३८.३१)

३. पटोलचन्दनकुचन्दनमूर्वागुडूचीपाठाः कटुरोहिणी चेति। (सु० सू० ३८.३३)

४. काकोलीक्षीरकाकोलीजीवकर्षभकमुद्गपर्णीमाषपर्णीमेदामहामेदाच्छिन्नरुहाकर्कटशृङ्गीतुगा-क्षीरीपद्मकप्रपौण्डरीकर्धिवृद्धिमृद्वीकाजीवन्त्यो मधुकं चेति। (सु० सू० ३८.३५)

५. ऊषकसैन्धवशिलाजतुकासीसद्वयहिङ्गूनि तुत्थकं चेति। (सु० सू० ३८.३७)

६. सारिवामधुकचन्दनकुचन्दनपद्मककाश्मरीफलमधूकपुष्पाण्युशीरं चेति। (सु० सू० ३८.३९)

७. अञ्जनरसाञ्जननागपुष्पप्रियङ्गुनीलोत्पलनलदनलिनकेशराणि मधुकं चेति। (सु० सू० ३८.४१)

८. परूषकद्राक्षाकट्फलदाडिमराजादनकतकफलशाकफलानि त्रिफला चेति। (सु० सू० ३८.४३)

९. प्रियङ्गुसमङ्गाधातकीपुन्नागनागपुष्पचन्दनकुचन्दनमोचरसरसाञ्जनकुम्भीकस्रोतोजपद्म-केसरयोजनवल्ल्यो दीर्घमूला चेति। (सु० सू० ३८.४५)

Scanned by CamScanner

२३. **अम्बष्ठादि**– अम्बष्ठा, धातकीपुष्प, लज्जालु, अरलु, मुलेठी, बिल्व, सावररोध्र, पलाश, नन्दीवृक्ष, पद्मकेशर।[१]

२४. **न्यग्रोधादि**– न्यग्रोध, उदुम्बर, अश्वत्थ, प्लक्ष, मधुक, आम्रातक, अर्जुन, आम्र, कोशाम्र, चोरकपत्र (लाक्षावृक्ष), जम्बूद्वय, प्रियाल, मधूक, कट्फल, वेतस, कदम्ब, बदरी, तिन्दुक, शल्लकी, रोध्र, शाबररोध्र, भल्लातक, पलाश, नन्दीवृक्ष।[२]

२५. **गुडूच्यादि**– गुडूची, निम्ब, धान्यक, चन्दन, पद्मक।[३]

२६. **उत्पलादि**– नीलोत्पल, रक्तोत्पल, श्वेतोत्पल, सौगन्धिक, कुवलय, पुण्डरीक, मधुक।[४]

२७. **मुस्तादि**– मुस्ता, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, हरीतकी, आमलक, बिभीतक, कुष्ठ, श्वेत वचा, वचा, पाठा, कुटकी, शार्ङ्गेष्टा, अतिविषा, एला, भल्लातक, चित्रक।[५]

२८. **त्रिफला**– हरीतकी, आमलक, बिभीतक।[६]

२९. **त्रिकटु**– पिप्पली, मरिच, शुण्ठी।[७]

३०. **आमलक्यादि**– आमलकी, हरीतकी, पिप्पली, चित्रक।[८]

३१. **त्रप्वादि**– वङ्ग, नाग, ताम्र, रजत, सुवर्ण, लोह, मण्डूर।[९]

३२. **लाक्षादि**– लाक्षा, आरग्वध, कुटज, करवीर, कट्फल, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, निम्ब, सप्तपर्ण, जाती, त्रायमाणा।[१०]

---

१. अम्बष्ठाधातकीकुसुमसमङ्गाकट्वङ्गमधुकबिल्वपेशिकासाववरोध्रपलाशनन्दीवृक्षाः पद्मकेशराणि चेति। (सु० सू० ३८.४६)

२. न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थप्लक्षमधुककपीतनककुभाम्रकोशाम्रचोरकपत्रजम्बूद्वयप्रियालमधूकरोहिणीवञ्जुलकदम्बबदरीतिन्दुकीशल्लकीरोध्रसाववरोध्रभल्लातकपलाशा नन्दीवृक्षश्चेति। (सु० सू० ३८.४८)

३. गुडूचीनिम्बकुस्तुम्बुरुचन्दनानि पद्मकं चेति। (सु० सू० ३८.५०)

४. उत्पलरक्तोत्पलकुमुदसौगन्धिककुवलयपुण्डरीकाणि मधुकं चेति। (सु० सू० ३८.५२)

५. मुस्ताहरिद्रादारुहरिद्राहरीतक्यामलकबिभीतककुष्ठहैमवतीवचापाठाकटुरोहिणीशार्ङ्गेष्टातिविषाद्राविडीभल्लातकानि चित्रकश्चेति। (सु० सू० ३८.५४)

६. हरीतक्यामलकबिभीतकानीति त्रिफला। (सु० सू० ३८.५६)

७. पिप्पलीमरिचशृङ्गवेराणीति त्रिकटुकम्। (सु० सू० ३८.५८)

८. आमलकीहरीतकीपिप्पल्यश्चित्रकश्चेति। (सु० सू० ३८.६०)

९. त्रपुसीसताम्ररजतसुवर्णकृष्णलोहानि लोहमलश्चेति। (सु० सू० ३८.६२)

१०. लाक्षारेवतकुटजाश्वमारकट्फलहरिद्राद्वयनिम्बसप्तच्छदमालत्यस्त्रायमाणा चेति। (सु० सू० ३८.६४)

Scanned by CamScanner

पञ्चपञ्चमूल

३३. **लघुपञ्चमूल**– गोक्षुर, बृहती, कंटकारी, पृश्निपर्णी, शालपर्णी।[१]

३४. **बृहत् पञ्चमूल**– बिल्व, अग्निमन्थ, श्योनाक, पाटला, गम्भारी।[२]

३५. **वल्लीपञ्चमूल**– विदारी, सारिवा, मंजिष्ठा, गुडूची, मेषशृङ्गी।[३]

३६. **कण्टकपञ्चमूल**– करमर्द, गोक्षुर, सैरेयक, शतावरी, हिंस्रा।[४]

३७. **तृणपञ्चमूल**– कुश, काश, नल, दर्भ, काण्डेक्षु।[५]

उपर्युक्त कुछ गणों में रचना का भी आधार लिया गया है, इनका विस्तृत विवेचन गणों के प्रकरण में किया जायगा।

सुश्रुतोक्त ३७ गणों के कर्म और प्रयोग

सं०	गण	कर्म	प्रयोग
१.	विदारिगन्धादि	पित्तवातहर, बृंहण, अङ्गमर्द-प्रशमन, श्वासहर, कासहर	शोष, गुल्म, अङ्गमर्द, ऊर्ध्वश्वास, कास
२.	आरग्वधादि	कफघ्न, विषघ्न, कुष्ठघ्न, ज्वरघ्न, कण्डूघ्न, छर्दि-निग्रहण, व्रणशोधन	प्रमेह, कुष्ठ, ज्वर, छर्दि, कण्डू, व्रण, विष
३.	सालसारादि	कफघ्न, मेदोहर, कुष्ठघ्न	कुष्ठ, प्रमेह, पाण्डु, मेदोरोग
४.	वरुणादि	कफघ्न, मेदोहर	शिरःशूल, गुल्म, आभ्यन्तर विद्रधि
५.	वीरतर्वादि	वातहर, मूत्रजनन, अश्मरी-भेदन	वातव्याधि, अश्मरी-शर्करा, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात
६.	रोध्रादि	कफघ्न, मेदोहर, वर्ण्य, विषघ्न, स्तम्भन	योनिविकार, विष, मेदोरोग

क्रमशः..

१. त्रिकण्टकबृहतीद्वयपृथक्पर्ण्यो विदारिगन्धा चेति कनीयः। (सु० सू० ३८.६६)

२. बिल्वाग्निमन्थटिण्टुकपाटलाः काश्मरी चेति महत्। (सु० सू० ३८.६८)

३. विदारीसारिवारजनीगुडूच्योऽजशृङ्गी चेति वल्लीसंज्ञः। (सु० सू० ३८.७२)
(यहाँ 'रजनी' शब्द से कुछ लोग हरिद्रा लेते हैं किन्तु वह वल्ली नहीं है। अतः मंजिष्ठा उपयुक्त है, यह रञ्जनकर्म में प्रयुक्त भी होती है।)

४. करमर्दीत्रिकण्टकसैरेयकशतावरीगृध्रनख्य इति कण्टकसंज्ञः। (सु० सू० ३८.७३)

५. कुशकाशनलदर्भकाण्डेक्षुका इति तृणसंज्ञकः। (सु० सू० ३८.७५)

Scanned by CamScanner

गण	कर्म	प्रयोग
अर्कादि	कफघ्न, मेदोहर, विषघ्न, व्रणशोधन, कुष्ठघ्न, कृमिघ्न	कृमि, कुष्ठ, व्रण, मेदोरोग, विष
सुरसादि	कफघ्न, कृमिघ्न, श्वासहर, कासहर, व्रणशोधन	क्रिमि, प्रतिश्याय, अरुचि, श्वास, कास, व्रण
मुष्ककादि	मेदोहर, शुक्रशोधन, अश्मरीभेदन	मेदोरोग, शुक्रविकार, अश्मरी, प्रमेह, अर्श, पाण्डु
पिप्पल्यादि	कफघ्न, वातहर, दीपन, शूलप्रशमन, आमपाचन	प्रतिश्याय, अरुचि, गुल्म, शूल, आमदोष, वातकफरोग
एलादि	वातश्लेष्महर, विषघ्न, वर्ण्य, कण्डूघ्न	कण्डू, पिडका, कोठ, विष
वचादि हरिद्रादि	स्तन्यशोधन, दोषपाचन	स्तन्यविकार, आमातिसार
श्यामादि	भेदन, अनुलोमन, विषघ्न	गुल्म, आनाह, उदर, उदावर्त, विष
बृहत्यादि	त्रिदोषहर, पाचन, मूत्रजनन	अरुचि, हल्लास, मूत्रकृच्छ्र
पटोलादि	कफपित्तशमन, ज्वरहर, व्रण्य	अरुचि, ज्वर, व्रण, छर्दि, कण्डू, विष
काकोल्यादि	वातपित्तहर, रक्तशामक, जीवनीय, बृंहण, वृष्य, स्तन्यजनन, कफकारक	दौर्बल्य, काश्र्य, स्तन्यविकार, रक्तपित्त
ऊषकादि	कफमेदोहर, मूत्रजनन	मेदोरोग, अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र, गुल्म
सारिवादि	रक्तपित्तशमन, तृष्णाहर, दाहशमन, ज्वरघ्न	रक्तपित्त, तृष्णा, दाह, पित्तज्वर
अञ्जनादि	रक्तपित्तहर, विषघ्न, दाहप्रशमन	रक्तपित्त, विष, दाह
परूषकादि	वातहर, हृद्य, तृष्णाहर, रोचन, मूत्रजनन	मूत्रकृच्छ्र, हृद्रोग, तृष्णा, अरुचि
प्रियङ्ग्वादि अम्बष्ठादि	पित्तहर, स्तम्भन, संधानीय, व्रणरोपण	पक्वातीसार, व्रण, रक्तपित्त
न्यग्रोधादि	संग्राही, सन्धानीय, व्रण्य, रक्तपित्तशमन, दाहप्रशमन, मेदोहर	व्रण, अस्थिभग्न, रक्तपित्त, दाह, प्रमेह, योनिविकार

क्रमशः....

Scanned by CamScanner

सं०	गण	कर्म	प्रयोग
२५.	गुडूच्यादि	ज्वरहर, दीपन, तृष्णाहर, दाहशमन	हल्लास, अरुचि, छर्दि, तृष्णा, दाह
२६.	उत्पलादि	दाहप्रशमन, रक्तपित्तहर, तृष्णाहर, विषघ्न, हृद्य	दाह, रक्तपित्त, तृष्णा, विष, छर्दि, हृद्रोग, मूर्च्छा
२७.	मुस्तादि	कफहर, स्तन्यशोधन, पाचन	योनिविकार, स्तन्यदोष, आमदोष
२८.	त्रिफला	कफपित्तहर, कुष्ठघ्न, दीपन, चक्षुष्य, विषमज्वरहर	प्रमेह, कुष्ठ, नेत्ररोग, अग्निमान्द्य, विषमज्वर
२९.	त्रिकटु	कफहर, मेदोहर, कुष्ठघ्न, दीपन	प्रमेह, कुष्ठ, त्वग्रोग, गुल्म, पीनस, मन्दाग्नि
३०.	आमलक्यादि	कफघ्न, रोचन, ज्वरहर, दीपन, वृष्य, चक्षुष्य	ज्वर, नेत्ररोग, अरुचि, उदरविकार
३१.	त्रप्वादि	क्रिमिघ्न, विषघ्न, हृद्य	गरदोष, क्रिमि, तृष्णा, विष, हृद्रोग, पाण्डु, प्रमेह
३२.	लाक्षादि	कषाय-तिक्त-मधुर, कफ-पित्तहर, कुष्ठघ्न, क्रिमिघ्न, व्रणशोधन	कुष्ठ, क्रिमि, दुष्टव्रण
३३.	लघुपञ्चमूल	कषाय-तिक्त-मधुर, वात-पित्तहर, बृंहण, बल्य	श्वास, त्रिदोषविकार, आमदोष, ज्वर
३४.	बृहत्पञ्चमूल	तिक्त-मधुर-कटु, कफ-वातहर, दीपन	
३५.	वल्लीपञ्चमूल	कफघ्न, रक्तपित्तशमन, शोथहर, शुक्रशोधन	रक्तपित्त, शोथ, प्रमेह, शुक्रदोष
३६.	कण्टकपञ्चमूल		
३७.	तृणपञ्चमूल	रक्तपित्तशमन, मूत्रजनन	रक्तपित्त, मूत्रकृच्छ्र[१]

१. विदारिगन्धादिरयं गणः पित्तानिलापहः। शोषगुल्माङ्गमर्दोर्ध्वश्वासकासविनाशनः।।
आरग्वधादिरित्येष गणः श्लेष्मविषापहः। मेहकुष्ठज्वरवमीकण्डूघ्नो व्रणशोधनः।।
सालसारादिरित्येष गणः कुष्ठविनाशनः। मेहपाण्ड्वामयहरः कफमेदोविशोषणः।।
वरुणादिर्गणो ह्येष कफमेदोनिवारणः। विनिहन्ति शिरःशूलगुल्माभ्यन्तरविद्रधीन्।।
वीरतर्वादिरित्येष गणो वातविकारनुत्। अश्मरीशर्करामूत्रकृच्छ्राघातरुजापहः।।
एष रोध्रादिरित्युक्तो मेदःकफहरो गणः। योनिदोषहरः स्तम्भी वर्ण्यो विषविनाशनः।।

क्रमशः ...

Scanned by CamScanner

अर्कादिको गणो ह्येष कफमेदोविषापहः। कृमिकुष्ठप्रशमनो विशेषाद् व्रणशोधनः।।
सुरसादिर्गणो ह्येष कफहत् कृमिसूदनः। प्रतिश्यायारुचिश्वासकासघ्नो व्रणशोधनः।।
मुष्ककादिर्गणो ह्येष मेदोघ्नः शुक्रदोषहत्। मेहार्शःपाण्डुरोगाश्मशर्करानाशनः परः।।
पिप्पल्यादिः कफहरः प्रतिश्यायानिलारुचीः। निहन्याद्दीपनो गुल्मशूलघ्नश्चामपाचनः।।
एलादिको वातकफौ निहन्याद्विषमेव च। वर्णप्रसादनः कण्डूपिडकाकोठनाशनः।।
एतौ वचाहरिद्रादी गणौ स्तन्यविशोधनौ। आमातिसारशमनौ विशेषाद्दोषपाचनौ।।
उक्तः श्यामादिरित्येष गणो गुल्मविषापहः। आनाहोदरविड्भेदी तथोदावर्तनाशनः।।
पाचनीयो बृहत्यादिर्गणः पित्तानिलापहः। कफारोचकहल्लासमूत्रकृच्छ्ररुजापहः।।
पटोलादिर्गणः पित्तकफारोचकनाशनः। ज्वरोपशमनो व्रण्यश्छर्दिकण्डूविषापहः।।
काकोल्यादिरयं पित्तशोणितानिलनाशनः। जीवनो बृंहणो वृष्यः स्तन्यश्लेष्मकरस्तथा।।
ऊषकादिः कफं हन्ति गणो मेदोविशोषणः। अश्मरीशर्करामूत्रकृच्छ्रगुल्मप्रणाशनः।।
सारिवादिः पिपासाघ्नो रक्तपित्तहरो गणः। पित्तज्वरप्रशमनो विशेषाद्दाहनाशनः।।
अञ्जनादिर्गणो ह्येष रक्तपित्तनिबर्हणः। विषोपशमनो दाहं निहन्त्याभ्यन्तरं भृशम्।।
परूषकादिरित्येष गणोऽनिलविनाशनः। मूत्रदोषहरो हृद्यः पिपासाघ्नो रुचिप्रदः।।
गणौ प्रियङ्ग्वम्बष्ठादी पक्वातीसारनाशनौ। सन्धानीयौ हितौ पित्ते व्रणानां चापि रोपणौ।।
न्यग्रोधादिर्गणो व्रण्यः संग्राही भग्नसाधकः। रक्तपित्तहरो दाहमेदोघ्नो योनिदोषहृत्।।
एष सर्वज्वरान् हन्ति गुडूच्यादिस्तु दीपनः। हल्लासारोचकवमीपिपासादाहनाशनः।।
उत्पलादिरयं दाहपित्तरक्तविनाशनः। पिपासाविषहृद्रोगच्छर्दिमूर्च्छाहरो गणः।।
एष मुस्तादिको नाम्ना गणः श्लेष्मनिषूदनः। योनिदोषहरः स्तन्यशोधनः पाचनस्तथा।।
त्रिफला कफपित्तघ्नी मेहकुष्ठविनाशनी। चक्षुष्या दीपनी चैव विषमज्वरनाशनी।।
त्र्यूषणं कफमेदोघ्नं मेहकुष्ठत्वगामयान्। निहन्याद्दीपनं गुल्मपीनसाग्न्यल्पतामपि।।
आमलक्यादिरित्येष गणः सर्वज्वरापहः। चक्षुष्यो दीपनो वृष्यः कफारोचकनाशनः।।
गणस्त्रप्वादिरित्येष गरक्रिमिहरः परः। पिपासाविषहृद्रोगपाण्डुमेहहरस्तथा।।
(लाक्षादिः) कषायतिक्तमधुरः कफपित्तार्तिनाशनः। कुष्ठक्रिमिहरश्चैव दुष्टव्रणविशोधनः।।
कषायतिक्तमधुरं कनीयः पञ्चमूलकम्। वातघ्नं पित्तशमनं बृंहणं बलवर्धनम्।।
सतिक्तं कफवातघ्नं पाके लघ्वग्निदीपनम्। मधुरानुरसं चैव पञ्चमूलं महत् स्मृतम्।।
अनयोर्दशमूलमुच्यते–
गणः श्वासहरो ह्येष कफपित्तानिलापहः। आमस्य पाचनश्चैव सर्वज्वरविनाशनः।।
वल्लीकण्टकपञ्चमूलगणौ–
रक्तपित्तहरौ ह्येतौ शोफत्रयविनाशनौ। सर्वमेहहरौ चैव शुक्रदोषविनाशनौ।।
तृणपञ्चमूलम्–
मूत्रदोषविकारं च रक्तपित्तं तथैव च। अन्त्यः प्रयुक्तः क्षीरेण शीघ्रमेव विनाशयेत्।।
एषां वातहरावाद्यावन्त्यः पित्तविनाशनः। पञ्चकौ श्लेष्मशमनावितरौ परिकीर्तितौ।।
(सु० सू० ३८.५,७,९,११,१३,१५,१७,१९,२१,२३,२५,२८,३०,३२,३४,३६,३८, ४०,४२, ४४,४७,४९,५१,५३,५५,५७,५९,६१,६३,६५,६७,६९,७०-७१,७४,७६-७७)

Scanned by CamScanner

इसके अतिरिक्त, संशोधन और संशमन की दृष्टि से निम्नाङ्कित वर्ग किये गये हैं–

१. ऊर्ध्वभागहर[१]

द्रव्य	प्रयोज्य अङ्ग	द्रव्य	प्रयोज्य अङ्ग	द्रव्य	प्रयोज्य अङ्ग
मदन	फल	कुटज	फल	देवदाली	फल
कटुतुम्बी	,,	धामार्गव	,,	कृतवेधन	,,
सर्षप	,,	विडङ्ग	,,	पिप्पली	,,
करञ्ज	,,	चक्रमर्द	,,	कोविदार	मूल
कर्बुदार	मूल	निम्ब	मूल	अश्वगन्धा	,,
वेतस	,,	बन्धुजीवक	,,	श्वेतवचा	,,
शणपुष्पी	,,	बिम्बी	,,	वचा	,,
इन्द्रायण	,,	चित्रा (इन्द्रायणभेद)	,,		

२. अधोभागहर[२]

द्रव्य	प्रयोज्य अङ्ग	द्रव्य	प्रयोज्य अङ्ग	द्रव्य	प्रयोज्य अङ्ग
त्रिवृत्	मूल	श्यामा	मूल	दन्ती	मूल
द्रवन्ती	,,	सप्तला	,,	शङ्खिनी	,,
मेषशृङ्गी	,,	इन्द्रायण	,,	विधारा भेद	,,
स्नुही	,,	स्वर्णक्षीरी	,,	चित्रक	,,
किणिही	,,	कुश	,,	काश	,,
तिल्वक	त्वक्	महानिम्ब	त्वक्	पाटला	त्वक्
कम्पिल्लक	फलरज	पूग	फल	हरीतकी	फल
आमलक	फल	बिभीतक	,,	नीलिनी	,,
आरग्वध	फल, पत्र	एरण्ड	,,	पूतिकरंज	पत्र
स्नुही	क्षीर	सप्तपर्ण	क्षीर	अर्क	क्षीर
ज्योतिष्मती	,,				

१. मदनकुटजजीमूतकेक्ष्वाकुधामार्गवकृतवेधनसर्षपविडङ्गपिप्पलीकरञ्जप्रपुन्नाडकोविदार-कर्बुदारारिष्टाश्वगन्धाविदुलबन्धुजीवकश्वेताशणपुष्पीबिम्बीवचामृगेर्वारवश्चित्रा चेत्यूर्ध्वभाग-हराणि। तत्र, कोविदारपूर्वाणां फलानि कोविदारादीनां मूलानि। (सु० सू० ३९.३)

२. त्रिवृताश्यामादन्तीद्रवन्तीसप्तलाशङ्खिनीविषाणिकागवाक्षीच्छगलान्त्रीस्नुक्सुवर्णक्षीरीचित्र-ककिणिहीकुशकाशतिल्वककम्पिल्लकरम्यकपाटलापूगहरीतक्यामलकबिभीतकनीलिनी-चतुरङ्गलैरण्डपूतीकमहावृक्षसप्तच्छदार्का ज्योतिष्मती चेत्यधोभागहराणि। तत्र तिल्वक-पूर्वाणां मूलानि, तिल्वकादीनां पाटलान्तानां त्वचः, कम्पिल्लकफलरजः, पूगादीना-मेरण्डान्तानां फलानि, पूतीकारग्वधयोः पत्राणि, शेषाणां क्षीराणीति। (सु० सू० ३९.४)

Scanned by CamScanner

३. उभयतोभागहर[1]

द्रव्य	प्रयोज्य अङ्ग	द्रव्य	प्रयोज्य अङ्ग	द्रव्य	प्रयोज्य अङ्ग
कोशातकी	स्वरस	सप्तला	स्वरस	शङ्खिनी	स्वरस
देवदाली	,,	कारवेल्लिका	,,		

४. शिरोविरेचन[2]

द्रव्य	प्रयोज्य अङ्ग	द्रव्य	प्रयोज्य अङ्ग	द्रव्य	प्रयोज्य अङ्ग
पिप्पली	फल	विडङ्ग	फल	अपामार्ग	फल
शिग्रु	,,	सिद्धार्थक	,,	शिरीष	,,
मरिच	,,	करवीर	मूल	बिम्बी	मूल
अपराजिता	मूल	किणिही	,,	वचा	,,
ज्योतिष्मती	,,	करञ्ज	,,	अर्क	,,
अलर्क	,,	लशुन	कन्द	अतिविषा	कन्द
शृङ्गवेर	कन्द	तालीश	पत्र	तमाल	पत्र
तुलसी	पत्र	अर्जक	,,	इङ्गुदी	त्वक्
मेषशृङ्गी	त्वक्	मातुलुङ्गी	पुष्प	शिग्रु	पुष्प
पीलु	पुष्प	जाती	,,	शाल	सार
ताल	सार	मधूक	सार	लाक्षा	निर्यास
हिंगु	निर्यास	लवण		मद्य	
गोशकृद्रस		गोमूत्र			

१. कोशातकी सप्तला शङ्खिनी देवदाली कारवेल्लिका चेत्युभयतोभागहराणि। एषां स्वरसा इति।। (सु० सू० ३९.५)

२. पिप्पलीविडङ्गापामार्गशिग्रुसिद्धार्थकशिरीषमरिचकरवीरबिम्बीगिरिकर्णिकाकिणिहीवचा-ज्योतिष्मतीकरञ्जार्कालर्कलशुनातिविषाशृङ्गवेरतालीशतमालसुरसार्जकेङ्गुदीमेषशृङ्गीमातु-लुङ्गीमुरङ्गीपीलुजातीशालतालमधूकलाक्षाहिङ्गुलवणमद्यगोशकृद्रसमूत्राणीति शिरोविरेच-नानि। तत्र करवीरपूर्वाणां फलानि, करवीरादीनामलर्कान्तानां मूलानि, तालीशपूर्वाणां कन्दाः, तालीशादीनामर्जकान्तानां पत्राणि, इङ्गुदीमेषशृङ्ग्योस्त्वचः, मातुलुङ्गीमुरङ्गीपीलुजातीनां पुष्पाणि, शालतालमधूकानां साराः, हिङ्गुलाक्षे निर्यासौ, लवणानि पार्थिवविशेषाः, मद्यान्यासुतसंयोगाः, गोमूत्रशकृद्रसौ मलाविति। (सु० सू० ३९.६)

Scanned by CamScanner

५. **वातसंशमन**– देवदारु, कुष्ठ, हरिद्रा, वरुण, मेषशृङ्गी, बला, अतिबला, आर्तगल, कच्छुरा, शल्लकी, कुबेराक्षी, वीरतरु, सैरेयक, अग्निमन्थ, गुडूची, एरण्ड, पाषाणभेद, अर्क, अलर्क, शतावरी, पुनर्नवा, वसुक, वशिर, धत्तूर, भार्ङ्गी, कार्पासी, वृश्चिकाली, पत्तूर, बदर, यव, कोल, कुलत्थ आदि, विदारिगन्धादिगण, दशमूल।[१]

६. **पित्तसंशमन**– चन्दन, रक्तचन्दन, ह्रीबेर, उशीर, मञ्जिष्ठा, क्षीरकाकोली, विदारी, शतावरी, गुन्द्रा, शैवाल, रक्तोत्पल, कुमुद, नीलोत्पल, कदली, कन्दली, दूर्वा, मूर्वा आदि, काकोल्यादि, सारिवादि, अञ्जनादि, उत्पलादि, न्यग्रोधादि तथा तृणपञ्चमूल गण।[२]

७. **श्लेष्मसंशमन**– पीतचन्दन, अगुरु, हुरहुर, कुष्ठ, हरिद्रा, कर्पूर, शतपुष्पा, त्रिवृत्, रास्ना, करञ्जद्वय, इङ्गुदी, जाती, काकादनी, लाङ्गली, हस्तिकर्णपलाश, मुञ्जातक, लामज्जक आदि, वल्लीपञ्चमूल, कण्टकपञ्चमूल, पिप्पल्यादि, बृहत्यादि, मुष्ककादि, वचादि, सुरसादि तथा आरग्वधादि गण।[३]

इनके अतिरिक्त सुश्रुतसंहिता के विभिन्न स्थलों में निम्नाङ्कित वर्गों का सङ्केत मिलता है–

१. **रक्षोघ्न**– गुग्गुलु, अगुरु, राल, वचा, सिद्धार्थ, लवण, निम्बपत्र, घृत, छत्रा, अतिच्छत्रा, कपिकच्छू, मांसी, मुण्डी, दूर्वा, लशुन, हिंगु, पुराणघृत, कुक्कुटी, सर्पगन्धा, कर्कटशृङ्गी, अर्कमूल, त्रिकटु, प्रियङ्गु, स्रोतोऽञ्जन, मनःशिला, हरिताल आदि।[४]

---

१. तत्र भद्रदारुकुष्ठहरिद्रावरुणमेषशृङ्गीबलातिबलार्तगलकच्छुराशल्लकीकुबेराक्षीवीरतरुसहचराग्निमन्थवत्सादन्येरण्डाश्मभेदकालर्कार्कशतावरीपुनर्नवावासुकवशिरकाञ्चनकभार्गीकार्पासीवृश्चिकालीपत्तूरबदरयवकोलकुलत्थप्रभृतीनि विदारिगन्धादिश्च द्वे चाद्ये पञ्चमूल्यौ समासेन वातसंशमनो वर्गः। (सु० सू० ३९.७)

२. चन्दनकुचन्दनह्रीबेरोशीरमञ्जिष्ठापयस्याविदारीशतावरीगुन्द्राशैवलकह्लारकुमुदोत्पलकन्द(द)लीदूर्वामूर्वाप्रभृतीनि काकोल्यादिः सारिवादिरञ्जनादिरुत्पलादिर्न्यग्रोधादिस्तृणपञ्चमूलमिति समासेन पित्तसंशमनो वर्गः। (सु० सू० ३९.८)

३. कालेयकागुरुतिलपर्णीकुष्ठहरिद्राशीतशिवशतपुष्पासरलारास्नाप्रकीर्योदकीर्येङ्गुदीसुमनाकाकादनीलाङ्गलकीहस्तिकर्णमुञ्जातकलामज्जकप्रभृतीनि वल्लीकण्टकपञ्चमूल्यौ पिप्पल्यादिर्बृहत्यादिर्मुष्ककादिर्वचादिः सुरसादिरारग्वधादिरिति समासेन श्लेष्मसंशमनो वर्गः।
(सु० सू० ३९.९)

४. ततो गुग्गुल्वगुरुसर्जरसवचागौरसर्षपचूर्णैर्लवणनिम्बपत्रव्यामिश्रैराज्ययुक्तैर्धूपयेत्।
(सु० सू० ५.१८)

पुराणसर्पिर्लशुनं हिङ्गु सिद्धार्थकं वचा। गोलोमी चाजलोमी च भूतकेशी जटा तथा।।
कुक्कुटा सर्पगन्धा च तथा काणविकाणिके। ऋष्यप्रोक्ता वयःस्था च शृङ्गी मोहनवल्लिका।।
अर्कमूलं त्रिकटुकं लता स्रोतोजमञ्जनम्। नैपाली हरितालं च रक्षोघ्ना ये च कीर्तिताः।।
(सु० उ० ६०.४६-४८-)

छत्रातिच्छत्रे लाङ्गू(ङ्ग)लीं जटिलां ब्रह्मचारिणीं लक्ष्मीं गुहामतिगुहां वचामतिविषां शतवीर्यां सहस्रवीर्यां सिद्धार्थकांश्च शिरसा धारयेत्। (सु० सू० १९.२९)

Scanned by CamScanner

२. **रक्तस्त्रावक**– एला, कर्पूर, कुष्ठ, तगर, पाठा, देवदारु, विडङ्ग, चित्रक, त्रिकटु, आगारधूम, हरिद्रा, अर्काङ्कुर, नक्तमालफल।[१]

३. **रक्तरोधक**– रोध्र, मधुक, प्रियङ्गु, पत्तङ्ग, गैरिक, राल, रसाञ्जन, शाल्मलीपुष्प, शङ्ख, शुक्ति, माष, यव, गोधूम।[२]

४. **लेखन**– शिलाजतु, गुग्गुलु, गोमूत्र, त्रिफला, लौहभस्म, रसाञ्जन, मधु, यव, मुद्ग, कोरदूषक, श्यामाक, उद्दालक आदि।[३]

५. **बृंहण**– पयस्या, अश्वगन्धा, शालपर्णी, शतावरी, बला, अतिबला, नागबला, अन्य मधुर द्रव्य, क्षीर, दधि, घृत, मांस, शालि, षष्टिक, यव, गोधूम आदि।[४]

६. **पूयवर्धन**– नवधान्य, माष, तिल, कलाय, कुलत्थ, निष्पाव, हरितक, शाक, अम्ल, लवण, कटु; गुडविकार, पिष्टविकार, वल्लूर, शुष्कशाक, आज-आविक-आनूप-औदक मांस; वसा, शीतोदक, कृशरा, पायस, दुग्ध, दधि, तक्र आदि।[५]

७. **पथ्यतम (आहार) वर्ग**–

वर्ग	द्रव्य
शूकधान्य	रक्तशालि, षष्टिक, कङ्गुक, मुकुन्दक, पाण्डुक, पीतक, प्रमोदक, कालक, असनपुष्पक, कर्दमक, शकुनाहृत, सुगन्धक, कलम, नीवार, कोद्रव, उद्दालक, श्यामाक, गोधूम, वेणुयव आदि।

क्रमशः...

१. अथ खल्वप्रवर्तमाने रक्ते एलाशीतशिवकुष्ठतगरपाठाभद्रदारुविडङ्गचित्रकत्रिकटुकागार-धूमहरिद्रार्काङ्कुरनक्तमालफलैर्यथालाभं त्रिभिश्चतुर्भिः समस्तैर्वा चूर्णीकृतै-र्लवणतैलप्रगाढैर्व्रणमुखमवघर्षयेत्, एवं सम्यक् प्रवर्तते। (सु० सू० १४.३५)

२. अथातिप्रवृत्ते रोध्रमधुकप्रियङ्गुपत्तङ्गगैरिकसर्जरसरसाञ्जनशाल्मलीपुष्पशङ्खशुक्तिमाषयव-गोधूमचूर्णैः शनैः शनैर्व्रणमुखमवचूर्ण्य अङ्गुल्यग्रेणावपीडयेत्। (सु० सू० १४.३६)

३. ...उत्पन्ने तु शिलाजतुगुग्गुलुगोमूत्रत्रिफलालोहरजोरसाञ्जनमधुयवमुद्गकोरदूषकश्यामाकोद्दालकादीनां विरूक्षणच्छेदनीयानां च द्रव्याणां विधिवदुपयोगो व्यायामो लेखनबस्त्युपयोगश्चेति।
(सु० सू० १५.३२)

४. ...उत्पन्ने तु पयस्याऽश्वगन्धाविदारिगन्धाशतावरीबलातिबलानागबलानां मधुराणामन्यासाञ्चौ-षधीनामुपयोगः, क्षीरदधिघृतमांसशालिषष्टिकयवगोधूमानाञ्च, दिवास्वप्नब्रह्मचर्याव्यायाम-बृंहणबस्त्युपयोगश्चेति। (सु० सू० १५.३३)

५. नवधान्यमाषतिलकलायकुलत्थनिष्पावहरितकशाकाम्ललवणकटुकगुडपिष्टविकृतिवल्लूर-शुष्कशाकाजाविकानूपौदकमांसवसाशीतोदककृशरापायसदधिदुग्धतक्रप्रभृतीनि परिहरेत्।
तक्रान्तो नवधान्यादिर्योऽयं वर्ग उदाहृतः। दोषसञ्जननो ह्येष विज्ञेयः पूयवर्धनः।।
(सु० सू० १९.१६-१७)

Scanned by CamScanner

वर्ग	द्रव्य
शमीधान्य	मुद्ग, वनमुद्ग, मकुष्ठ, कलाय, मसूर, मङ्गल्य, चणक, हरेणु, आढकी, सतीन।
शाक	चिल्ली, वास्तुक, सुनिषण्णक, जीवन्ती, तण्डुलीयक, मण्डूकपर्णी।
मांस	एण, हरिण, कुरङ्ग, मृगमातृका, श्वदंष्ट्रा, कराल, क्रकर, कपोत, लाव, तित्तिरि, कपिञ्जल, वर्तीर, वर्तिका।
घृत	गव्य
लवण	सैन्धव
अम्ल	दाडिम, आमलक।[१]

८. **वातप्रकोपण**– कटु, कषाय, तिक्त; रूक्ष, लघु, शीतवीर्य; शुष्कशाक, वल्लूरक, वरक, उद्दालक, कोरदूष, श्यामाक, नीवार, मुद्ग, मसूर, आढकी, हरेणु, कलाय, निष्पाव आदि।[२]

९. **पित्तप्रकोपण**– कटु, अम्ल, लवण; तीक्ष्ण, उष्ण, लघु; विदाही; तिलतैल, पिण्याक, कुलत्थ, सर्षप, अतसी, हरितक, शाक, गोधा, मत्स्य, आज-आविक-मांस, दधि, तक्र, कूर्चिका, मस्तु, सौवीरक, सुराविकार, अम्लफल, कट्वर आदि।[३]

१०. **कफप्रकोपण**– मधुर, अम्ल, लवण; शीत, स्निग्ध, गुरु, पिच्छिल; अभिष्यन्दी; हायनक, यवक, नैषध, इत्कट, माष, महामाष, गोधूम, तिल-पिष्टविकार, दधि, दुग्ध, कृशरा, पायस, इक्षुविकार, आनूप एवं औदक मांस, वसा, बिस, मृणाल, कशेरुक, शृङ्गाटक, मधुरफल, वल्लीफल आदि।[४]

---

१. तद्यथा–रक्तशालिषष्टिककङ्कुकमुकुन्दकपाण्डुकपीतकप्रमोदककालकासनपुष्पककर्दमक-शकुनाहृतसुगन्धककलमनीवारकोद्रवोद्दालकश्यामाकगोधूमयववैणववैणहरिणकुरङ्गमृग-मातृकाश्वदंष्ट्राकरालक्रकरकपोतलावतित्तिरिकपिञ्जलवर्त्तीरवर्त्तिकामुद्गवनमुद्गमकुष्ठकलायमसूर-मङ्गल्यचणकहरेण्वाढकीसतीनाश्चिल्लिवास्तुकसुनिषण्णकजीवन्तीतण्डुलीयकमण्डूक-पर्ण्यः, गव्यं घृतं, सैन्धवं, दाडिमामलकमित्येष वर्गः सर्वप्राणिनां सामान्यतः पथ्यतमः। (सु० सू० २०.५)

२. ..कटुकषायतिक्तरूक्षलघुशीतवीर्यशुष्कशाकवल्लूरवरकोद्दालककोरदूषश्यामाकनीवारमुद्ग-मसूराढकीहरेणुकलायनिष्पावा.....दिभिर्विशेषैर्वायुः प्रकोपमापद्यते। (सु० सू० २१.१९)

३. ...कट्वम्ललवणतीक्ष्णोष्णलघुविदाहितिलतैलपिण्याककुलत्थसर्षपातसीहरितकशाक-गोधामत्स्याजाविकमांसदधितक्रकूर्चिकामस्तुसौवीरकसुराविकाराम्लफलकट्वरप्रभृतिभिः पित्तं प्रकोपमापद्यते। (सु० सू० २१.२१)

४. ...मधुराम्ललवणशीतस्निग्धगुरुपिच्छिलाभिष्यन्दिहायनकयवकनैषधेत्कटमाषमहामाष-गोधूमतिलपिष्टविकृतिदधिदुग्धकृशरापायसेक्षुविकारानूपौदकमांसवसाबिसमृणालकसेरुक-शृङ्गाटकमधुरवल्लीफलसमशनाध्यशनप्रभृतिभिः श्लेष्मा प्रकोपमापद्यते। (सु० सू० २१.२३)

Scanned by CamScanner

११. **शोफहर**– मातुलुङ्ग, अग्निमन्थ, देवदारु, शुण्ठी, अहिंस्रा, रास्ना, दूर्वा, नलमूल, यष्टीमधु, चन्दन, अन्य शीतलद्रव्य, अजगन्धा, अश्वगन्धा, त्रिवृत् (श्वेत और श्याम), कर्कटशृङ्गी, लोध्र, हरीतकी, मदन, धन्वयास आदि।[१]

१२. **पाचन**– शण, मूलक, शिग्रु, तिल तथा सर्षप के फल, सक्तु, किण्व, अतसी आदि उष्ण द्रव्य।[२]

१३. **दारण**– चिरबिल्व, कलिहारी, दन्ती, चित्रक, करवीर, कपोत, कङ्क और गृध्र का पुरीष, क्षारद्रव्य आदि।[३]

१४. **प्रपीडन**– पिच्छिल द्रव्यों यथा शाल्मली आदि की त्वचा और मूल तथा यव, गोधूम और माष आदि का चूर्ण।[४]

१५. **शोधन**– शङ्खिनी, अङ्कोठ, जाती, करवीर, सुर्वचला, आरग्वधादिवर्ग, अजगन्धा, अजशृङ्गी, इन्द्रायण, लाङ्गली, पूतीक, चित्रक, पाठा, विडङ्ग, एला, हरेणु, त्रिकटु, यवक्षार, लवण, मनःशिला, कासीस, त्रिवृत्, दन्ती, हरिताल, मुलतानी मिट्टी, अर्कमूल, त्रिफला, स्नुहीक्षीर, हरिद्राद्वय, कुटकी, अपामार्ग, निम्ब, कोशातकी, तिल, बृहती, कण्टकारी, किण्व, वचा, पटोल, सालसारादिवर्ग।[५]

१६. **व्रणधूपन**– सालसारादिसार, राल, गन्धाबिरोजा, सरल, देवदारु।[६]

---

१. मातुलुङ्ग्यग्निमन्थौ च भद्रदारु महौषधम्। अहिंस्रा चैव रास्ना च प्रलेपो वातशोफजित्।।
दूर्वा च नलमूलं च मधुकं चन्दनं तथा। शीतलाश्च गणाः सर्वे प्रलेपः पित्तशोफहृत्।।
अजगन्धाऽश्वगन्धा च काला सरलया सह। एकैषिकाऽजशृङ्गी च प्रलेपः श्लेष्मशोफहृत्।।
एते वर्गास्त्रयो लोध्रं पथ्या पिण्डीतकानि च। अनन्ता चेति लेपोऽयं सान्निपातिकशोफहृत्।।
(सु० सू० ३७.३-४, ६-७)

२. शणमूलकशिग्रूणां फलानि तिलसर्षपाः। सक्तवः किण्वमतसी द्रव्याण्युष्णानि पाचनम्।
(सु० सू० ३७.९)

३. चिरबिल्वोऽग्निको दन्ती चित्रको हयमारकः। कपोतकङ्कगृध्राणां पुरीषणाणि च दारणम्।।
क्षारद्रव्याणि वा यानि क्षारो वा दारणं परम्। (सु० सू० ३७.१०)

४. द्रव्याणां पिच्छिलानां तु त्वङ्मूलानि प्रपीडनम्। यवगोधूममाषाणां चूर्णानि च समासतः।।
(सु० सू० ३७.११)

५. शङ्खिन्यङ्कोठसुमनःकरवीरसुर्वचलाः। शोधनानि कषायाणि वर्गश्चारग्वधादिकः।।
अजगन्धाऽजशृङ्गी च गवाक्षी लाङ्गलाह्वया। पूतीकश्चित्रकः पाठा विडङ्गैलाहरेणवः।।
कटुत्रिकं यवक्षारो लवणानि मनःशिला। कासीसं त्रिवृता दन्ती हरितालं सुराष्ट्रजा।।
....रसक्रिया विधातव्या शोधनी शोधनेषु च। (सु० सू० ३७.१२-१४, २०)

६. श्रीवेष्टके सर्जरसे सरले देवदारुणि। सारेष्वपि च कुर्वीत मतिमान् व्रणधूपनम्।।
(सु० सू० ३७.२१)

Scanned by CamScanner

१७. **रोपण**– शीतकषाय वृक्षों यथा न्यग्रोध, उदुम्बर, अश्वत्थ, प्लक्ष आदि की त्वचा, सोम, गुडूची, अश्वगन्धा, काकोल्यादिवर्ग, क्षीरीवृक्ष, लज्जालु, सरल, सोमवल्क, चन्दन, पृश्निपर्णी, कपिकच्छू, हरिद्राद्वय, मालती, श्वेतदूर्वा, तगर, अगर, देवदारु, प्रियङ्गु, रोध्र, कङ्गु, त्रिफला, कासीस, मुण्डितिका, धव, अश्वकर्ण, राल, पुष्पकासीस।[१]

१८. **उत्सादन**– अपामार्ग, अश्वगन्धा, मुशली, सूर्यावर्त तथा काकोल्यादिगण।[२]

१९. **अवसादन**– कासीस, सैन्धव, किण्व, पद्मराग, मनःशिला, कुकुटाण्डत्वक्, चमेली की कली, शिरीष तथा करञ्ज के फल, धातुओं के चूर्ण।[३]

२०. **निद्राजनन**– शालि, गोधूम, पिष्टान्न, इक्षुविकार, क्षीर, मांसरस, विशेषतः विलेशय और विष्किरों के मांसरस, द्राक्षा तथा मधुर-स्निग्ध भोजन, शिरस्तैल, अभ्यङ्ग आदि।[४]

२१. **निद्राहर**– वमन, विरेचन, लङ्घन, रक्तमोक्षण आदि।[५]

२२. **अपरापातन**– कुटुतुम्बी, दृतवेधन, सर्षप, सर्पनिर्मोक, लाङ्गली, स्नुही, कुष्ठ, शाल, पिप्पल्यादि वर्ग।[६]

२३. **स्तन्यजनन**– यव, गोधूम, शालि, षष्टिक, मांसरस, सुरा, सौवीरक,

---

१. कषायाणामनुष्णानां वृक्षाणां त्वक्षु साधितम्। शृतं शीतकषायो वा रोपणार्थं प्रशस्यते।।
प्रियङ्गुका सर्जरसः पुष्पकासीसमेव च। त्वक्चूर्णं धवजं चैव रोपणार्थं प्रशस्यते।।
(सु० सू० ३७.२२, २८)

२. अपामार्गोऽश्वगन्धा च तालपत्री सुवर्चला। उत्सादने प्रशस्यन्ते काकोल्यादिश्च यो गणः।।
(सु० सू० ३७.३०)

३. कासीसं सैन्धवं किण्वं कुरुविन्दो मनःशिला। कुक्कुटाण्डकपालानि सुमनोमुकुलानि च।।
फले शैरीषकारञ्जे धातुचूर्णानि यानि च। व्रणेषूत्सन्नमांसेषु प्रशस्तान्यवसादने।।
(सु० सू० ३७.३१-३२)

४. निद्रानाशेऽभ्यङ्गयोगो मूर्ध्नि तैलनिषेवणम्। गात्रस्योद्वर्तनं चैव हितं संवाहनानि च।।
शालिगोधूमपिष्टान्नभक्ष्यैरैक्षवसंस्कृतैः। भोजनं मधुरं स्निग्धं क्षीरमांसरसादिभिः।।
रसैर्बिलेशयानां च विष्किराणां तथैव च। द्राक्षासितेक्षुद्रव्याणामुपयोगो भवेन्निशि।।
शयनासनयानानि मनोज्ञानि मृदूनि च। निद्रानाशे तु कुर्वीत तथाऽन्यान्यपि बुद्धिमान्।।
(सु० शा० ४.४३-४६)

५. वमेन्निद्रातियोगे तु कुर्यात् संशोधनानि च। लङ्घनं रक्तमोक्षश्च मनोव्याकुलनानि च।।
(सु० शा० ४.४७)

६. ...कटुकालाबुकृतवेधनसर्षपसर्पनिर्मोकैः....उत्तरबस्तिं दद्यात्। (सु० शा० १०.२१)

Scanned by CamScanner

पिण्याक, लशुन, मत्स्य, कशेरुक, शृङ्गाटक, बिस, विदारीकन्द, यष्टीमधु, शतावरी, नलिका, अलाबू, कालशाक आदि।[१]

२४. **गर्भस्थापन**– जीवनीय, शीतवीर्य, उत्पलादि, तृणपञ्चमूल, सन्धानीय, न्यग्रोधादि, कशेरु, शृङ्गाटक, शालूक, यष्टीमधु, देवदारु, विदारी, रसाञ्जन, धातकीपुष्प, शाकबीज, क्षीरविदारी, अश्मन्तक, तिल, मञ्जिष्ठा, शतावरी, वन्दाक, प्रियङ्गु, सारिवा, रास्ना, भार्ङ्गी, बृहतीद्वय, गम्भारी, क्षीरीवृक्ष, पृश्निपर्णी, बला, शिग्रु, गोक्षुर, कपित्थ, बिल्व, पटोल, इक्षु।[२]

२५. **कुमाररसायन**– सुवर्ण, कुष्ठ, वचा, ब्राह्मी, शङ्खपुष्पी, दूर्वा, मत्स्याक्षी, घृत, मधु।[३]

२६. **अर्शःशातन**– स्नुहीक्षीर, हरिद्रा, कुक्कुटपुरीष, गुञ्जा, पिप्पली, गोमूत्र, गोपित्त, दन्ती, चित्रक, सुवर्चिका, लाङ्गली, सैन्धव, कुष्ठ, शिरीषफल, अर्कक्षीर, कासीस, हरताल, सैन्धव, करवीर, विडङ्ग, पूतीक, कृतवेधन, जम्बू, उत्तमारणी।[४]

२७. **प्रेमहघ्न**–

(क) **सामान्य**– आमलक, हरिद्रा, त्रिफला, इन्द्रवारुणी, देवदारु, मुस्त,

---

१. अथास्याः क्षीरजननार्थं सौमनस्यमुत्पाद्य यवगोधूमशालिषष्टिकमांसरससुरासौवीरकपिण्याक-लशुनमत्स्यकशेरुकशृङ्गाटकबिसविदारिकन्दमधुकशतावरीनालिकालाबूकालशाकप्रभृतीनि विदध्यात्। (सु० शा० १०.३०)

२. तत्र पूर्वोक्तैः कारणैः पतिष्यति गर्भे....गर्भश्चाप्यायते। (सु० शा० १०.५७)
मधुकं शाकबीजं च पयस्या सुरदारु च।।.....। एवमाप्यायते गर्भस्तीव्रा रुक् चोपशाम्यति।।
(सु० शा० १०.५९-६५)

३. क्षीराहाराय सर्पिः पाययेत् सिद्धार्थकवचामांसीपयस्याऽपामार्गशतावरीसारिवाब्राह्मी-पिप्पलीहरिद्राकुष्ठसैन्धवसिद्धं, क्षीरान्नादाय मधुकवचापिप्पलीचित्रकत्रिफलासिद्धम्, अन्नादाय द्विपञ्चमूलीक्षीरतगरभद्रदारुमरिचमधुकविडङ्गद्राक्षाद्विब्राह्मीसिद्धं; तेनारोग्यबलमेधायूंषि शिशोर्भवन्ति। (सु० शा० १०.४५)
सौवर्णं सुकृतं चूर्णं कुष्ठं मधु घृतं वचा। मत्स्याक्षकः शङ्खपुष्पी मधु सर्पिः सकाञ्चनम्।।
अर्कपुष्पी मधु घृतं चूर्णितं कनकं वचा। हेमचूर्णानि कैडर्यः श्वेता दूर्वा घृतं मधु।।
चत्वारोऽभिहिताः प्राशाः श्लोकार्धेषु चतुर्ष्वपि। कुमाराणां वपुर्मेधाबलबुद्धिविवर्धनाः।।
(सु० शा० १०.६८-७०)

४. स्नुहीक्षीरयुक्तं हरिद्राचूर्णमालेपः प्रथमः, कुक्कुटपुरीषगुञ्जाहरिद्रापिप्पलीचूर्णमिति गोमूत्र-पित्तपिष्टो द्वितीयः, दन्तीचित्रकसुवर्चिकालाङ्गलीकल्को वा गोपित्तपिष्टस्तृतीयः, पिप्पली-सैन्धवकुष्ठशिरीषफलकल्कः स्नुहीक्षीरपिष्टोऽर्कक्षीरपिष्टो वा चतुर्थः, कासीसहरिताल-सैन्धवाश्वमारकविडङ्गपूतीककृतवेधनजम्ब्वर्कोत्तमारणीदन्तीचित्रकालर्कस्नुहीपयःसु तैलं विपक्वमभ्यञ्जनेनार्शः शातयति। (सु० चि० ६.१२)

Scanned by CamScanner

शाल, कम्पिल्लक, मुष्कक, कुटज, कपित्थ, रोहितक, बिभीतक, सप्तपर्ण, निम्ब, आरग्वध, मूर्वा, सोम, पलाश, प्रियङ्गु, अनन्तमूल, यूथिका, भार्ङ्गी, त्रायमाण, मञ्जिष्ठा, अम्बष्ठा, दाडिमत्वक्, शालपर्णी, पद्म, नागकेसर, पुन्नाग, धातकी, बकुल, शाल्मली, श्रीवेष्टक, मोचरस, शृङ्गाटक, गिलोड्य, बिस, मृणाल, काश, कशेरुक, मधुक, आम्र, जम्बू, असन, तिनिश, ककुभ, श्योनाक, रोध्र, भल्लातक, पलाश, चर्मिवृक्ष, अपराजिता, कर्पूर, जलवेतस, अजकर्ण, कुटज, राजादन, बदरी, विकंकत।[१]

(ख) **विशिष्ट–**

१. उदकमेह– पारिजात
२. इक्षुमेह– वैजयन्ती (तर्कारी)
३. सुरामेह– निम्ब
४. सिकतामेह– चित्रक
५. शनैर्मेह– खदिर
६. लवणमेह– पाठा, अगुरु, हरिद्रा
७. पिष्टमेह– हरिद्रा, दारुहरिद्रा
८. सान्द्रमेह– सप्तपर्ण
९. शुक्रमेह– दूर्वा, शैवाल, जलकुम्भी, करञ्ज, कशेरु, अर्जुन, चन्दन
१०. फेनमेह– त्रिफला, आरग्वध, द्राक्षा
११. नीलमेह– शालसारादि, अश्वत्थ
१२. हरिद्रामेह– आरग्वध
१३. अम्लमेह– न्यग्रोधादि
१४. क्षारमेह– त्रिफला
१५. मञ्जिष्ठामेह– मञ्जिष्ठा, चन्दन
१६. रक्तमेह– गुडूची, तिन्दुक, काश्मर्य, खर्जूर

---

१. ततः शुद्धदेहमामलकरसेन हरिद्रां मधुसंयुक्तां पाययेत्, त्रिफलाविशालादेवदारुमुस्तकषायं वा, शालकम्पिल्लकमुष्ककल्कमक्षमात्रं वा मधुमधुरमामलकरसेन हरिद्रायुतं, कुटज-कपित्थरोहीतकबिभीतकसप्तपर्णपुष्पकल्कं वा निम्बारग्वध.....अपहन्तारो व्याख्याताः। (सु० चि० ११.८)

ततः प्रियङ्ग्वनन्तायूथिकापद्मात्रायन्तिकालोहितिकाऽम्बष्ठादाडिमत्वक्शालपर्णीपद्मतुङ्ग-केशरधातकीबकुलशाल्मलीश्रीवेष्टकमोचरसेष्वरिष्टानयस्कृतीर्लेहानासवांश्च कुर्वीत; शृङ्गाटकगिलोड्यबिसमृणालकाशकसेरुकमधुकाम्रजम्ब्वसनतिनिशककुभकट्वङ्गरोध्र-भल्लातकपलाशचर्मवृक्षगिरिकर्णिकाशीतशिवनिचुलदाडिमाजकर्णहरिवृक्षराजादनगोपघोण्टा-विकङ्कतेषु वा। (सु० चि० ११.१०)

Scanned by CamScanner

१७. **सर्पिर्मेह**– कुष्ठ, कुटज, पाठा, हिंगु, कुटकी, गुडूची, चित्रक

१८. **वसामेह**– अग्निमन्थ, शिंशपा

१९. **मधुमेह**– श्वेतखदिर, पूगफल

२०. **हस्तिमेह**– तिन्दुक, कपित्थ, शिरीष, पलाश, पाठा, मूर्वा, दुरालभा आदि।[१]

२८. **दन्तशोधन**– नीम, खदिर, मधूक, करञ्ज, त्रिकटु, त्रिजात, सैन्धव, तैल, तेजोवती।[२]

२९. **मुखशोधन**– कर्पूर, जाती, कंकोल, लवङ्ग, कटुक, पूग, ताम्बूल।[३]

३०. **केशरञ्जन**– नीलिनी (पत्र), भृङ्गराज (पञ्चाङ्ग), अर्जुनत्वक्, मदनफल (कृष्ण), लौहचूर्ण, विजयसार (पुष्प), सैरेयक (पुष्प), त्रिफला, जम्बूपुष्प, अर्जुनपुष्प, गम्भारीपुष्प, तिल, आम्रास्थि, पुनर्नवाद्वय, कर्दम, कण्टकारी, कासीस, स्रोतोञ्जन, यष्टीमधु, नीलोत्पल, सारिवा, मल्लिका।[४]

३१. **वक्त्राभ्यङ्ग**– लाक्षा, लोध्र, हरिद्राद्वय, मनःशिला, हरताल, कुष्ठ, नाग, गैरिक, मञ्जिष्ठा, मुलतानी मिट्टी, पतङ्ग, रोचन, रसाञ्जन, तज, वटपत्र, कालीयक,

---

१. तत्रोदकमेहिनं पारिजातकषायं पाययेत्, इक्षुमेहिनं वैजयन्तीकषायं, सुरामेहिनं निम्बकषायं, सिकतामेहिनं चित्रककषायं, शनैर्मेहिनं खदिरकषायं, लवणमेहिनं पाठाऽगुरुहरिद्राकषायं, पिष्टमेहिनं हरिद्रादारुहरिद्राकषायं, सान्द्रमेहिनं सप्तपर्णकषायं, शुक्रमेहिनं दूर्वाशैवलप्लवहठकरञ्जकसेरुककषायं ककुभचन्दनकषायं वा, फेनमेहिनं त्रिफलारग्वध-मृद्वीकाकषायं कफजेषु मधुमधुरमिति; पैत्तिकेषु नीलमेहिनं शालसारादिकषायमश्वत्थकषायं वा पाययेत्, हरिद्रामेहिनं राजवृक्षकषायम्, अम्लमेहिनं न्यग्रोधादिकषायं, क्षारमेहिनं त्रिफलाकषायं, मञ्जिष्ठामेहिनं मञ्जिष्ठाचन्दनकषायं, शोणितमेहिनं गुडूचीतिन्दु-कास्थिकाश्मर्यखर्जूरकषायं मधुमिश्रं; ....सर्पिर्मेहिनं कुष्ठकुटजपाठाहिङ्गुकटुरोहिणीकल्कं गुडूचीचित्रककषायेण पाययेत्, वसामेहिनमग्निमन्थकषायं शिंशपाकषायं वा, क्षौद्रमेहिनं कदरक्रमुककषायं, हस्तिमेहिनं तिन्दुककपित्थशिरीषपलाशपाठामूर्वादुःस्पर्शाकषायं मधुमिश्रं हस्त्यश्वशूकरखरोष्ट्रास्थिक्षारं चेति। (सु० चि० ११.९)

२. निम्बश्च तिक्तके श्रेष्ठः कषाये खदिरस्तथा। मधूको मधुरे श्रेष्ठः करञ्जः कटुके तथा।।
क्षौद्रव्योषत्रिवर्गाक्तं सतैलं सैन्धवेन च। चूर्णेन तेजोवत्याश्च दन्तान्नित्यं विशोधयेत्।।
(सु० चि० २४.६-७-)

३. कर्पूरजातिकक्कोललवङ्गकटुकाह्वयैः। सचूर्णपूगैः सहितं पत्रं ताम्बूलजं शुभम्।।
मुखवैशद्यसौगन्ध्यकान्तिसौष्ठवकारकम्। हनुदन्तस्वरमलजिह्वेन्द्रियविशोधनम्।।
(सु० चि० २४.२१-२२)

४. नीलीदलं भृंगरजोऽर्जुनत्वक् पिण्डीतकं कृष्णमयोरजश्च।.....
मासोपरिष्टाद्घनकुञ्चिताग्राः केशा भवन्ति भ्रमराञ्जनाभाः।
केशास्तथाऽन्ये खलतौ भवेयुर्जरा न चैनं सहसाऽभ्युपैति।। (सु० चि० २५.२८,३६)

Scanned by CamScanner

पद्मक, पद्मकेशर, चन्दनद्वय, पारद, काकोल्यादि, क्षीर, मेद, मज्जा, मोम, गोघृत, क्षीरीवृक्ष।[१]

३२. **अङ्गराग**– हरीतकीचूर्ण, निम्बपत्र, आम्रत्वक्, दाडिमपुष्पवृन्त, मदयन्तिकापत्र।[२]

३३. **वाजीकरण**– तिल, माष, विदारी, शालि, इक्षु, सैन्धव, वराहमेद, घृत, बस्ताण्ड, क्षीर, शिशुमारवसा, पिप्पली, यव, गोधूम, आमलक, कुलीर, कूर्म, नक्र के अण्ड; महिष, ऋषभ और बस्त का शुक्र; अश्वत्थ, उदुम्बर, कपिकच्छू, मूषिक, मण्डूक और चटक के अण्ड; इक्षुरक, उच्चटा, शतावरी, गोक्षुर, दुग्धवर्ग, मांसवर्ग, काकोल्यादि वर्ग।[३]

३४. **रसायन**–

(क) **बल्य**– विडङ्ग, काश्मर्य, बला, अतिबला, नागबला, विदारी, शतावरी, वाराहीकन्द, विजयसार, अग्निमन्थ, शणफल आदि।[४]

(ख) **मेध्य**– श्वेतवाकुची, चित्रकमूल, मण्डूकपर्णी, ब्राह्मी, हैमवती वचा, बिल्व, बिस, नीलोत्पल, सुवर्ण, वासा, प्रियङ्गु, पुत्रजीवक, यष्टीमधुक।[५]

(ग) **सौम्य (दिव्य)**– सोम,[६] श्वेतकापोती, कृष्णकापोती, गोनसी, वाराही,

---

१. लाक्षा रोध्रं द्वे हरिद्रे शिलाले कुष्ठं नागं गैरिका वर्णकाश्च।
मञ्जिष्ठोग्रा स्यात् सुराष्ट्रोद्भवा च पत्तंगं वै रोचना चाञ्जनं च।।
हेमाङ्गत्वक् पाण्डुपत्रं वटस्य कालीयं स्यात् पद्मकं पद्ममध्यम्।
रक्तं श्वेतं चन्दनं पारदश्च काकोल्यादिः क्षीरपिष्टश्च वर्गः।।
मेदो मज्जा सिक्थकं गोघृतं च दुग्धं क्वाथः क्षीरिणाञ्च द्रुमाणाम्।
एतत् सर्वं पक्वमैकध्यतस्तु वक्त्राभ्यङ्गे सर्पिरुक्तं प्रधानम्।। (सु० चि० २५.३८-४०)

२. हरीतकीचूर्णमरिष्टपत्रं चूतत्वचं दाडिमपुष्पवृन्तम्।
पत्रञ्च दद्यान्मदयन्तिकाया लेपोऽङ्गरागो नरदेवयोग्यः।। (सु० चि० २५.४३)

३. तिलमाषविदारीणां शालीनां चूर्णमेव वा। पौण्ड्रकेक्षुरसैरार्द्रं मर्दितं सैन्धवान्वितम्।। वराहमेदसा युक्तां घृतेनोत्कारिकां पचेत्। तां भक्षयित्वा पुरुषो गच्छेत्तु प्रमदाशतम्।। बस्ताण्डसिद्धे पयसि भावितानसकृत्तिलान्। शिशुमारवसापक्वाः शष्कुल्यस्तैस्तिलः कृताः।। यः खादेत् स पुमान् गच्छेत् स्त्रीणां शतमपूर्ववत्। पिप्पलीलवणोपेते बस्ताण्डे क्षीरसर्पिषा।। साधिते भक्षयेद् यस्तु स गच्छेत् प्रमदाशतम्। क्षीरमांसगणाः सर्वे काकोल्यादिश्च पूजितः। वाजीकरणहेतोर्हि तस्मात्तत्तु प्रयोजयेत्।। (सु० चि० २६.१६-२०,३८)

४. (सु० चि० २७)

५. (सु० चि० २८)

६. ओषधीनां पतिं सोममुपयुज्य विचक्षणः। दशवर्षसहस्राणि नवां धारयते तनुम्।।
(सु० चि० २९.१४)

Scanned by CamScanner

कन्या, छत्रा, अतिछत्रा, करेणु, अजा, चक्रका, आदित्यपर्णी, ब्रह्मसुवर्चला, श्रावणी, महाश्रावणी, गोलोमी, अजलोमी, महावेगवती।[१]

३५. **विष–**

(क) **स्थावर–**

अधिष्ठान	द्रव्य
१. मूल	क्लीतक, अश्वमार, गुञ्जा, सुगन्ध, गर्गरक, करघाट, विद्युच्छिखा, विजय
२. पत्र	विषपत्रिका, लम्बा, वरदारु, करम्भ, महाकरम्भ
३. फल	कुमुद्वती, वेणुका, करम्भ, महाकरम्भ, कर्कोटक, रेणुक, खद्योतक, चर्मरी, इभगन्धा, सर्पघाती, नन्दन, सरपाक
४. पुष्प	वेत्र, कादम्ब, वल्लीज, करम्भ, महाकरम्भ
५. त्वक् ६. सार ७. निर्यास	अन्त्रपाचक, कर्तरीय, सौरीयक, करघाट, करम्भ, नन्दन, नाराचक
८. क्षीर	कुमुदघ्नी, स्नुही, जालक्षीरी
९. धातु	फेनाश्म, हरताल
१०. कन्द	कालकूट, वत्सनाभ, सर्षप, पालक, कर्दमक, वैराटक, मुस्तक, शृङ्गीविष, प्रपुण्डरीक, मूलक, हालाहल, महाविष, कर्कटक।[२]

---

१. अजगरी, श्वेतकापोती, कृष्णकापोती, गोनसी, वाराही, कन्या, छत्रा, अतिच्छत्रा, करेणुः, अजा, चक्रका, आदित्यपर्णी, ब्रह्मसुवर्चला, श्रावणी, महाश्रावणी, गोलोमी, अजलोमी, महावेगवती, चेत्यष्टादश सोमसमवीर्या महौषधयो व्याख्याताः। (सु० चि० ३०.५)

२. तत्र, क्लीतकाश्वमारगुञ्जासुगन्धगर्गरककरघाटविद्युच्छिखाविजयानीत्यष्टौ मूलविषाणि; विषपत्रिकालम्बावरदारुकरम्भमहाकरम्भाणि पञ्च पत्रविषाणि; कुमुद्वतीवेणुकाकरम्भ-महाकरम्भकर्कोटकरेणुकखद्योतकचर्मरीभगन्धासर्पघातिनन्दनसारपाकानीति द्वादश फलविषाणि; वेत्रकादम्बवल्लीजकरम्भमहाकरम्भाणि पञ्च पुष्पविषाणि; अन्त्रपाचककर्तरीय-सौरीयककरघाटकरम्भनन्दननाराचकानि सप्त त्वक्सारनिर्यासविषाणि; कुमुदघ्नीस्नुहीजालक्षीरीणि त्रीणि क्षीरविषाणि; फेणाश्म(भस्म) हरितालं च द्वे धातुविषे; कालकूटवत्सनाभसर्षपपालक-कर्दमकवैराटकमुस्तकशृङ्गीविषप्रपुण्डरीकमूलकहालाहलमहाविषकर्कटकानीति त्रयोदश कन्दविषाणि; इत्येवं पञ्चपञ्चाशत् स्थावरविषाणि भवन्ति। (सु० क० २.५)

Scanned by CamScanner

(ख) जाङ्गम–

अधिष्ठान	जन्तु
१. दृष्टि २. निःश्वास	दिव्य सर्प
३. दंष्ट्रा	भौम सर्प, मार्जार, कुक्कुर, वानर, मकर, मण्डूक, पाकमत्स्य, गोधा, शम्बूक, प्रचलाक, गृहगोधिका, चतुष्पाद, कीट आदि।
४. नख	भौमसर्प के अतिरिक्त सभी दंष्ट्राविष
५. मूत्र ६. पुरीष	चिपिट, पिच्चिटक, कषायवासिक, सर्षपक, तोटक, वर्चःकीट, कौडिन्यक, लूता, चित्रशिर, सरावकुर्दि, शतदारुक, अरिमेदक, शारिकामुख
७. शुक्र	मूषिक, लूता
८. लाला	लूता
९. आर्तव	लूता
१०. मुखसन्दंश	लूता, मक्षिका, कणभ, जलायु, चित्रशिर, सरावकुर्दि, शतदारुक, अरिमेदक, शारिकामुख
११. विशर्धित	लूता आदि चार के अतिरिक्त उपर्युक्त चित्रशिर आदि
१२. तुण्ड	सूक्ष्मतुण्ड, उच्चिटिंग, वरटी, शतपदी, शूकवलभिका, शृङ्गी, भ्रमर
१३. अस्थि	विषहत, सर्पकण्टक, वरटी, मत्स्यास्थि
१४. पित्त	शकुली, मत्स्य, रक्तराजि, वरटी मत्स्यास्थि
१५. शूक	उपर्युक्त तुण्डविष तथा वृश्चिक, विश्वम्भर, राजीव, मत्स्य, समुद्रवृश्चिक
१६. शव	मृत कीट और सर्प।[1]

---

१. तत्र, दृष्टिनिःश्वासविषा दिव्याः सर्पाः, भौमास्तु दंष्ट्राविषाः, मार्जारश्ववानरमकरमण्डूकपाकमत्स्यगोधाशम्बूकप्रचलाकगृहगोधिकाचतुष्पादकीटास्तथाऽन्ये दंष्ट्रानखविषाः, चिपिटपिच्चिटककषायवासिकसर्षपकतोटकवर्चःकीटकौण्डिन्यकाः शकृन्मूत्रविषाः, मूषिकाः शुक्रविषाः, लूता लालामूत्रपुरीषमुखसन्दंशनखशुक्रार्तवविषाः, वृश्चिकविश्वम्भरवरटीराजीवमत्स्योच्चिटिङ्गाः समुद्रवृश्चिकाश्चाल(र)विषाः, चित्रशिरःसरावकुर्दिशतदारुकारिमेदकसारिकामुखा मुखसन्दंशविशर्धितमूत्रपुरीषविषाः, मक्षिकाकणभजलायुका मुखसन्दंशविषाः, विषहतास्थि सर्पकण्टकवरटीमत्स्यास्थि चेत्यस्थिविषाणि, शकुलीमत्स्यरक्तराजिवरकी(टी)मत्स्याश्च पित्तविषाः, सूक्ष्मतुण्डोच्चिटिङ्गवरटीशतपदीशूकवलभिकाशृङ्गिभ्रमराः शूकतुण्डविषाः, कीटसर्पदेहा गतासवः शवविषाः; शेषास्त्वनुक्ता मुखसन्दंशविषेष्वेव गणयितव्याः। (सु० क० ३.५)

Scanned by CamScanner

३६. **एकसर (विषघ्न)**– सोमराजी फल और पुष्प, कटभी, सिन्धुवार, चोरपुष्पी, वरुण, कुष्ठ, सर्पगन्धा, सप्तला, पुनर्नवा, शिरीषपुष्प, आरग्वध और अर्कपुष्प, श्यामालता, पाठा, आम्र, विडङ्ग, अश्मन्तक, काली मिट्टी, कुरवक।[१]

३७. **चक्षुष्य**– पुराणघृत, त्रिफला, शतावरी, पटोल, आमलक, मुद्ग, यव, घृत, जीवन्ती, सुनिषण्णक, तण्डुलीय, वास्तूक, चिल्ली, मूलकपोतिका, शाकुन और जाङ्गल मांसरस, पटोल, कूर्कोटक, कारवेल्ल, वार्ताक, अरणी, करीर के शाक, शिग्रु और आर्त्तगल।[२] खेखसा करेला

३८. **अग्र्यवर्ग**–

वर्ग	द्रव्य
शूकधान्य	यव, गोधूम, रक्तशालि, षष्टिक
वैदल	मुद्ग, आढकी, मसूर
मांस	लाव, तित्तिर, कुरङ्ग, सारङ्ग, एण, कपिञ्जल, मयूर, वर्मि, कूर्म।
फल	दाडिम, आमलक, द्राक्षा, खर्जूर, परूषक, राजादन, मातुलुङ्ग।
शाक	जीवन्ती, सतीन, वास्तुक, चुञ्चु, चिल्ली, मूलकपोतिका, मण्डूकपर्णी।

वर्ग	द्रव्य	वर्ग	द्रव्य
क्षीर	गव्य	घृत	गव्य
लवण	सैन्धव	अम्ल	धात्री, दाडिम
कटु	पिप्पली, शुण्ठी	तिक्त	पटोल, वार्ताक
मधुर	घृत	कषाय	मधु, पूग, परूषक
इक्षुविकार	शर्करा	पान	मधु, आसव[३]

---

१. सोमराजीफलं पुष्पं कटभी सिन्धुवारक:। चोरको वरुण: कुष्ठं सर्पगन्धा ससप्तला।।
पुनर्नवा शिरीषस्य पुष्पमारग्वधार्कजम्। श्यामाऽम्बष्ठाविडङ्गानि तथाऽऽम्राश्मन्तकानि च।।
भूमी कुरबकश्चैव गण एकसर: स्मृत:। (सु० क० ५.८४-८५-)

२. घृत पुराणं त्रिफलां शतावरीं पटोलमुद्गामलकं यवानपि।
निषेवमाणस्य नरस्य यत्नतो भयं सुघोरात्तिमिरात्र विद्यते।।
जीवन्तिशाकं सुनिषण्णकं च सतण्डुलीयं वरवास्तुकं च।
चिल्ली तथा मूलकपोतिका च दृष्टेर्हितं शाकुनजाङ्गलं च।।
पटोलकर्कोटककारवेल्लवार्ताकुतर्कारिकरीरजानि।
शाकानि शिग्र्वार्तगलानि चैव हितानि दृष्टेर्घृतसाधितानि।। (सु० उ० १७.४८,५०-५१)

३. षष्टिका यवगोधूमा लोहिता ये च शालय:। मुद्गाढकीमसूराश्च धान्येषु प्रवरा: स्मृता:।।
लावतित्तिरिसारङ्गकुरङ्गैणकपिञ्जला:। मयूरवर्मिकूर्माश्च श्रेष्ठा मांसगणेष्विह।। क्रमश:...

Scanned by CamScanner

चरक और सुश्रुत का कर्मात्मक वर्गीकरण- एक तुलनात्मक समीक्षा

कर्मात्मक वर्गीकरण में चरक और सुश्रुत की शैली का तुलनात्मक अध्ययन करने से दो बातें स्पष्टत: लक्षित होती हैं। एक तो यह कि चरक ने द्रव्यों का वर्गीकरण सामान्य पद्धति (Inductive method) से किया है और सुश्रुत ने इसके लिए विशेषपद्धति (Deductive method) का आश्रय लिया है। वैज्ञानिक अध्ययन का वास्तविक क्रम भी यही है। पहले विशिष्ट द्रव्यों के आधार पर सामान्य सिद्धान्त बनते हैं और पुन: इन सिद्धान्तों का प्रयोग विशिष्ट द्रव्यों पर होता है। चरक ने सामान्य पद्धति से विभिन्न द्रव्यों के कर्मों का अध्ययन कर उनके सम्बन्ध में सामान्य सिद्धान्त निरूपित किये और उन्हीं के आधार पर द्रव्यों का वर्गीकरण किया। वर्गों का नामकरण भी इसीलिए सामान्य कर्मों के अनुसार ही हुआ है यथा जीवनीय, बृंहणीय आदि। सुश्रुत के काल तक चरक के सामान्य सिद्धान्त तथा तदाश्रित वर्ग पर्याप्त प्रचलन पा चुके थे, अत: सुश्रुत की दृष्टि सिद्धान्तों के विशिष्ट प्रयोग (Deduction) की ओर अधिक रही। उन्होंने उन सामान्य वर्गों में आने वाले विशिष्ट द्रव्यों के सम्बन्ध में अधिक चिन्तन किया फलत: सुश्रुत के वर्गीकरण में वर्गों का नामकरण द्रव्यों के आधार पर मिलता है यथा पिप्पल्यादि, बृहत्यादि प्रभृति। औषध द्रव्यों की संख्या भी सुश्रुतोक्त वर्गों में इसीलिए अधिक आई है जबकि चरक ने प्रत्येक वर्ग में केवल सङ्केत के लिए दस-दस द्रव्यों के नाम गिना दिये हैं।

दूसरा अन्तर यह प्रतीत होता है कि सम्प्रदायभेद से चरक और सुश्रुत ने अपने-अपने सम्प्रदाय के लिए उपयोगी द्रव्यों तथा वर्गों का विवेचन अधिक किया है; उदाहरणार्थ- चरक में पञ्चकर्म के उपयोगी (वमन, विरेचन आदि) तथा सहायक (वमनोपग, विरेचनोपग आदि) द्रव्यों तथा वर्गों का विस्तृत विचार किया गया है। आस्थापन वर्ग का तो रसभेद से ६ स्कन्धों में बड़े विस्तार से चरकसंहिता विमानस्थान के ८वें अध्याय में किया गया है। इन वर्गों का इतना विशद विवेचन सुश्रुत में नहीं मिलता किन्तु इनके बदले हम देखते हैं कि शल्यतन्त्र तथा शालाक्यतन्त्र में उपयोगी द्रव्यों और वर्गों का वहाँ सुविस्तृत विवेचन किया गया है यथा विम्लापन, पाचन, दारण, रोपण आदि। पञ्चमूलों में शल्योपयोगी वल्लीपञ्चमूल तथा कण्टकपञ्चमूल का वर्णन है। इसका कारण यह है कि चरक

दाडिमामलकं द्राक्षा खर्जूरं सपरूषकम्। राजादनं मातुलुङ्गं फलवर्गे प्रशस्यते।।
सतीनो वास्तुकश्चुच्चूचिल्लीमूलकपोतिका:। मण्डूकपर्णी जीवन्ती शाकवर्गे प्रशस्यते।।
गव्यं क्षीरं घृतं श्रेष्ठं, सैन्धवं लवणेषु च। धात्रीदाडिममम्लेषु, पिप्पली नागरं कटौ।।
तिक्ते पटोलवार्ताकं, मधुरे घृतमुच्यते। क्षौद्रं, पूगफलं श्रेष्ठं कषाये सपरूषकम्।।
शर्करेक्षुविकारेषु, पाने मध्वासवौ तथा। (सु० सू० ४६.३३२-३३७-)

Scanned by CamScanner

कायचिकित्सा-सम्प्रदाय तथा सुश्रुत शल्य-सम्प्रदाय के अनुयायी हैं। इसके अतिरिक्त, चरकोक्त महाकषायों में एक-दो पार्थिक द्रव्य (मृत्कपाल और गैरिक) का ही समावेश है किन्तु सुश्रुत ने धातुओं के लिए एक विशिष्ट गण त्रप्वादि तथा पार्थिव द्रव्यों के लिए ऊषकादि निर्धारित किया है। अतः आयुर्वेदीय द्रव्यों का समग्र ज्ञान प्राप्त करने के लिए दोनों संहिताओं का अवलोकन आवश्यक है।

चरक और सुश्रुत के वर्गों में कितनी समानता है यह निम्नाङ्कित तालिका से स्पष्ट होगा। दोनों ही के वर्गीकरण कर्मानुसार हैं।[१]

चरकोक्त वर्ग	सुश्रुतोक्त गण	चरकोक्त वर्ग	सुश्रुतोक्त गण
१. जीवनीय	काकोल्यादि	१५. कृमिघ्न	सुरसादि, लाक्षादि
२. बृंहणीय	विदारिगन्धादि	१६. विषघ्न	रोध्रादि, आरग्वधादि, अर्कादि, अञ्जनादि
३. लेखनीय	मुस्तादि		
४. भेदनीय	श्यामादि		
५. सन्धानीय	अम्बष्ठादि, प्रियंग्वादि		
६. दीपनीय	पिप्पल्यादि	१७. स्तन्यजनन	काकोल्यादि
७. बल्य	लघुपञ्चमूल	१८. स्तन्यशोधन	मुस्तादि, वचादि, हरिद्रादि
८. वर्ण्य	एलादि		
९. कण्ठ्य			
१०. हृद्य	परूषकादि	१९. शुक्रजनन	काकोल्यादि
११. तृप्तिघ्न	पटोलादि	२०. शुक्रशोधन	वल्लीपञ्चमूल, कण्टकपञ्चमूल
१२. अर्शोघ्न	मुष्ककादि		
१३. कुष्ठघ्न	आरग्वधादि, सालसारादि, अर्कादि, लाक्षादि	२१. स्नेहोपग	
		२२. स्वेदोपग	
		२३. वमनोपग	
		२४. विरेचनोपग	परूषकादि
१४. कण्डूघ्न	एलादि, आरग्वधादि	२५. आस्थापनोपग	
		२६. अनुवासनोपग	

क्रमशः..

१. अत्र वर्गशब्देन प्रकरणात् समानक्रियाणां समूह उच्यते....समानकार्या वर्गाः।
(सु० सू० ३६.३३-चक्र०)

व्याधिप्रशमनादौ कार्ये येषां भेषजानां क्षमत्वं तानि वर्गीकृत्याभिधातुं द्रव्यसंग्रहणीय उच्यते।
(सु० सू० ३८.१-२-चक्र०)

Scanned by CamScanner

चरकोक्त वर्ग	सुश्रुतोक्त गण	चरकोक्त वर्ग	सुश्रुतोक्त गण
२७. शिरोविरेचनोपग		४०. श्रमहर	परूषकादि
२८. छर्दिनिग्रहण	न्यग्रोधादि	४१. दाहप्रशमन	सारिवादि, अञ्जनादि, उत्पलादि
२९. तृष्णानिग्रहण	गुडूच्यादि, उत्पलादि, सारिवादि, परूषकादि	४२. शीतप्रशमन	पिप्पल्यादि, सुरसादि
३०. हिक्कानिग्रहण	बृहत्यादि, विदारिगन्धादि	४३. उदर्दप्रशमन	सालसारादि
३१. पुरीषसङ्ग्रहणीय	रोध्रादि, प्रियंग्वादि, अम्बष्ठादि	४४. अङ्गमर्दप्रशमन	विदारिगन्धादि
३२. पुरीषविरजनीय	न्यग्रोधादि	४५. शूलप्रशमन	पिप्पल्यादि
३३. मूत्रसङ्ग्रहणीय	न्यग्रोधादि, सालसारादि	४६. शोणितस्थापन	प्रियंग्वादि, अञ्जनादि
३४. मूत्रविरेचनीय	तृणपञ्चमूल, वीरतर्वादि	४७. वेदनास्थापन	रोध्रादि
३५. मूत्रविरजनीय	उत्पलादि	४८. संज्ञास्थापन	प्रियंग्वादि
३६. कासहर	विदारिगन्धादि	४९. प्रजास्थापन	विदारिगन्धादि, काकोल्यादि
३७. श्वासहर	पिप्पल्यादि, सुरसादि	५०. वयःस्थापन	काकोल्यादि, विदारिगन्धादि
३८. शोथहर	दशमूल	५१. वमन	ऊर्ध्वभागहर
३९. ज्वरहर	सारिवादि, पटोलादि, आमलक्यादि	५२. विरेचन	अधोभागहर
		५३. शोधन	उभयतोभागहर

वैज्ञानिक दृष्टिकोण- जिस प्रकार चरक ने वर्गों के सम्बन्ध मे यह कहा कि इससे द्रव्यो या वर्गों की इयत्ता नही समझनी चाहिए और बुद्धिमानो का कर्त्तव्य है कि इस आधार पर वैज्ञानिक पद्धति से अनुक्त द्रव्यो तथा वर्गों का भी विवेचन और व्यवहार करे।[1] उसी प्रकार सुश्रुत ने भी गणोक्त (वर्गोक्त) द्रव्यों के सम्बन्ध में कहा है कि

१. ....एतावतो ह्यल्पबुद्धीनां व्यवहाराय, बुद्धिमतां च स्वातन्त्र्येणानुमानयुक्तिकुशलानामनुक्तार्थज्ञानाय। (च० सू० ४.२०)

Scanned by CamScanner

आवश्यकतानुसार समस्त, पृथक् या भिन्न गण का प्रयोग करना चाहिए।[1]

इसके अतिरिक्त, आचार्यों का यह भी उपदेश है कि गण का यदि कोई द्रव्य स्थान विशेष में अनुपयोगी हो तो उसे हटा दें और अन्य उपयोगी द्रव्यों को उसमें मिला दे।[2] यह प्राचीन आचार्यों की वैज्ञानिकता और उदारता का द्योतक है।

*

---

१. समीक्ष्य दोषभेदांश्च भिन्नान् मिश्रान् प्रयोजयेत्।
पृथङ्मिश्रान् समस्तान् वा गणं वा व्यस्तसंहतम्।। (सु० सू० ३८.८२)
समस्तं वर्गमर्धं वा यथालाभमथापि वा।
प्रयुञ्जीत भिषक् प्राज्ञो यथोद्दिष्टेषु कर्मसु।। (सु० सू० ३७.३३)

२. गणोक्तमपि यद् द्रव्यं भवेद् व्याधावयौगिकम्।
तदुद्धरेद्यौगिकं तु प्रक्षिपेदप्यकीर्तितम्। (सु० चि० १.१३७)
त्रयस्त्रिंशदिति प्रोक्ता वर्गास्तेषु त्वलाभतः।
युञ्ज्यात्तद्विगमन्यच्च द्रव्यं जह्यादयौगिकम्।। (अ० हृ० सू० १५.४६)
भिषग् बुद्धिमान् परिसंख्यातमपि यद्यद्द्रव्यमयौगिकं मन्येत, तत्तदपकर्षयेत्; यद्यच्चानुक्तमपि यौगिकं मन्येत, तत्तद्विदध्यात्; वर्गमपि वर्गेणोपसंसृजेदेकमेकेनानेकेन वा युक्तिं प्रमाणीकृत्य।।
(च० वि० ८.१४९)

Scanned by CamScanner

सप्तम अध्याय

वाग्भटोक्त वर्गीकरण

अष्टाङ्गहृदय

वाग्भट ने अष्टाङ्गहृदय (सू० १५) में द्रव्यों के ३३ वर्ग निर्धारित किये हैं।[१] इनमें चार संशोधन (वमन, विरेचन, निरूहण और शिरोविरेचन) तथा तीन संशमन (वात संशमन, पित्त संशमन और कफ संशमन) के वर्ग हैं। प्रथम वर्ग मदनादि होने से यह पूरा वर्गीकरण 'मदनादि' के नाम से प्रसिद्ध हुआ जिस पर चन्द्रनन्दन ने 'मदनादि निघण्टु' की रचना की। शेष २६ वर्गों में प्रथम वर्ग जीवनीय चरक का है और द्वितीय से अन्तिम श्यामादि वर्ग पर्यन्त सुश्रुत के।

ये ३३ वर्ग निम्नाङ्कित रूप में निर्धारित हैं–

१. **वमन**– मदन, मधुक, कटुतुम्बी, निम्ब, बिम्बी, विशाला, त्रपुस, कुटज, मूर्वा, देवदाली, कृमिघ्न, विदुल, चित्रक, चित्रा, कोशातकी, राजकोशातकी, करञ्ज, पिप्पली, लवण, वचा, एला और सर्षप।[२]

२. **विरेचन**– दन्ती, त्रिवृत्, त्रिफला, इन्द्रायण, स्नुही, शङ्खिनी, नीलिनी, तिल्वक, आरग्वध, कम्पिल्लक, स्वर्णक्षीरी, दुग्ध और मूत्र।[३]

३. **निरूहण**– मदन, कुटज, कुष्ठ, देवदाली, मधुक, वचा, दशमूल, देवदारु, रास्ना, यव, शतपुष्पा, कोशातकी, कुलत्थ, मधु, लवण और त्रिवृत्।[४]

४. **शिरोविरेचन**– विडङ्ग, अपामार्ग, त्रिकटु, दारुहरिद्रा, सर्जरस; शिरीष, बृहती और शिग्रु के बीज; मधूकसार, सैन्धव, रसाञ्जन, एला, बृहदेला, पृथ्वीका।[५]

---

१. त्रयस्त्रिंशदिति प्रोक्ताः वर्गाः.....। (अ० ह० सू० १५.४६)

२. मदनमधुकलम्बानिम्बबिम्बीविशालात्रपुसकुटजमूर्वादेवदालीकृमिघ्नम्।
विदुलदहनचित्राः कोशवत्यौ करञ्जः कणलवणवचैलासर्षपाश्च्छर्दनानि।।
(अ० ह० सू० १५.१)

३. निकुम्भकुम्भत्रिफलागवाक्षीस्नुक्शङ्खिनीनीलिनितिल्वकानि।
शम्याककम्पिल्लकहेमदुग्धा दुग्धं च मूत्रं च विरेचानि। (अ० ह० सू० १५.२)

४. मदनकुटजकुष्ठदेवदालीमधुकवचादशमूलदारुरास्नाः।
यवमिशिकृतवेघनं कुलत्था मधु लवणं त्रिवृता निरूहणानि।। (अ० ह० सू० १५.३)

५. वेल्लापामार्गव्योषदार्वीसुराला बीजं शैरीषं बार्हतं शैग्रवं च।
सारो मधूकः सैन्धवं तार्क्ष्यशैलं त्रुट्यौ पृथ्वीका शोधयन्त्युत्तमाङ्गम्।। (अ० ह० सू० १५.४)

Scanned by CamScanner

५. **वातसंशमन**– देवदारु, तगर, कुष्ठ, दशमूल, बला, अतिबला, वीरतरादिगण, विदार्यादिगण।[१]

६. **पित्तसंशमन**– दूर्वा, अनन्ता, निम्ब, वासा, कपिकच्छू, गुन्द्रा, शतावरी, शीतपाकी, प्रियङ्गु, शालपर्णी, पृश्निपर्णी, कमल, वन्य, न्यग्रोधादिगण, पद्मकादिगण, सारिवादिगण।[२]

७. **कफसंशमन**– आरग्वधादिगण, अर्कादिगण, मुष्ककादिगण, असनादिगण, सुरसादिगण, मुस्तादिगण, वत्सकादिगण।[३]

८. **जीवनीय**– जीवन्ती, काकोली, क्षीरकाकोली, मेदा, महामेदा, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, ऋषभक, जीवक, मधुक।[४]

९. **विदार्यादि**– विदारी, एरण्ड, वृश्चिकाली, पुनर्नवा, सहदेवा, विश्वदेवा, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, कपिकच्छू, जीवनपञ्चमूल, ह्रस्वपञ्चमूल, सारिवा, हंसपादी।[५]

१०. **सारिवादि**– सारिवा, उशीर, गम्भारी, मधूक, शिशिरद्वय (श्वेतचन्दन, रक्तचन्दन), मधुयष्टी, परूषक।[६]

११. **पद्मकादि**– पद्मक, पुण्ड्रक, वृद्धि, तुगाक्षीरी, ऋद्धि, कर्कटशृङ्गी, गुडूची, दश जीवनीय वर्ग के द्रव्य।[७]

१२. **परूषकादि**– परूषक, त्रिफला, द्राक्षा, कट्फल, कतकफल, राजाह्व, दाडिम, शाक।[८]

---

१. भद्रदारु नतं कुष्ठं दशमूलं बलाद्वयम्। वायुं वीरतरादिश्च विदार्यादिश्च नाशयेत्।।
(अ० ह० सू० १५.५)

२. दूर्वाऽनन्ता निम्बवासाऽऽत्मगुप्ता गुन्द्राऽभीरुः शीतपाकी प्रियङ्गुः।
न्यग्रोधादिः पद्मकादिः स्थिरे द्वे पद्मं वन्यं सारिवादिश्च पित्तम्।। (अ० ह० सू० १५.६)

३. आरग्वधादिरर्कादिमुष्ककाद्योऽसनादिकः। सुरसादिः समुस्तादिर्वत्सकादिर्बलासजित्।।
(अ० ह० सू० १५.७)

४. जीवन्ती काकोल्यौ मेदे द्वे मुद्गमाषपर्ण्यौ च। ऋषभकजीवकमधुकं चेति गणो जीवनीयाख्यः।।
(अ० ह० सू० १५.८)

५. विदारिपञ्चाङ्गुलवृश्चिकालीवृश्चीवदेवाद्वयशूर्पपर्ण्यः।
कण्डूकरी जीवनह्रस्वसंज्ञे द्वे पञ्चके गोपसुता त्रिपादी।। (अ० ह० सू० १५.९)

६. सारिवोशीरकाश्मर्यमधूकशिशिरद्वयम्। यष्टी परूषकं....।। (अ० ह० सू० १५.११)

७. पद्मकपुण्ड्रौ वृद्धितुगर्द्ध्यः शृङ्ग्यमृता दश जीवनसंज्ञाः।। (अ० ह० सू० १५.१२)

८. परूषकं वरा द्राक्षा कट्फलं कतकात् फलम्। राजाह्वं दाडिमं शाकं...।।
(अ० ह० सू० १५.१३)

Scanned by CamScanner

१३. **अञ्जनादि**– अञ्जन, प्रियङ्गु, जटामांसी, पद्म, उत्पल, रसाञ्जन, एला, मधुक, नागकेशर।[१]

१४. **पटोलादि**– पटोल, कटुका, चन्दन, मधुस्रवा, गुडूची, पाठा।[२]

१५. **गुडूच्यादि**– गुडूची, पद्मक, निम्ब, धान्यक, रक्तचन्दन।[३]

१६. **आरग्वधादि**– आरग्वध, इन्द्रयव, पाटला, काकतिक्ता, निम्ब, गुडूची, मधुरसा, विकङ्कत, पाठा, भूनिम्ब, सैर्यक, पटोल, करञ्जयुग्म (करञ्ज, चिरबिल्व), सप्तपर्ण, चित्रक, सुषवी, फल (मदनफल), बाण (नील सैर्यक), घोण्टा (बदरभेद)।[४]

१७. **असनादि**– असन (विजयसार), तिनिश, भूर्ज, अर्जुन, चिरबिल्व, खदिर, कदर, भण्डी, शिंशपा, मेषशृङ्गी, त्रिहिम (श्वेतचन्दन, रक्तचन्दन, कालीयक), ताल, पलाश, अगुरु, शाक, शाल, क्रमुक, धव, कलिङ्ग, छागकर्ण, अश्वकर्ण।[५]

१८. **वरुणादि**– वरुण, सैर्यकयुग्म (सैर्यक, नीलपुष्प सैर्यक), शतावरी, चित्रक, मोरट, बिल्व, अजशृङ्गी, बृहतीद्वय (बृहती, कण्टकारी), करञ्जद्वय (करञ्ज, चिरबिल्व), जयाद्वय (अग्निमन्थ, तर्कारी), बहलपल्लव (शिग्रु), दर्भ, रुजाकर (आर्तगल)।[६]

१९. **ऊषकादि**– ऊषक (क्षारविशेष), तुत्थक, हिङ्गु, कासीसद्वय, सैन्धव, शिलाजतु।[७]

२०. **वीरतरादि**– वेल्लन्तर, अग्निमन्थ, बूक (ईश्वरमल्लिका), वृष, पाषाणभेद, गोकण्टक (गोक्षुर), इत्कट, सैर्यक, बाण (नीलपुष्प सैर्यक), काश, वन्दाक, नल, कुशद्वय (कुश, दर्भ), गुण्ठ, गुन्द्रा, श्योनाक, मोरट, कुरण्ट (सितिवारक), करम्भ, पार्था (सुवर्चला-अ० द०)।[८]

---

१. अञ्जनं फलिनी मांसी पद्मोत्पलरसाञ्जनम्। सैलामधुकनागाह्वं...। (अ० ह० सू० १५.१४)

२. पटोलकटुरोहिणीचन्दनं मधुस्रवागुडूचिपाठान्वितम्। (अ० ह० सू० १५.१५)

३. गुडूचीपद्मकारिष्टधान्यकारक्तचन्दनम्। (अ० ह० सू० १५.१६)

४. आरग्वधेन्द्रयवपाटलिकाकतिक्तानिम्बामृतामधुरसास्रुववृक्षपाठाः।
भूनिम्बसैर्यकपटोलकरञ्जयुग्मसप्तच्छदाग्निसुषवीफलबाणघोण्टाः।।
(अ० ह० सू० १५.१७)

५. असनतिनिशभूर्जश्वेतवाहप्रकीर्याः खदिरकदरभण्डीशिंशपामेषशृङ्ग्यः।
त्रिहिमतलपलाशा जोङ्गकः शाकशालौ क्रमुकधवकलिङ्गच्छागकर्णाश्वकर्णाः।।
(अ० ह० सू० १५.१९)

६. वरुणसैर्यकयुग्मशतावरीदहनमोरटबिल्वविषाणिकाः।
द्विबृहतीद्विकरञ्जजयाद्वयं बहलपल्लवदर्भरुजाकराः।। (अ० ह० सू० १५.२१)

७. ऊषकस्तुत्थकं हिङ्गु कासीसद्वयसैन्धवम्। सशिलाजतु.... (अ० ह० सू० १५.२३)

८. वेल्लन्तरारणिकबूकवृषाश्मभेदगोकण्टकेत्कटसहचरबाणकाशाः।
वृक्षादनीनलकुशद्वयगुण्ठगुन्द्राभल्लूकमोरटकुरण्टकरम्भपार्थाः।। (अ० ह० सू० १५.२४)

Scanned by CamScanner

२१. **रोध्रादि**– रोध्र, शाबररोध्र, पलाश, जिङ्गिणी, सरल, कट्फल, युक्ता (रास्ना), कदम्ब, कदली, अशोक, एलवालुक, परिपेलव, मोचा (शल्लकी)।[१]

२२. **अर्कादि**– अर्क, अलर्क, नागदन्ती, विशल्या (कलिहारी), भार्ङ्गी, रास्ना, वृश्चिकाली, प्रकीर्य (चिरबिल्व), अपामार्ग, पीततैला (ज्योतिष्मती), उदकीर्य (करञ्ज), श्वेतायुग्म (श्वेता, महाश्वेता), इङ्गुदी।[२]

२३. **सुरसादि**– सुरसयुग (कृष्ण तुलसी, श्वेत तुलसी), फणिज्झक, कालमाला, विडङ्ग, खरबुस, मूषाकर्णी, कट्फल, कासमर्द, क्षवक (छिक्किका), सरसी (कपित्थपर्णी), भार्ङ्गी, कार्मुका, काकमाची, कुलहल (मुण्डी), विषमुष्टी, भूस्तृण, भूतकोशी।[३]

२४. **मुष्ककादि**– मुष्कक, स्नुही, त्रिफला, चित्रक, पलाश, धव, शिंशपा।[४]

२५. **वत्सकादि**– कुटज, मूर्वा, भार्ङ्गी, कटुका, मरिच, अतिविषा, गण्डीर, एला, पाठा, अजाजी (कृष्णजीरक), कट्वङ्गफल, अजमोद, सर्षप, वचा, जीरक, हिङ्गु विडङ्ग, अजगन्धा, पञ्चकोल।[५]

२६. **वचादि**– वचा, मुस्तक, देवाह्व (देवदारु), शुण्ठी, अतिविषा, हरीतकी।[६]

२७. **हरिद्रादि**– हरिद्रा, दारुहरिद्रा, मधुयष्टी, पृश्निपर्णी, इन्द्रयव।[७] कुटज बीज

२८. **प्रियङ्ग्वादि**– प्रियङ्गुपुष्प, अञ्जनयुग्म (रसाञ्जन, स्रोतोञ्जन), पद्मा, पद्मकेशर, मञ्जिष्ठा, अनन्ता, मानद्रुम, मोचरस, समङ्गा (लज्जालु), पुन्नाग, चन्दन, धातकी।[८]

---

१. रोध्रशाबरकरोध्रपलाशा जिङ्गिणीसरलकट्फलयुक्ताः।
कुत्सिताम्बकदलीगतशोकाः सैलवालुपरिपेलवमोचाः।। (अ० ह० सू० १५.२६)

२. अर्कालर्कौ नागदन्ती विशल्या भार्ङ्गी रास्ना वृश्चिकाली प्रकीर्या।
प्रत्यक्पुष्पी पीततैलोदकीर्या श्वेतायुग्मं तापसानां च वृक्षः।। (अ० ह० सू० १५.२८)

३. सुरसयुगफणिज्जं कालमाला विडङ्गं खरबुसवृषकर्णीकट्फलं कासमर्दः।
क्षवकसरसिभार्ङ्गीकार्मुकाः काकमाची कुलहलविषमुष्टीभूस्तृणो भूतकेशी।।
(अ० ह० सू० १५.३०)

४. मुष्ककस्नुग्वराद्वीपिपलाशधवशिंशपाः। (अ० ह० सू० १५.३२)

५. वत्सकमूर्वाभार्ङ्गीकटुका मरीचं घुणप्रिया च गण्डीरम्।
एला पाठाऽजाजी कट्वङ्गफलाजमोदसिद्धार्थवचाः।।
जीरकहिङ्गुविडङ्गं पशुगन्धा पञ्चकोलं...। (अ० ह० सू० १५.३३-)

६. वचाजलददेवाह्वनागरातिविषाभयाः। (अ० ह० सू० १५.३५)

७. हरिद्राद्वययष्ट्याह्वकलशीकुटजोद्भवाः। (अ० ह० सू० १५.३५)

८. प्रियङ्गुपुष्पाञ्जनयुग्मपद्माः पद्माद्रजो योजनवल्ल्यनन्ता।
मानद्रुमो मोचरसः समङ्गा पुन्नागशीतं मदनीयहेतुः।। (अ० ह० सू० १५.३७)

Scanned by CamScanner

२९. **अम्बष्ठादि**– अम्बष्ठा, मधुक, लज्जालु, नन्दीवृक्ष, पलाश, कच्छुरा, रोध्र, धातकी, बिल्वमज्जा, कट्वङ्ग, कमलकेशर।[१]

३०. **मुस्तादि**– मुस्ता, वचा, चित्रक, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, द्वितिक्ता (कटुका, काकतिक्ता), भल्लातक, पाठा, त्रिफला, अतिविषा, कुष्ठ, एला, हैमवती (श्वेत वचा)।[२]

३१. **न्यग्रोधादि**– न्यग्रोध, अश्वत्थ, सदाफल (उदुम्बर), रोध्र, शाबररोध्र, जम्बूद्वय (जम्बू, काकजम्बू), अर्जुन, कपीतन, सोमवल्क, प्लक्ष, आम्र, वेतस, प्रियाल, पलाश, नन्दी (वृक्ष), बदरी, कदम्ब, विरला (तिन्दुकी), मधुयष्टी, मधूक।[३]

३२. **एलादि**– एलायुग्म (सूक्ष्मैला, स्थूलैला), तुरुष्क, कुष्ठ, फलिनी, जटामांसी, जल (सुगन्धबाला), ध्यामक (रोहिष), स्पृक्का, चोरक, चोच, पत्र, तगर, स्थौणेयक, जातीरस, शुक्ति (नख), व्याघ्रनख, देवदारु, अगुरु, श्रीवासक, केशर, चण्डा, गुग्गुलु, सर्जरस, खपुर (कुन्दुरु), पुन्नागकेशर, नागकेशर।[४]

३३. **श्यामादि**– श्यामा, दन्ती, द्रवन्ती, क्रमुक, कुटरणा (श्वेत त्रिवृत्), शङ्खिनी, सप्तला, स्वर्णक्षीरी, गवाक्षी, शिखरी, रजनक (कम्पिल्लक), गुडूची, करञ्ज, बस्तान्त्री, आरग्वध, बहल (शिग्रु), बहुरस, तीक्ष्णवृक्ष (पीलु) का फल।[५]

वाग्भटोक्त ३३ वर्गों के कर्म एवं प्रयोग

सं०	वर्ग	कर्म एवं प्रयोग
१.	**वमन**	वमन
२.	**विरेचन**	विरेचन

---

१. अम्बष्ठा मधुकं नमस्करी नन्दीवृक्षपलाशकच्छुराः।
रोध्रं धातकिबिल्वपेशिके कट्वङ्गः कमलोद्भवं रजः।। (अ० ह० सू० १५.३८)

२. मुस्तावचाग्निद्विनिशाद्वितिक्ताभल्लातपाठात्रिफलाविषाख्याः।
कुष्ठं त्रुटी हैमवती च... (अ० ह० सू० १५.४०)

३. न्यग्रोधपिप्पलसदाफलरोध्रयुग्मं जम्बूद्वयार्जुनकपीतनसोमवल्काः।
प्लक्षाम्रवञ्जुलपियालपलाशनन्दीकोलीकदम्बविरलामधुकं मधूकम्।।
(अ० ह० सू० १५.४१)

४. एलायुग्मतुरुष्ककुष्ठफलिनीमांसीजलध्यामकं
स्पृक्काचोरकचोचपत्रतगरस्थौणेयजातीरसाः।
शुक्तिर्व्याघ्रनखोऽमराह्वमगुरुः श्रीवासकः कुङ्कुमं
चण्डागुग्गुलुदेवधूपखपुराः पुन्नागनागाह्वयम्।। (अ० ह० सू० १५.४३)

५. श्यामादन्तीद्रवन्तीक्रमुककुटरणाशङ्खिनीचर्मसाह्वा-
स्वर्णक्षीरीगवाक्षीशिखरिरजनकच्छिन्नरोहाकरञ्जाः।
बस्तान्त्री व्याघिघातो बहलबहुरसस्तीक्ष्णवृक्षात् फलानि।। (अ० ह० सू० १५.४५)

Scanned by CamScanner

सं०	वर्ग	कर्म एवं प्रयोग
३.	निरूहण	वातशोधन
४.	शिरोविरेचन	शिर:शोधन
५.	वातशमन	वातशमन
६.	पित्तशमन	पित्तशमन
७.	कफशमन	कफशमन
८.	जीवनीय	जीवनीय
९.	विदार्यादि	वातपित्तशामक, हृद्य, बृंहण; शोष, गुल्म, अङ्गमर्द, श्वास, कास हर।[१]
१०.	सारिवादि	दाहप्रशमन, रक्तपित्त, तृष्णा, ज्वरहर।[२]
११.	पद्मकादि	वातपित्तशामक, स्तन्यजनन, प्रीणन, जीवन, बृंहण, वृष्य।[३]
१२.	परूषकादि	वातशामक, तृष्णा, मूत्रविकार नाशक।[४]
१३.	अञ्जनादि	पित्तशमक, विषघ्न, अन्तर्दाहहर।[५]
१४.	पटोलादि	कफपित्तहर, कुष्ठ, ज्वर, विष, वमन, अरुचि, कामला नाशक।[६]
१५.	गुडूच्यादि	कफपित्तहर, ज्वरघ्न, छर्दि, दाह, तृष्णा नाशक एवं अग्निवर्धक।[७]
१६.	आरग्वधादि	कफशामक, छर्दि, कुष्ठ, विष, ज्वर, कण्डू, प्रमेह नाशक एवं दुष्टव्रण शोधन।[८]
१७.	असनादि	कफशामक, श्वित्र, कुष्ठ, क्रिमि, पाण्डुरोग, प्रमेह, मदोदोष नाशक।[९]

---

१. विदार्यादिरयं हृद्यो बृंहणो वातपित्तहा। शोषगुल्माङ्गमर्दोर्ध्वश्वासकासहरो गण:।।
(अ० हृ० सू० १५.१०)

२. .... हन्ति दाहपित्तास्रतृड्ज्वरान्। (अ० हृ० सू० १५.११)

३. स्तन्यकरा घ्नन्तीरणपित्तं प्रीडनजीवनबृंहणवृष्या:।। (अ० हृ० सू० १५.१२)

४. ... तृण्मूत्रामयवातजित्।। (अ० हृ० सू० १५.१३)

५. ... विषान्तर्दाहपित्तनुत्।। (अ० हृ० सू० १५.१४)

६. निहन्ति कफपित्तकुष्ठज्वरान् विषं वमिमरोचकं कामलाम्।। (अ० हृ० सू० १५.१५)

७. पित्तश्लेष्मज्वरच्छर्दिदाहतृष्णाघ्नमग्निकृत्।। (अ० हृ० सू० १५.१६)

८. आरग्वधादिर्जयति छर्दिकुष्ठविषज्वरान्। कफं कण्डूं प्रमेहं च दुष्टव्रणविशोधन:।।
(अ० हृ० सू० १५.१८)

९. असनादिर्विजयते श्वित्रकुष्ठकफक्रिमीन्। पाण्डुरोगं प्रमेहं च मेदोदोषनिर्बहण:।।
(अ० हृ० सू० १५.२०)

Scanned by CamScanner

१८.	**वरुणादि**	कफशामक, मेदोदोष, मन्दाग्नि, आढ्यवात, शिरःशूल, गुल्म, अन्त:विद्रधि नाशक।[१]
१९.	**ऊषकादि**	कफशामक, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, गुल्म, मेदोदोष हर।[२]
२०.	**वीरतरादि**	वातजन्य रोगनाशक, अश्मरी, शर्करा, मूत्रकृच्छ्र एवं मूत्राघात जन्य पीडाहर।[३]
२१.	**रोध्रादि**	कफशामक, मेदोदोष एवं योनिदोष हर, स्तम्भन, वर्ण्य, विषनाशक।[४]
२२.	**अर्कादि**	कफशामक, मेदोदोष, विष, कृमि, कुष्ठ नाशक, विशेषरूप से व्रणशोधन।[५]
२३.	**सुरसादि**	कफशामक, मेदोदोष, कृमि, प्रतिश्याय, अरुचि, श्वास, कासहर एवं व्रणशोधन।[६]
२४.	**मुष्ककादि**	कफशामक, गुल्म, प्रमेह, अश्मरी, पाण्डुरोग, मेदोदोष, अर्श, शुक्रदोष नाशक।[७]
२५.	**वत्सकादि**	वातकफशामक, मेदोदोष, पीनस, गुल्म, ज्वर, शूल, अर्श नाशक।[८]
२६.	**वचादि**	कफशामक, आमातीसार, मेदोदोष, आढ्यवात, स्तन्यदोष हर।[९]
२७.	**हरिद्रादि**	

---

१. वरुणादि: कफं मेदो मन्दाग्नित्वं नियच्छति। आढ्यवातं शिर:शूलं गुल्मं चान्त: सविद्रधिम्।। (अ० ह० सू० १५.२२)

२. ... कृच्छ्राश्मगुल्ममेद:कफापहम्।। (अ० ह० सू० १५.२३)

३. वर्गो वीरतराद्योऽयं हन्ति वातकृतान् गदान्। अश्मरीशर्करामूत्रकृच्छ्राघातरुजाहर:।। (अ० ह० सू० १५.२५)

४. एष रोध्रादिको नाम मेद:कफहरो गण:। योनिदोषहर: स्तम्भी वर्ण्यो विषविनाशन:।। (अ० ह० सू० १५.२७)

५. अयमर्कादिको वर्ग: कफमेदोविषापह:। कृमिकुष्ठप्रशमनो विशेषाद्व्रणशोधन:।। (अ० ह० सू० १५.२९)

६. सुरसादिर्गण: श्लेष्ममेद:कृमिनिषूदन:। प्रतिश्यायारुचिश्वासकासघ्नो व्रणशोधन:।। (अ० ह० सू० १५.३१)

७. गुल्ममेहाश्मरीपाण्डुमेदोर्श:कफशुक्रजित्। (अ० ह० सू० १५.३२)

८. ... हन्ति। चलकफमेद:पीनसगुल्मज्वरशूलदुर्नाम्न:।। (अ० ह० सू० १५.३४)

९. वचाहरिद्रादिगणावामातीसारनाशनौ। मेद:कफाढ्यपवनस्तन्यदोषनिबर्हणौ।। (अ० ह० सू० १५.३६)

Scanned by CamScanner

२८.	प्रियङ्ग्वादि	पक्वातीसारहर, संधानीय, पित्तशामक, व्रणरोपण।[१]
२९.	अम्बष्ठादि	
३०.	मुस्तादि	योनिरोग तथा स्तन्यरोग नाशक एवं मलपाचन।[२]
३१.	न्यग्रोधादि	व्रण्य, संग्राही, भग्नसंधानकर, मेदोरोग, रक्तपित्त, तृषा, दाह, योनिरोग नाशक।[३]
३२.	एलादि	वातकफशामक, वर्णप्रसादन, विष, कण्डू, पिटिका, कोठ नाशक।[४]
३३.	श्यामादि	कफशामक, गुल्म, विष, अरुचि, हृद्रोग, मूत्रकृच्छ्र नाशक।[५]

अष्टाङ्गसङ्ग्रह

वाग्भट ने अष्टाङ्गसंग्रह में द्विविधौषधविज्ञानीय अध्याय (सू० १२) में सुवर्णादि वर्ग निर्धारित किया। चरकोक्त महाकषायों से ४५ तथा सुश्रुतोक्त वर्गों से २५ को पृथक्-पृथक् अध्यायों में वर्णित किया है। चरक एवं सुश्रुत में वर्णित पञ्चपञ्चमूल को एकत्रकर सप्त पञ्चमूल की गणना की है। चरक ने पञ्चपञ्चमूलशब्द प्रयुक्त किया किन्तु बृहत्, लघु आदि ऐसा कोई उल्लेख नहीं है सुश्रुत ने प्रथम बृहत् या लघु आदि संज्ञाओं का प्रयोग किया। चरक एवं सुश्रुत दोनों के तीन पञ्चमूल (बृहत्, लघु, तृण) तो समान ही हैं किन्तु सुश्रुत ने वल्लीपञ्चमूल एवं कण्टकपञ्चमूल स्वीकार किया। चरक के जो दो पञ्चमूल हैं उनका नाम अष्टांगसंग्रह में जीवनपञ्चमूल एवं मध्यमपञ्चमूल दिया है।

वर्गीकरण के सम्बन्ध में वर्गों की विशेषता–

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर वाग्भटोक्त वर्गीकरण में वर्ग की निम्नाङ्कित विशेषतायें उपलब्ध होती हैं–

१. सुश्रुतोक्त अनेक वर्गों को छोड़ दिया, यथा उत्पलादि, लाक्षादि।

---

१. गणौ प्रियङ्ग्वम्बष्ठादी पक्वातीसारनाशनौ। संधानीयौ हितौ पित्ते व्रणानामपि रोपणौ।।
(अ० ह० सू० १५.३९)

२. ... योनिस्तन्यामयघ्ना मलपाचनाश्च।। (अ० ह० सू० १५.४०)

३. न्यग्रोधादिर्गणो व्रण्यः सङ्ग्राही भग्नसाधनः। मेदःपित्तास्रतृड्दाहयोनिरोगनिर्बहणम्।।
(अ० ह० सू० १५.४२)

४. एलादिको वातकफौ विषं च विनियच्छति। वर्णप्रसादनः कण्डूपिटिकाकोठनाशनः।।
(अ० ह० सू० १५.४४)

५. श्यामाद्यो हन्ति गुल्मं विषमरुचिकफौ हृद्रुजं मूत्रकृच्छ्रम्। (अ० ह० सू० १५.४५)

Scanned by CamScanner

२. सुश्रुतोक्त धातुओं का वर्ग त्रप्वादि भी नहीं दिया, यद्यपि इनका अन्यत्र रसों के प्रसङ्ग मे उल्लेख है यथा- मधुर वर्ग में सुवर्ण; अम्लवर्ग में रजत; लवण में शीष (त्रपुसीस-अ०सं०); तिक्त में कांस्य, लोह; कटु में मनःशिला, हरताल, (अ०सं०); कषाय में मुक्ता, प्रवाल, अंजन, गैरिक, शंखनाभि। यह वर्ग की नवीनता है।

३. कुछ गणों के नाम परिवर्तित कर दिये गये, यथा- विदारिगन्धादि विदार्यादि हो गया और सालसारादि असनादि। काकोल्यादि यहाँ पद्मकादि नाम से है।

४. वर्गों के अन्तर्गत द्रव्यों में परिवर्तन किया गया है, यथा- विदार्यादिगण में कृष्णसारिवा को छोड़ दिया गया है तथा वीरा एवं जीवन्ती अधिक रक्खा गया है। सारिवादि मे पद्मक के स्थान पर परूषक है। पद्मकादि से द्राक्षा और आरग्वधादि से कुटज एवं मूर्वा निकाल दिया गया तथा मधुरसा का आरग्वधादि में समावेश किया गया है। सालसारादिवर्ग के कालस्कन्ध एवं नक्तमाल नहीं हैं उनके स्थान पर पलाश एवं कलिंग हैं।

५. नये वर्ग की कल्पना भी की गई, यथा- वत्सकादि। यह चरक एवं सुश्रुत में नहीं है।

६. अष्टाङ्गहृदय में आहार द्रव्यों का विवरण सुश्रुत के समान दो वर्गों-द्रवद्रव्य एवं अन्नस्वरूप के रूप में दो सम्बद्ध अध्यायों (सू० ५-६) में किया गया है इसमें वर्ग की विशेषता यह है कि अन्नस्वरूप विज्ञानीय अध्याय में अन्नद्रव्यों का वर्णन समाप्त होने पर एक औषधवर्ग का वर्णन किया गया है जिसमें वर्ग के अतिरिक्त त्रिफला, त्रिजात, चतुर्जात, त्रिकटु, पञ्चकोल और पञ्चपञ्चमूलों का (चरकानुसार) विभाग है। इससे परवर्ती निघण्टुकारों के विषयवस्तु व्यवस्थित करने में मार्ग दर्शन मिला।

अष्टाङ्गहृदय एवं अष्टाङ्गसङ्ग्रह में वीरतर्वादिगण किञ्चित् भिन्न है यथा- वीरतर्वादिगण के प्रसङ्ग में अष्टाङ्गहृदय में वेल्लन्तर शब्द से गण का प्रारम्भ होता है जब कि अष्टाङ्गसङ्ग्रह में वीरतर है यद्यपि गण का नाम वीरतर ही है। अष्टाङ्गहृदय में वृष है इसके स्थान पर अष्टाङ्गसङ्ग्रह में वशिर है।

*

Scanned by CamScanner

अष्टम अध्याय

रसशास्त्र में प्रयुक्त द्रव्यों का कर्मात्मक वर्गीकरण

१. **शोधनत्रितय**– काँच, सुहागा, सौवीराञ्जन। इसमें कई लोग सौवीराञ्जन के स्थान में रसकर्पूर डालते हैं।[१] ये धातुओं का शोधन करते हैं।

२. **द्रावक गण**– गुञ्जा, मधु, गुड, सर्पि, सुहागा और गुग्गुलु।[२]

३. **मित्रपञ्चक**– घृत, गुञ्जा, सुहागा, मधु और गुग्गुलु।[३] यह भी द्रावक है।

४. **कूष्माण्डादि गण**– कूष्माण्ड, तुलसी, लाक्षा, खाँड, शतपुष्पा, लवङ्ग, वत्सनाभ, तण्डुलीयकमूल।[४] यह गण अमूर्च्छित पारद से उत्पन्न विकारों को शान्त करता है।

५. **नियामक गण**– महाबला, नागबला, गोरखइमली, पुनर्नवा, मूषाकर्णी, सैरेयक, वासा, काकमाची, गोक्षुर, शरपुङ्खा, विष्णुक्रान्ता, तण्डुलीयक, मण्डूकपर्णी, तुलसी, बला, अपराजिता, शतावरी, शङ्खपुष्पी, श्वेत अर्क, धत्तूर, चक्रमर्द, करञ्ज, ब्रह्मदण्डी, शिखण्डिनी (मयूरशिखा), गुडूची, सैन्धव, पाठा, मृगाक्षी (इन्द्रवारुणी), सोमवल्ली। ये द्रव्य पारद का नियामन करते हैं।[५]

---

१. काचटङ्कणसौवीरं शोधनत्रितयं प्रिये। (रसार्णव ५)

२. गुञ्जा मधु गुडः सर्पिः सौभाग्यं गुग्गुलुस्तथा। पूर्वाचार्यैः कीर्त्तितोऽयं धातूनां द्रावको गणः।।
(र० त० २.३५)

३. आज्यं गुञ्जाऽथ सौभाग्यं क्षौद्रं च पुरसंज्ञकम्। एतत्तु मिलितं विज्ञैर्मित्रपञ्चकमुच्यते।।
(र० त० २.३७)

४. कूष्माण्डस्तुलसी लाक्षा खण्डश्च शतपुष्पिका। लवङ्गं वत्सनाभश्च तण्डुलीयस्य मूलकम्।।
कूष्माण्डादिगणो ह्येष पूर्वाचार्यैर्निरूपितः। अमूर्च्छितामृतरसविकारकुलकण्डनः।।
(र० त० ७.१०६-१०७)

५. महाबला नागबला यवचिञ्चा पुनर्नवा। आखुपर्णी सहचरा वासिका काकमाचिका।।
गोक्षुरः शरपुङ्खा च विष्णुक्रान्ता घनध्वनिः। मण्डूकपर्णी तुलसी बला च गिरिकर्णिका।।
शतावरी शङ्खपुष्पी श्वेतार्कः कनकाह्वयः। चक्रमर्दः करञ्जश्च ब्रह्मदण्डी शिखण्डिनी।।
गुडूची सैन्धवं पाठा मृगाक्षी सोमवल्लिका। नियामकगणो ह्येष प्रोक्तो रसविशारदैः।।
(र० त० ५.९१-९४)

Scanned by CamScanner

६. **मारक गण**– विष्णुक्रान्ता, देवदाली, सर्पाक्षी, सहदेवी, लाक्षा, पुनर्नवा, अर्क, हुरहुर, लाङ्गली, चाण्डालिनीकन्द, काकमाची, विदारी, बला, स्नुही, जयन्ती, हस्तिशुण्डी, कदली, कोशातकी, शुण्ठी, वाकुची, हरिद्राद्वय, काकजङ्घा, काकनासा, तुलसी, शतावरी, मूषाकर्णी, ब्रह्मदण्डी, दूर्वा, शरपुङ्खा, चक्रमर्द, कदम्ब, पिप्पली, पुनर्नवा रक्त, कटुतुम्बी, इन्द्रायण, हंसपदी, शङ्खपुष्पी, चमेली, मूर्वा, लज्जालु, सर्षप, तिलपर्णी, श्वेतापराजिता, बन्ध्याकर्कोटकी, धत्तूर, गुडूची, प्रसारणी, भृङ्गराज, हिंगु, मत्स्याक्षी, शोभाञ्जन, पलाश, गोरखइमली, मण्डूकपर्णी, चित्रक, शेफाली, मुशली, वचा।[१]

७. **लौहमारक गण**– त्रिफला, शतावरी, सिंहिका (बृहती), तालमूली, नीलोत्पल, ह्रीबेर, दशमूल, पुनर्नवा, वृद्धदारुकमूल, भृङ्गराज, शुण्ठी, विडङ्ग, करञ्ज, शोभाञ्जन, निर्गुण्डी, तुलसी, एरण्डमूल, हस्तिकर्णपलाश, पर्पट, चन्दन।[२]

८. **वातहर गण**– एरण्डमूल, रास्ना, दशमूल, प्रसारणी, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, शतावरी, पुनर्नवा, अश्वगन्धा, गुडूची, जटामांसी, बला, नागबला।[३]

९. **पित्तनाशक गण**– उशीर, ह्रीबेर, बृहती, चिरायता, शतावरी, पटोल, चन्दन, गुडूची, कमल, तालमूली, पर्पट, शाल्मलीमूल, शर्करा, लाक्षा।[४]

१०. **कफनाशक गण**– रास्ना, मरिच, चव्य, ताम्बूल, शुण्ठी, एरण्ड, पिप्पलीमूल, तुलसी, आर्द्रक, भार्ङ्गी, रक्तार्क पुष्प, मूर्वा, शोभाञ्जन, बिभीतक।[५]

---

१. विष्णुक्रान्ता देवदाली सर्पाक्षी सहदेविका। (र० त० ७.९)

२. त्रिफला शतमूली च सिंहिका तालमूलिका। नीलोत्पलं च ह्रीबेरं दशमूलं पुनर्नवा।।
वृद्धदारुकमूलञ्च भृङ्गं विश्वं विडङ्गकम्। करञ्जशिग्रुनिर्गुण्डीसुरसैरण्डमूलकम्।।
हस्तिकर्णपलाशश्च पर्पटश्चन्दनं तथा। समाख्यातो गणोऽयं तु लौहमारकसंज्ञकः।।
(र० त० २०.४२-४४)

३. एरण्डमूलं रास्नाऽथ दशमूलं प्रसारणी। मुद्गपर्णी माषपर्णी शतमूली पुनर्नवा।।
अश्वगन्धाऽमृता मांसी बला नागबला तथा। गणो वातहरोऽयन्तु वातामयहरः परम्।।
(र० त० २०.४५-४६)

४. उशीरनीरसिंहिकाकिरातभुरिपुत्रिकाः। पटोलचन्दनामृतासरोजतालमूलिकाः।।
सुतिक्तशाल्मलीशिफासितामहीरुहामयाः। गणस्तु पित्तनाशको ह्ययं तु पित्तरोगहृत्।।
(र० त० २०.४७-४८)

५. रास्ना मरिचं चविका नागिनी विश्वभेषजम्। एरण्डः पिप्पलीमूलं तुलसी शृङ्गवेरकम्।।
भार्ङ्गी रक्तार्ककुसुमं मूर्वा शिग्रु बिभीतकम्। परं बलासगदजिद् गणोऽयं कफनाशकः।।
(र० त० २०.४९-५०)

Scanned by CamScanner

नवम अध्याय

सांस्थानिक कर्मात्मक वर्गीकरण

(Systemic pharmacological classification)

नाडी-संस्थान पर कर्म करने वाले द्रव्य

१. **मेध्य**– ब्राह्मी, शङ्खपुष्पी, यष्टीमधु, गुडूची, स्वर्ण, रजत, घृत, केशर, ज्योतिष्मती, कूष्माण्ड, मण्डूकपर्णी, उस्तखुद्दूस, कस्तूरी।

२. **मदकारी** (Narcotics)– मद्य, अहिफेन, विजया, धतूर।

३. **संज्ञास्थापन**– वचा, जटामांसी, कट्फल, अरिमेद, ब्राह्मी, गुग्गुल, कटुका, हिङ्गु, नख।

४. **निद्राजनन** (Hypnotics)– मद्य, अहिफेन, विजया, सूची, सर्गपन्धा, अलाबू, वाताद, उपोदिका, अकरकरा।

५. **निद्राहर**– लंघन और रूक्षण द्रव्य, यथा– यव आदि।

६. **वेदनास्थापन** (Analgesics)– शाल, कट्फल, कदम्ब, पद्मक, तुम्ब, मोचरस, शिरीष, वञ्जुल, एलवालुक, अशोक, अहिफेन, धतूर, सूची, पारसीक यवानी, गुग्गुलु, यवानी, अजमोदा, कर्पूर, एरण्ड, अङ्कोल, कार्पास, प्रसारणी, तगर, निर्गुण्डी, पलाण्डु, रसोन, वत्सनाभ, पृश्निपर्णी, करवीर, पीलु, देवदारु, मधूक, सुरञ्जान, चन्द्रशूर, बीजक, मेदासक, मुचकुन्द।

७. **आक्षेपजनन**– कुपीलु।

८. **आक्षेपशमन**– ऊदसलीब, अम्बर, कस्तूरी, जुन्दवेदस्तर, भूर्ज।

इन्द्रियाधिष्ठानों पर कर्म करने वाले द्रव्य

(क) **नेत्र**–

१. **चक्षुष्य**– रसाञ्जन, स्फटिका, अहिफेन, कर्पूर, लोध्र, तुत्थ, शङ्ख, त्रिफला, मधुयुष्टी, गोघृत, ममीरा, पियाराँगा, चक्षुष्या, कतक।

२. **दृष्टिकाविकासक** (Mydriatics)– धतूर।

३. **दृष्टिकासंकोचक** (Myotics)– अहिफेन।

Scanned by CamScanner

(ख) **कर्ण**–

कर्ण्य– तैल, सुरा, रसाञ्जन, बिल्व, धतूर, निम्ब, अहिफेन, तरुणी, सुदर्शन, पारिभद्र, अपामार्ग, समुद्रफेन।

(ग) **नासा**–

शिरोविरेचन– ज्योतिष्मती, क्षवक, मरिच, पिप्पली, विडङ्ग, शिग्रु, सर्षप, अपामार्ग, अपराजिता, तुम्बुरु, अजमोदा, जीरक, एला, तुलसी, लशुन, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, शुण्ठी, पीलु।

(घ) **रसना**– आकारकरभ।

(च) **त्वचा**–

१. **स्वेदजनन** (Diaphoretics)– कर्पूर, तम्बाकू, मद्य, अहिफेन, मरिच, तुलसी, वत्सनाभ, हिंगुल, टङ्कण, मुस्तक, सहदेवी।
२. **स्वेदोपग**– शोभाञ्जन, एरण्ड, अर्क, वृश्चीर, पुनर्नवा, यव, तिल, कुलत्थ, माष, बदर।
३. **स्वेदापनयन**– पारसीक यवानी, धत्तूर, यशद, उशीर, कुपीलु, कषायद्रव्य।
४. **रोमसञ्जनन**– लङ्का, कुनयन, तैलमक्षिका, हस्तिदन्त, रसाञ्जन।
५. **रोमशातन**– क्षर, शङ्खभस्म, हरताल, कुसुम्भ तैल।
६. **केश्य**–
   (क) **केशवर्धन**– नारिकेल, तिल, बिभीतक, गुञ्जा, त्रिफला, तैलमक्षिका।
   (ख) **केशरञ्जन**– भृङ्गराज, केशराज, बिभीतकमज्जा, आम्रास्थि, त्रिफला, नीलिनी, मदयन्तिका, जपा, लौह, मण्डूर, सैरेयक।
७. **प्रतिक्षोभक** (Counter-irritants)–
   (क) **रक्तोत्क्लेशक** (Rubefacient)– तैलमक्षिका, राजिका, अजगन्धा, मरिच, लंका, उड़नशील तैल।
   (ख) **अरुष्कर** (Vasicant)– भल्लातक।
   (ग) **क्षारण** (Caustics)– क्षार।
८. **व्रणहर**–
   (क) **पाचन**– तिल, सर्षप, अतसी।
   (ख) **दारण**– चित्रक, क्षार, कपोतविट्।
   (ग) **प्रपीडन**– शाल्मली, यव, गोधूम, माष।
   (घ) **शोधन**– निम्ब, पटोल, तिल, सारिवा।
   (च) **रोपण**– पञ्चवल्कल, मधुक, धातकी।

Scanned by CamScanner

९. **स्नेहन**– घृत, तैल, वसा, मज्जा।

१०. **स्नेहोपग**– मृद्वीका, गुडूची, मधुयष्टी, विदारी, मेदा, काकोली, जीवन्ती, जीवक, शालपर्णी, श्लेष्मातक।

११. **रूक्षण**– यव, भृष्टान्न आदि।

१२. **वर्ण्य**– केशर, चन्दन, तुङ्ग, पद्मक, उशीर, मधुयष्टी, मञ्जिष्ठा, विदारी, केतकी, सारिवा, दूर्वा, लोध्रादिगण, एलादिगण।

१३. **कण्डूघ्न**– चन्दन, नलद, कृतमाल, नक्तमाल, निम्ब, कुटज, सर्षप, मधुक, दारुहरिद्रा, मुस्तक, जयन्ती, मुण्डी, भृङ्गराज, अरण्यजीरक, मण्डूकपर्णी, जलनिम्ब, गन्धक, आरग्वधादि, एलादि, पटोलादि गण।

१४. **कुष्ठघ्न**– खदिर, अभया, आमलक, हरिद्रा, भल्लातक, आरग्वध, करवीर, विडङ्ग, जातीप्रवाल, तुवरक, सप्तपर्ण, तिनिश, सैरेयक, चक्रमर्द, यूथिकपर्णी, वाकुची, काकोदुम्बर, मदयन्तिका।

१५. **उदर्दप्रशमन**– तिन्दुक, प्रियाल, बदर, खदिर, कदर, सप्तपर्ण, अश्वकर्ण, अर्जुन, असन, अरिमेद, एलादिगण।

रक्तवह-संस्थान पर कर्म करने वाले द्रव्य

१. **हृद्य** (Cardiac tonics)– अर्जुन, हृत्पत्री, कुटकी, आमलकी, करवीरमूल, गोजिह्वा, वेतस, कपूर, वनपलाण्डु, शैलेय, ताम्बूल, स्वर्ण, मुक्ता कोश।

२. **हृदयोत्तेजक** (Cardiac stimulants)– तम्बाकू, सूची, सोम, पारसीक यवानी, कॉफी, वत्सनाभ (शोधित), कस्तूरी।

३. **हृदयावसादक** (Cardiac depressants)– वत्सनाभ (अशुद्ध), हृत्पत्री, अहिफेन।

४. **रक्तभारवर्धक**– कुपीलु, हृत्पत्री, कर्पूर, मद्य, कॉफी, विदाही द्रव्य, सोम, अन्नामय।

५. **रक्तभारशामक**– मादकद्रव्य, ज्वरघ्न द्रव्य, सर्पगन्धा, स्वेदन द्रव्य, शंखपुष्पी, भृङ्गराज।

रसवह-संस्थान पर कर्म करने वाले द्रव्य

१. **शोथहर**– पाटला, अग्निमन्थ, श्योनाक, बिल्व, काश्मर्य, बृहती, कण्टकारी, शालपर्णी, पृश्निपर्णी, गोक्षुर, वनहरिद्रा, मानकन्द, व्याघ्रनखी, अधःपुष्पी, निर्गुण्डी।

Scanned by CamScanner

२. **शोथजनन**– अम्ल, लवण, कटु, तिक्त, उष्ण, तीक्ष्ण और रूक्ष द्रव्य।

३. **गण्डमालानाशक**– काञ्चनार, मुण्डी, गुडूची, सारिवा, गुग्गुल, लौह, भल्लातक।

श्वसन-संस्थान पर कर्म करने वाले द्रव्य

१. **श्वसनोत्तेजक**– कुपीलु, कॉफी, सूची, सोम, कपूर आदि।

२. **श्वसनावसादक**– अहिफेन, वत्सनाभ, संज्ञाहर द्रव्य।

३. **कफनि:सारक** (Expectorants)– वामकद्रव्य, गन्धद्रव्य, श्रीवेष्टक, हिङ्गु, ऊषक, शिलारस, त्वक्, लोबान, लवङ्ग, पलाण्डु, वासा, धन्वयास, खूबकलाँ, तोदरी, बनफ्शा, खत्मी, जूफा, बोल, कुन्दरू, रूमी मस्तगी, श्लेष्मातक, गोजिह्वा, यष्टीमधु, एला, तालीश, बिभीतक, सितोपला।

४. **कासहर** (Bronchial sedatives or anti-tussive)– द्राक्षा, अभया, आमलक, पिप्पली, दुरालभा, शृङ्गी, कण्टकारी, पुनर्नवा, भूम्यामलकी, हपुषा, अगस्त्य, कासमर्द, वंशलोचन, विदारिगन्धादि और सुरसादि गण, सूची, अहिफेन, प्रवाल, शृङ्ग, मुक्ता।

५. **श्लेष्मपूतिहर**– ज्योतिष्मती, तैलपर्णी, सरल, गन्धद्रव्य, हिंगु, रसोन।

६. **श्वासहर** (Bronchial antispasmodics)– शटी, पुष्करमूल, अम्लवेतस, एला, हिङ्गु, अगुरु, सुरसा, जीवन्ती, भूम्यामलकी, चोरपुष्पी, भार्ङ्गी, दुग्धिका, अर्क, सूची, पारसीक यवानी, धतूर, सोम, अद्रिनिलीन, अहिफेनफलसत्त्व, मादकद्रव्य, अहिफेनसत्त्व, दशमूल, विदारिगन्धादि तथा सुरसादि गण।

७. **हिक्कानिग्रहण**– शटी, पुष्करमूल, बदरबीज, कण्टकारी, बृहती, वन्दाक, अभया, पिप्पली, दुरालभा, कर्कटशृङ्गी, मयूरपुच्छ, हरिद्रा, यव, एरण्डमूल, मन:शिला, कुश, उशीर।

८. **कण्ठ्य**– सारिवा, इक्षुमूल, मधुयष्टी, पिप्पली, द्राक्षा, विदारी, कट्फल, हंसपदी, बृहती, कण्टकारी, मलयवचा, सैन्धव, नौसादर।

पाचन-संस्थान पर कर्म करने वाले द्रव्य

(क) मुख–

१. **लालाप्रसेकजनन** (Sialagogue)– अम्ल, तिक्त, कटु, गन्धद्रव्य, मद्य, वामकद्रव्य, तुम्बुरु, आकारकरभ, राजिका, तम्बाकू, लंका।

२. **लालाप्रसेकशमन** (Anti-sialagogue)– कषायस्कन्ध, टङ्कण, सूची, अहिफेन, पारसीक यवानी, धत्तूर।

Scanned by CamScanner

३. **तृष्णानिग्रहण**– नागर, धन्वयास, मुस्त, पर्पट, चन्दन, किरात, गुडूची, ह्रीबेर, धान्यक, पटोल, आलूबुखारा, द्राक्षा, एला, आमलकी, बिही, मिष्टनिम्बू, परूषकादि, सारिवादि, उत्पलादि तथा त्रप्वादि गण।

४. **दुर्गन्धहर**– गन्धद्रव्य, जातीफल, लताकस्तूरी, पूग, लवङ्ग, कङ्कोल, ताम्बूल, सूक्ष्मैला, कर्पूर।

५. **वैशद्यकर**– कटु, तिक्त, कषाय, ताम्बूल, पूग, जंबीरतृण, गंधतृण।

६. **दन्त्य**–

(क) **दन्तशोधन**– करञ्ज, करवीर, अर्क, मालती, ककुभ, असन, निम्ब, तुम्बुरु, अकरकरा, मरिच।

(ख) **दन्तदार्ढ्यकर**– त्रिफला, बकुल, बब्बूल, खदिर, मायाफल, गैरिक, खटिक।

(ख) आमाशय–

१. **तृप्तिघ्न**– नागर, चव्य, चित्रक, विडङ्ग, मूर्वा, गुडूची, वचा, मुस्तक, पिप्पली, पटोल, धान्यक, अजमोदा, बृहत्यादि, गुडूच्यादि तथा आमलक्यादि गण।

२. **रोचन**– अम्लस्कन्ध, हृद्य गण, परूषकादि गण (आम्र, आम्रातक, लकुच, करमर्द, वृक्षाम्ल, अम्लवेतस, कुवल, बदर, दाडिम, मातुलुङ्ग, भव्य, अम्लिका, चाङ्गेरी, बीजपूर, जंबीर, कर्मरङ्ग, निम्बुक, नारङ्ग, तिन्तिडीक, चुक्र आदि।)

३. **दीपन**– कटु, तिक्त, गन्धद्रव्य, मद्य, लवण, अतिविषा, कलम्बा, चित्रक, किरततिक्त, हिङ्गु, मरिच, त्रिफला, मिश्रेया, शतपुष्पा, जीरक, कृष्णजीरक, यवानी, आर्द्रक, शुण्ठी, आम्रगन्धिहरिद्रा, शैलेय, तक्र, पिप्पल्यादि, बिल्वादि, गुडूच्यादि, आमलक्यादि गण।

४. **पाचन**– अम्ल, धान्यक, मुस्तक, पिप्पलीमूल, मरिच, शुण्ठी, लवङ्ग, शैलेय, मूलक, एरण्डकर्कटी, नागकेसर, मुस्तादि गण।

५. **अग्निसादक**– कषाय द्रव्य, अहिफेन, धातु, क्षार, तैल, वसा, मज्जा, सूची, अतिशीत, अपामार्गबीज।

६. **विदाही**– उष्ण, तीक्ष्ण, सर्षप, राजिका, लंका।

७. **विदाहशामक** (अम्लतानाशक)– मधुर-तिक्त द्रव्य, पटोलादि गण, क्षार, आमलकी, नारिकेल।

८. **वमन**– क्षोभक, उष्णवीर्य द्रव्य, मदनफल, जीमूत, कुटज, अरिष्टक, कोशातकी, धामार्गव, इक्ष्वाकु, काकतुण्डी, सर्षप, तुत्थ।

Scanned by CamScanner

९. **वमनोपग**– मधु, मधुक, कोविदार, कर्बुदार, नीप, विदुल, बिम्बी, शणपुष्पी, सदापुष्पी, अपामार्ग, सैन्धव।

१०. **छर्दिनिग्रहण**– जम्बू, आम्रपल्लव, मातुलुङ्ग, अम्लबदर, दाडिम, यव, षष्टिक, उशीर, मृत्, लाजा, आरग्वधादि, पटोलादि तथा गुडूच्यादि गण।

(ग) **अन्त्र**–

१. **अनुलोमन**– कटु, गन्धद्रव्य, कपूर, मद्य, पिपरमिण्ट, हिङ्गु, नाडीहिङ्गु, तेजपत्र, मिश्रेया, शतपुष्पा, यवानी, मरुवक, पूतिहा।

२. **विष्टम्भी**– लोणिका, कदम्ब, पनस, लकुच।

३. **भेदनीय (गुल्मभेदन)**– चित्रक।

४. **पुरीषजनन**– माष, यव, पत्रशाक।

५. **विरेचन**–

(क) **मृदुविरेचन** (मलानुलोमन)– यासशर्करा, गन्धक, अञ्जीर, आलूबुखारा, हरीतकी, अमलतास, एरण्डतैल, इसबगोल, वास्तूक, जैतून तैल।

(ख) **सुखविरेचन**– त्रिवृत्, कुटकी, स्वर्णक्षीरी, अर्कक्षीर, कम्पिल्लक।

(ग) **तीक्ष्णविरेचन**– जयपाल, दन्ती, स्नुही, कङ्कुष्ठ।

(घ) **पित्तविरेचन**– पारद, गिरिपर्पट, अम्लपर्णी, एलुआ, कुटकी।

५. **विरेचनोपग**– द्राक्षा, काश्मर्यफल, परूषक, अभया, आमलक, बिभीतक, कुवल, बदर, कर्कन्धु, पीलु।

६. **उभयतोभागहर**– देवदाली।

७. **पुरीषसंग्रहणीय**–

(क) **ग्राही**– उष्णवीर्य, अनुलोमन और गन्धद्रव्य– शुण्ठी, जीरक, पिप्पली, जातीफल, बिल्व, कृष्णजीरक।

(ख) **स्तम्भन**– शीतवीर्य, कषायद्रव्य; अहिफेन, कुटज, श्योनाक, अरलु, मोचरस, धातकी, लोध्र, खदिर, उदुम्बर, बब्बूल, मरोड़फली, कदली, माजूफल, स्फटिका।

८. **पुरीषविरजनीय**– जम्बू, शल्लकीत्वक्, यष्टीमधु, शाल्मली, श्रीवेष्टक, भृष्टमृत्, पयस्या, उत्पल, तिलकण।

९. **भेदनीय (पुरीषभेदनीय)**– कटुका।

१०. **शूलप्रशमन**– पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, चित्रक, शुण्ठी, मरिच, अजमोदा, यवानी, अजगन्धा, अजाजी, चन्द्रशूर, यष्टीमधु, नारिकेल, सूची, अहिफेन।

११. **आस्थापन**– रसों के अनुसार छः स्कन्धों में विभक्त हैं (देखिये पृष्ठ २९)।

Scanned by CamScanner

१२. **आस्थापनोपग**– त्रिवृत्, बिल्व, पिप्पली, कुष्ठ, सर्षप, वचा, इन्द्रयव, शतपुष्पा, यष्टीमधु, मदनफल।

१३. **अनुवासन**—आस्थापन के समान।

१४. **अनुवासनोपग**– रास्ना, देवदारु, बिल्व, मदनफल, शतपुष्पा, पुनर्नवा, गोक्षुर, अग्निमन्थ, श्योनाक।

१५. (क) **अन्तः कृमिघ्न** (Anthelmintics, vermicides or vermifuges)

१. **विशिष्ट**–

गण्डूपदकृमि के लिए– चौहार, पलाशबीज, विडङ्ग, पारिभद्र, इन्द्रयव।

स्फीतकृमि के लिए– कम्पिल्लक, पूग, दाडिमत्वक्।

तन्तुकृमि के लिए– एलुआ, चिरायता, नीम आदि तिक्तद्रव्य।

अङ्कुशकृमि के लिए– यवानीसत्त्व, भल्लातक तैल।

श्लीपदकृमि के लिए– शाखोटक।

स्नायुककृमि के लिए– निर्गुण्डी, शिग्रु।

२. **सामान्य**– अरण्यजीरक, इङ्गुदी, यवानी, अफसन्तीन, बर्बरी।

(ख) **बाह्यकृमिघ्न** (Insecticide)– कट्फल, निम्ब, वचा, पारद, धत्तूर।

१६. **अर्शोघ्न**–

(क) **रक्तार्शोघ्न**– कुटज, इन्द्रयव, मूलक, दारुहरिद्रा, कृष्णतिल, नागकेशर, पद्मकाष्ठ, बला, यवासा, अश्वत्थ, वट, लोणिका, चाङ्गेरी, सर्पकञ्चुक।

(ख) **वातार्शोघ्न**– सूरण, अपामार्ग, त्रिवत्, भल्लातक, हरीतकी, शतपुष्पा, चित्रक, चव्य,अतिविषा, वचा, बिल्व, शुण्ठी, करीर, महानिम्ब, वृन्ताक।

यकृत्प्लीहा पर कर्म करने वाले द्रव्य

१. **यकृदुत्तेजक या पित्तस्रावक** (Choleretics)– पित्तलवण, गोरोचन, लवणाम्ल, मांसाहर, गिरिपर्पट, काकतुण्डी, सुरञ्जान, अम्लपर्णी, कालमेघ, कुटकी, सप्तचक्रा, दारुहरिद्रा, पारिजात, दमनक, काकमाची, अपामार्ग, दुग्धफेनी, भृङ्गराज, कासनी, रसकर्पूर, नरसार।

२. **पित्तसारक** (Cholagogues)–

प्रत्यक्ष (Direct)– एरण्डतैल, स्नेहद्रव्य, इक्षुरक।(कोकिलाक्ष)

परोक्ष (Indirect)– मैगसल्फ का अतिशक्तिक विलयन।

३. **पित्तस्रावरोधक** (Anticholagogues)– सूची, पारसीक यवानी, अहिफेन।

Scanned by CamScanner

४. **पित्ताश्मरी भेदन**– इक्षुरक आदि।

५. **यकृत्प्लीहवृद्धिहर**– रोहीतक, कुमारी, किराततिक्त, इन्द्रायण, अर्क, शरपुङ्खा, हपुषा, झावुक।

प्रजनन-संस्थान पर कर्म करने वाले द्रव्य

(क) स्त्री-प्रजनन-संस्थान पर कर्म करने वाले द्रव्य

१. **प्रजास्थापन**– ब्राह्मी, दूर्वा, लक्ष्मणा, हरीतकी, बला, अण्डा, यष्टीमधुक, गोघृत, उत्पलकेशर, शृङ्गाटक, पुष्करबीज, प्रियङ्गु, कशेरु, पद्मक, अतिबला, शालि, षष्टिक, इक्षुमूल, काकोली, न्यग्रोधादिगण, कषायस्कन्ध, स्वर्ण, रजत।

२. **गर्भरोधक**– गुञ्जा, पाठा, कम्पिल्लक, पिप्पली, विडङ्ग।

३. **गर्भाशय-सङ्कोचक** (Ecbolics)–

(क) **प्रत्यक्ष**– केबुक, चित्रक, अपामार्ग, वंश, लाङ्गली, कार्पास, हरमल, सुद्दाव, अन्नामय, पीयूषीन।

(ख) **परोक्ष**– तीक्ष्ण तथा भेदन द्रव्य– तैलमक्षिका, अर्क, स्नुही, अरिष्ट, ज्योतिष्मति, हरीतकी, एलुआ।

४. **गर्भाशय-शामक** (Uterine sedatives)– सूची, खाखससत्त्व, शतावरी, ईश्वरमूल।

५. **आर्त्तवजनन** (Emmenagogue)– उष्ण तथा विदाही द्रव्य यथा सर्षप, मद्य, एलुआ, गर्भाशयसङ्कोचक द्रव्य अल्प मात्रा में, उलटकम्बल, वंश, शण, कुमारी, लौह, कुनयन, स्नेह आदि सामान्य जीवनीय द्रव्य।

६. **आर्त्तवरोधक** (Anti-emmenagogue)– नागकेशर, पूग, वट, लोध्र, अशोक, शाल्मलीपुष्प, जपा, काञ्चनार, मोचरस, कदली।

७. **स्तन्यजनन** (Galactagogue)– वीरण, शालि, षष्टिक, इक्षुवालिका, दर्भ, कुश, काश, गुन्द्र, उत्कट, रोहिष, कत्तृण, विदारी, शतावरी, कार्पासबीज, माष, अश्वगंधा, सुरा, काकोल्यादि गण।

८. **स्तन्यरोधक**– मल्लिका।

९. **स्तन्यशोधन**– पाठा, शुण्ठी, मुस्तक, देवदारु, मूर्वा, गुडूची, इन्द्रयव, किरात-तिक्त, कुटकी, सारिवा, निम्ब, रसाञ्जन, वचादि, हरिद्रादि तथा मुस्तादि गण।

(ख) पुं-प्रजनन-संस्थान पर कर्म करने वाले द्रव्य

१. **वाजीकरण** (Aphrodisiac)–

(क) **शुक्रजनन**– जीवक, ऋषभक, काकोली, क्षीरकाकोली, मेदा,

Scanned by CamScanner

मुद्गपर्णी, माषपर्णी, बन्दाक, कुलिङ्ग, अश्वगंधा, शतावरी, मुशली, मिश्री, कोकिलाक्ष, विदारी, मुञ्जातक, कपिकच्छू, वृषण, घृत, बलाबीज, शाल्मलीमूल, मखान्न, तालमूली।

(ख) **शुक्ररेचन**– कुपीलु, कस्तूरी, कर्पूर, मद्य, भङ्गा, धत्तूर, सोमल, जातीफल, इन्द्रगोप, रेगमाही, फादजहर हैवानी, तैलमक्षिका।

(ग) **शुक्रस्तम्भन**– जातीफल, अहिफेन, आकारकरभ।

(घ) **शुक्रजनन-रेचन** (वाजीकर)– दुग्ध, माष, भल्लातक, अण्डा।

२. **कामसादक** (पुंस्त्वहर या षाण्ढ्यकर)–

(क) **शुक्रनाशन**– क्षार।

(ख) **वेगशामक**– सूची, कर्पूर, तम्बाकू आदि।

३. **शुक्रशोधन**– कुष्ठ, एलवालुक, कट्फल, समुद्रफेन, कदम्बनिर्यास, इक्षु, काण्डेक्षु, तालमखाना, विदार्यादि, कण्टकपञ्चमूल तथा मुष्ककादि गण।

४. **शुक्रशोषण**–

मूत्रवह-संस्थान पर कर्म करने वाले द्रव्य

१. **मूत्रविरेचनीय** (Diuretics)– कङ्कोल, मरिच, अनन्तमूल, हपुषा, श्रीवेष्टक, तैलमक्षिका, मद्य, बन्दाक, रोहिष, गोक्षुर, पाषाणभेद, दर्भ, कुश, काश, भूम्यामलकी, त्रपुष, विदारी, इक्षु, शर्करा, एला, धन्वयास, कूष्माण्ड, आमलकी, नारिकेल, जम्बीरतृण, चञ्चु, कर्कटी, शिलाजतु, परूषकादिगण, नल, मूत्र, अन्ननास, वनपलाण्डु, कॉफी, हत्पत्री, पुनर्नवा, लवण, नरसार, शोरक, स्फटिक, अम्ल, क्षार, रसपुष्प, चन्दन, दुग्ध, अवटु।

२. **मूत्रविरजनीय**– पद्म, उत्पल, नलिन, कुमुद, सौगन्धिक, पुण्डरीक, शतपत्र, यष्टीमधु, प्रियङ्गु, धातकी।

३. **अश्मरीभेदन**– पाषाणभेद, वरुण, कुलत्थ।

४. **मूत्रसङ्ग्रहणीय**– जम्बू, आम्र, प्लक्ष, वट, कपीतन, उदुम्बर, अश्वत्थ, भल्लातक, अश्मन्तक, सोमवल्क, अहिफेन, यशदभस्म, बिम्बी, तिनिश, धव, असन।

५. **मूत्रविशोधन**– टङ्कण, टङ्कणाम्ल, चन्दन, कङ्कोल।

सार्वदैहिक कर्म करने वाले द्रव्य

१. **ज्वरघ्न**–

(क) **सन्तापहर** (Antipyretic)– सहदेवी, मद्य, वत्सनाभ, अञ्जन, सोमल, कुनयन, वेतस, सारिवा, शर्करा, पाठा, मञ्जिष्ठा, द्राक्षा, पीलु, परूषक,

Scanned by CamScanner

अभया, आमलक, बिभीतक, पर्पट, जलनिम्ब, स्वेदजनन द्रव्य, पटोलादि तथा सारिवादि गण।

(ख) **आमपाचन**– तिक्तस्कन्ध, शुण्ठी, चिरायता, त्रायमाण, पटोल, चन्दन, मूर्वा, गुडूची, कुटकी, पारिजात, कारवेल्लक, पिप्पल्यादि, दशमूल, हरिद्रादि तथा वचादि गण।

(ग) **विषमज्वरघ्न** (Antiperiodic)– कुनयन, करञ्ज, सप्तपर्ण, करवीर, तुलसी, द्रोणपुष्पी।

२. **दाहप्रशमन**– कमल, उत्पल, चन्दन, उशीर, सारिवा, गंभारीफल, मधुक, प्रियङ्गु, तूद, एला, शैवाल, लाजा।

३. **शीतप्रशमन**– अगुरु, कस्तूरी, दरियाई नारियल, फादजहर हैवानी।

४. **मधुरकजनन**– आनूपमांसरस, दधि, नवीन धान्य, इक्षुविकार आदि।

५. **मधुरकशमन**– बीजक, कारवेल्लक, बिम्बी, गुडूची, पाठा, शिलाजतु आदि।

सार्वधातुक कर्म करने वाले द्रव्य

१. **जीवनीय**– मधुरस्कन्ध, अष्टवर्ग, जीवन्ती, मधुक, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, मुञ्जातक, विदारी, दुग्ध, घृत, लौह, स्फुरक,काकोल्यादि गण।

२. **आयुष्य**– आमलक, दुग्ध आदि।

३. **सन्धानीय**– मधुक, मधुपर्णी, पृश्निपर्णी, पाठा, लज्जालु, मोचरस, धातकी, लोध्र, प्रियङ्गु, कट्फल, कर्कटक, प्रियङ्ग्वादि, अम्बष्ठादि तथा न्यग्रोधादि गण।

४. **बल्य** (Tonic)–

(क) **सामान्य** (General)– शतावरी, अश्वगंधा, लघुपञ्चमूल, विदारी, वाताद, मुकूलक, अक्षोट, निकोचक, कूर्ममांस, बला, अतिबला, नागबला, मुशली, मखान्न, वाराही।

(ख) **विशिष्ट**–

आमाशय– तिक्त, दीपन।	हृद्य– अर्जुन।
सुषुम्ना– कुपीलु।	नाडीसंस्थान– तगर।

५. **ओजोवर्धक**– दुग्ध।

६. **ओजोह्रासक** (विकाशी)– मद्य, विष, पूग, कोद्रव। (कोदो)

७. **रसायन**– हरीतकी, आमलकी, पिप्पली, विडङ्ग, भल्लातक, गुडूची, नागबला, गुग्गुलु, वृद्धदारु, अश्वगंधा।

Scanned by CamScanner

८. **विष**– वत्सनाभ, शृङ्गी।

९. **विषघ्न**– शिरीष, अपराजिता, निर्विषा, श्लेष्मातक, निर्गुण्डी, छिलहिण्ट, तण्डुलीयक।

१०. **अङ्गमर्दप्रशमन**– काकोली, लघुपञ्चमूल आदि।

धातुओं पर कर्म करने वाले द्रव्य

(क) रसधातु पर कर्म करने वाले द्रव्य

१. **रसवर्धन**– दुग्ध आदि स्निग्ध और आप्य द्रव्य।

२. **रसक्षपण**– यव आदि रूक्ष तथा वायव्य और आकाशीय द्रव्य।

(ख) रक्तधातु पर कर्म करने वाले द्रव्य

शोणितस्थापन–

१. **रक्तवर्धक**–

(क) **रक्तकणवर्धक**– यकृत्सत्व, आमाशयपिष्ट, लौह।
(ख) **रक्तरङ्गवर्धक**– लौह, ताम्र, स्वर्णमाक्षिक, अभ्रक।
(ग) **अम्लवर्धक**– सोमल, स्फुरक, सुधा।
(घ) **क्षारवर्धक**– क्षाराधिक्य, अपामार्ग आदि।

२. **रक्तस्तम्भन** (Haemostatic or coagulants)– नागकेशर, जपा, शाल्मली, लज्जालु, कच्छपपृष्ठ, प्रियङ्गु, पर्णबीज, कूष्माण्ड, आयापान, झण्डु, केशर, दूर्वा, रक्तनिर्यास, कर्कटक, कुकुन्दर, तिन्दुक, कुंभिका, प्रवाल, मुक्ता, शुक्ति, अकीक, तृणकान्त, गैरिक, लोध्र आदि।

३. **रक्तप्रतिस्कन्दन** (Anticoagulants)– रसोन, कुष्ठ, हरिद्रा, चित्रक आदि।

४. **रक्तक्षपण**– सोमल, स्फुरक, गंधक, सरलतैल, वातादाम्ल, मद्य, कुनयन, संज्ञाहर द्रव्य।

५. **रक्तदूषण**– शाक, लवण, क्षार।

६. **रक्तप्रसादन**—अनन्तमूल, उशवा, चोपचीनी, मुण्डी, मञ्जिष्ठा, गुडूची, चिरायता, नीम।

(ग) मांसधातु पर कर्म करने वाले द्रव्य

१. **बृंहण**– राजादन, अश्वगंधा, काकोली, क्षीरकाकोली, बला, कार्पासी, महाबला, विदारी, कपिकच्छू, मुञ्जातक, मृद्वीका, खर्जूर, वाताद, अक्षोट, अभिषुक, मुकूलक, निकोचक, मांस, काकोल्यादि गण।

Scanned by CamScanner

२. **लङ्घन** (लेखन या कर्शन)– मुस्त, कुष्ठ, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, वचा, अतिविषा, कुटकी, चित्रक, चिरबिल्व, हेमवती, यव।

३. **श्रमहर**– द्राक्षा, खर्जूर, प्रियाल, बदर, दाडिम, फल्गु, परूषक, यव, षष्टिक, इक्षु।

४. **उत्सादन**– अपामार्ग, अश्वगंधा, सुवर्चला, काकोल्यादि गण।

५. **अवसादन**– मनःशिला, सैन्धव, काशीश, तुल्य।

(घ) मेदोधातु पर कर्म करने वाले द्रव्य

१. **मेदोवर्धन**– वसा, मेद, घृत।

२. **मेदःक्षपण**– यव, मधु, चणक, गुग्गुलु।

(च) अस्थिधातु पर कर्म करने वाले द्रव्य

१. **अस्थिवर्धन**– कच्छपपृष्ठ, प्रवाल, मुक्ता, शुक्ति।

२. **अस्थिक्षपण**– सुधारहित द्रव्य।

३. **अस्थिसन्धानीय**– अस्थिशृङ्खला।

(छ) मज्जाधातु पर कर्म करने वाले द्रव्य

१. **मज्जावर्धन**– मज्जा।

२. **मज्जाक्षपण**– रूक्ष द्रव्य।

(ज) शुक्रधातु पर कर्म करने वाले द्रव्य

१. **शुक्रवर्धन**– मधुर और स्निग्ध द्रव्य यथा क्षीर घृत, मुशली, कपिकच्छू, माष आदि।

२. **शुक्रक्षपण**– कटु, तिक्त, कषाय, अम्ल तथा लवण रस और रूक्ष द्रव्य– यथा यव, चणक आदि।

स्त्रोतों पर कर्म करने वाले द्रव्य

१. **अभिष्यन्दी**– दधि आदि।

२. **प्रमाथी**– मरिच, मद्य आदि।

दोषों पर कर्म करने वाले द्रव्य

(क) वातदोष पर कर्म करने वाले द्रव्य

१. **वातवर्धन**– शुष्कशाक, श्यामाक, यव, जम्बू आदि। कटु, तिक्त, कषाय, रूक्ष और शीत द्रव्य।

Scanned by CamScanner

२. **वातशमन**– रास्ना, देवदारु, कुष्ठ, हरिद्रा, वरुण, मेषशृङ्गी, बला, अतिबला आदि।

(ख) पित्तदोष पर कर्म करने वाले द्रव्य

१. **पित्तवर्धन**– तिलतैल, पिण्याक, शुक्त, कुलत्थ, सर्षप, अतसी आदि। कटु, अम्ल, लवण, उष्ण और तीक्ष्ण द्रव्य।

२. **पित्तशमन**– चन्दन, हीबेर, उशीर, मञ्जिष्ठा, विदारी, क्षीरकाकोली आदि।

(ग) कफदोष पर कर्म करने वाले द्रव्य

१. **कफवर्धन**– माष, गोधूम, कशेरुक, शृङ्गाटक, वल्लीफल आदि। मधुर, अम्ल, लवण, स्निग्ध और शीत द्रव्य।

२. **कफशमन**– अगुरु, कुष्ठ, हरिद्रा, कर्पूर, कटु आदि।

*

Scanned by CamScanner

दशम अध्याय

मिश्रक वर्गीकरण (Mixed Classification)

सुश्रुत ने सूत्रस्थान ३७वें अध्याय का नाम मिश्रक अध्याय रक्खा है। राजनिघण्टु में भी एक वर्ग का नाम 'मिश्रकादि वर्ग' है। अनेक समकार्य द्रव्यों को एकत्र मिश्रित कर उनका गणरूप में कथन 'मिश्रक' कहलाता है।[१] आजकल इसे 'पारिभाषिक गण' भी कहते हैं। वर्गीकरण के सिद्धान्तों पर यदि ध्यान दिया जाय तब भी 'मिश्रक' संज्ञा सार्थक प्रतीत होती है। मेरे विचार से, इस वर्ग में ऐसे गणों को रक्खा गया है जिनमें रचना और कर्म दोनों का सादृश्य हो, अत एव रचनात्मक और कर्मात्मक वर्गीकरण का एकत्र मिश्रण होने से इसे 'मिश्रक वर्गीकरण' कहना शास्त्रीय भी है और उचित भी। रचनानुसार कुलमूलक वर्गों को 'कुल', कर्मानुसार वर्गों को 'वर्ग' तथा मिश्रक वर्गों को 'गण' कहना उत्तम है। सामान्यत: गण शब्द 'समूह' का वाचक है।[२]

इस गणीकरण की शास्त्रीय परम्परा सुश्रुत से प्रारम्भ होती है जहाँ उन्होंने कर्मात्मक वर्गों को 'गण' संज्ञा दी है[३] और उन वर्गों में 'दशमूल' 'त्रिफला' आदि पारिभाषिक गणों को भी समाविष्ट किया है। चरक में यद्यपि 'शोथहर वर्ग' में दशमूल में निविष्ट सभी द्रव्यों का उल्लेख है किन्तु 'दशमूल' शब्द वहाँ नहीं आया है। पहले बतलाया जा चुका है कि इस वर्गीकरण में आभ्यन्तर साधर्म्य तो कर्ममूलक होता ही है, बाह्य साधर्म्य के भी विभिन्न आधारों का ग्रहण किया जाता है। इन गणों का वैज्ञानिक अध्ययन करने के लिए उन्हें क्रमबद्ध और सुव्यवस्थित करना आवश्यक है। निम्नाङ्कित वर्गीकरण से प्राचीन गणीकरण का आधार स्पष्ट हो जायगा। इसमें औद्भिद, जाङ्गम और पार्थिव द्रव्यों के गण पृथक्-पृथक् व्यवस्थित किये गये हैं।

औद्भिद गण (वनस्पति)

(क) **आकृतिगत साधर्म्य** (Morphological Similarity)–

१. **मूल**– इन गणों के द्रव्यों का मूल प्रयुक्त होता है यथा दशमूल, तृणपञ्चमूल आदि।

---

१. अत्रौषधानां मिश्रीकृत्य गणरूपतयाऽभिधानादस्य मिश्रकसंज्ञा। (सु० सू० ३६.१-२-चक्र०)

२. गण्यन्त इति गणा: समूहा:। (सु० सू० ३८.३-ड०)

३. समासेन सप्तत्रिंशद् द्रव्यगणा भवन्ति। (सु० सू० ३८.३)

Scanned by CamScanner

बृहत्पञ्चमूल– बिल्व, अग्निमन्थ, श्योनाक, पाटला और गम्भारी ये पाँच द्रव्य इस गण में हैं।[१] इन द्रव्यों के मूल औषधार्थ प्रयुक्त होते हैं और इन सभी के वृक्ष बड़े होते हैं इसलिए इसकी संज्ञा 'बृहत्पञ्चमूल' है।

गुणकर्म– यह गण लघु, रस में तिक्त, कषाय और किंचित् मधुर, कटु विपाक, उष्णवीर्य, कफवातशमन एवं दीपन है।[२]

लघुपञ्चमूल– शालपर्णी, पृश्निपर्णी, बृहती, कण्टकारी और गोक्षुर ये पाँच द्रव्य इस गण में है।[३] इन सभी द्रव्यों के छोटे क्षुप होते हैं अतः इसे 'लघु' पञ्चमूल कहते हैं। राजनिघण्टु ने इसे 'पञ्चगण' लिखा है।

गुणकर्म– यह कषाय, तिक्त और मधुर, लघु, अनुष्ण, बृंहण, बल्य, ग्राही, ज्वरहर, श्वासहर, अश्मरीभेदन, वातपित्तशमन है।[४]

दशमूल– इन दोनों उपर्युक्त गणों को मिला देने से उसकी संज्ञा दशमूल हो जाती है।[५]

गुणकर्म– दशमूल त्रिदोषघ्न एवं आमपाचन है तथा श्वास, कास, शिरःशूल, तन्द्रा, शोथ, ज्वर, आनाह, पार्श्वशूल तथा अरुचि को दूर करता है।[६]

---

१. बिल्वाग्निमन्थटुण्टुकपाटलाः काश्मरी चेति महत्। (सु० सू० ३८.६८)
श्रीफलः सर्वतोभद्रा पाटला गणिकारिका। श्योनाकः पञ्चभिश्चैतैः पञ्चमूलं महन्मतम्।।
(भा० प्र० नि० गु० २९)

२. सतिक्तं कफवातघ्नं पाके लघ्वग्निदीपनम्। मधुरानुरसं चैव पञ्चमूलं महत् स्मृतम्।।
(सु० सू० ३८.६९)
पञ्चमूलं महत् तिक्तं कषायं कफवातनुत्। मधुरं श्वासकासघ्नमुष्णं लघ्वग्निदीपनम्।
(भा० प्र० नि० गु० ३०)

३. त्रिकण्टकबृहतीद्वयपृथक्पर्ण्यो विदारिगन्धा चेति कनीयः। (सु० सू० ३८.६६)
शालपर्णी पृश्निपर्णी वार्ताकी कण्टकारिका। गोक्षुरः पञ्चभिश्चैतैः कनिष्ठं पञ्चमूलकम्।।
(भा० प्र० नि० गु० ४७)

४. कषायतिक्तमधुरं कनीयः पञ्चमूलकम्। वातघ्नं पित्तशमनं बृंहणं बलवर्धनम्।
(सु० सू० ३८.६७)
पञ्चमूलं लघु स्वादु बल्यं पित्तानिलापहम्। नात्युष्णं बृंहणं ग्राहि ज्वरश्वासाश्मरीप्रणुत्।।
(भा० प्र० नि० गु० ४८)

५. उभाभ्यां पञ्चमूलाभ्यां दशमूलमुदाहृतम्। (भा० प्र० नि० गु० ४९)

६. गणः श्वासहरो ह्येष कफपित्तानिलापहः। आमस्य पाचनश्चैव सर्वज्वरविनाशनः।।
(सु० सू० ३८.७१)
दशमूलं त्रिदोषघ्नं श्वासकासशिरोरुजः। तन्द्राशोथज्वरानाहपार्श्वपीडाऽरुचीहरेत्।।
(भा० प्र० नि० गु० ४९)

एषां वातहरावाद्यौ- (सु० सू० ३८.७७)

Scanned by CamScanner

कण्टकपञ्चमूल– करमर्द, गोक्षुर, सैरेयक, शतावरी, हिंस्रा ये पाँच द्रव्य इस गण में हैं।[१] ये सभी द्रव्य कण्टकयुक्त हैं इसलिए इस गण का नाम कण्टकपञ्चमूल है।

वल्लीपञ्चमूल– विदारी, सारिवा, मंजिष्ठा, गुडूची तथा मेषशृङ्गी ये पाँच द्रव्य इस गण में हैं।[२] ये सभी लतायें हैं, अतः इसका नाम वल्लीपञ्चमूल है।

कुछ लोग यहाँ 'रजनी' से हरिद्रा का ग्रहण करते हैं किन्तु वह वल्ली न होने के कारण वल्लीपञ्चमूल में कैसे आ सकता है। रञ्जन कर्म में प्रयुक्त होने से मञ्जिष्ठा के लिए 'रजनी' पर्याय उपयुक्त है।

गुणकर्म– ये दोनों गण कफशमन, रक्तपित्तहर, शोथहर, प्रमेहघ्न तथा शुक्रदोषनाशन है।[३]

तृणपञ्चमूल– कुश, काश, नल, दर्भ, काण्डेक्षु ये द्रव्य तृणपञ्चमूल में हैं।[४] यह सभी तृणजातीय हैं अतः इसका तृणपञ्चमूल नाम है। कुछ आचार्य कुश, काश, शर, दर्भ और इक्षु इन पाँच द्रव्यों को तृणपञ्चमूल में लेते हैं।[५]

गुणकर्म– तृणपञ्चमूल मूत्रजनन एवं पित्तशामक है, अतः मूत्रकृच्छ्र तथा रक्तपित्त में प्रयुक्त होता है।[६]

सुश्रुत ने इन्हीं 'पञ्च पञ्चमूलों' का वर्णन किया है, किन्तु चरक के पञ्च पञ्चमूलों में वल्ली और कण्टक पञ्चमूलों के स्थान पर मध्यम और जीवन पञ्चमूल हैं जो निम्नलिखित हैं–

मध्यमपञ्चमूल– इसमें बला, पुनर्नवा, एरण्ड, मुद्गपर्णी और माषपर्णी हैं। यह कफवातहर, किंचिदुष्ण तथा सर होता है।[७]

---

१. करमर्दोत्रिकण्टकसैरीयकशतावरीगृध्रनख्य इति कण्टकसंज्ञः। (सु० सू० ३८.७३)

२. विदारीसारिवारजनीगुडूच्योऽजशृङ्गी चेति वल्लीसंज्ञः। (सु० सू० ३८.७२)

३. रक्तपित्तहरौ ह्येतौ शोफत्रयविनाशनौ। सर्वमेहहरौ चैव शुक्रदोषविनाशनौ। (सु०सू० ३८.७४)
पञ्चकौ श्लेष्मशमनावितरौ परिकीर्तितौ। (सु० सू० ३८.७७)

४. कुशकाशनलदर्भकाण्डेक्षुका इति तृणसंज्ञकः। (सु० सू० ३८.७५)

५. कुशः काशः शरो दर्भ इक्षुश्चेति तृणोद्भवम्। पञ्चतृणमिदं ख्यातं तृणजं पञ्चमूलकम्।।
(प० प्र० ३.१५७)

६. मूत्रदोषविकारं च रक्तपित्तं तथैव च। अन्त्यः प्रयुक्तः क्षीरेण शीघ्रमेव विनाशयेत्।।
(सु० सू० ३८.७६)

७. बलापुनर्नवैरण्डशूर्पपर्णीद्वयेन तु। मध्यमं कफवातघ्नं नातिपित्तकरं सरम्।।
(अ० ह० सू० ६.१६९-)

Scanned by CamScanner

जीवनपञ्चमूल– अभीरु, वीरा, जीवन्ती, जीवक तथा ऋषभक को जीवनपञ्चमूल कहते हैं। यह वृष्य, चक्षुष्य तथा वातपित्तशमन है।[१]

वृद्धवाग्भट ने चरक के पाँच तथा सुश्रुत के वल्ली और कण्टक पञ्चमूलों को मिला कर सात पञ्चमूलों का वर्णन किया है।

मूलिनी– हस्तिदन्ती, हैमवती, श्यामा और अरुण त्रिवृत्, अधोगुडा, सप्तला, श्वेतापराजिता, दन्ती, इन्द्रायण, ज्योतिष्मती, बिम्बी, शणपुष्पी, विषाणिका, अजगन्धा, द्रवन्ती, क्षीरिणी ये १६ मूलिनीगण के द्रव्य हैं।

गुणकर्म– ये सभी शोधन द्रव्य हैं। इनमें हैमवती, बिम्बी तथा शणपुष्पी ये तीन वमन में, श्वेतापराजिता और ज्योतिष्मती ये दो शिरोविरेचन में तथा शेष ११ विरेचन में प्रयुक्त होते हैं।[२]

२. **कन्द**– इस गण के ओषधों का कन्द व्यवहृत होता है–

पञ्चशूरण– अत्यम्लपर्णी, काण्डीर, मालाकन्द, ग्राम्य और वन्य शूरण ये मिलकर पञ्चशूरण कहलाते हैं।[३] इसका प्रयोग यकृद्विकारों तथा अर्श में होता है।

३. **वल्ली**– इन गणों के द्रव्यों की लता होती है–

वल्लीपञ्चमूल– इसका वर्णन ऊपर हो चुका है।

वल्लीफल– कूष्माण्ड, अलाबू आदि लता में लगने वाले फलों को वल्लीफल कहते हैं। इनमें कूष्माण्ड सर्वश्रेष्ठ माना गया है।[४]

४. **कण्टक**– कण्टकयुक्त द्रव्य निम्नाङ्कित गण में आते हैं–

कण्टकपञ्चमूल– इसका वर्णन ऊपर हो चुका है।

त्रिकण्टक– बृहती, कण्टकारी और धन्यवास को त्रिकण्टक कहते हैं।[५]

---

१. अभीरुवीराजीवन्तीजीवकर्षभकैः स्मृतम्। जीवनाख्यं तु चक्षुष्यं वृष्यं पित्तानिलापहम्।।
(अ० ह० सू० ६.१७०-)

२. हस्तिदन्ती हैमवती श्यामा त्रिवृदधोगुडा। सप्तला श्वेतनामा च प्रत्यक्श्रेणी गवाक्ष्यपि।।
ज्योतिष्मती च बिम्बी च शणपुष्पी विषाणिका। अजगन्धा द्रवन्ती च क्षीरिणी चात्र षोडशी।।
शणपुष्पी च बिम्बी च च्छर्दने हैमवत्यपि। श्वेता ज्योतिष्मती चैव योज्या शीर्षविरेचने।।
एकादशावशिष्टा याः प्रयोज्यास्ता विरेचने। इत्युक्ता नामकर्मभ्यां मूलिन्यः।।
(च० सू० १.७७-७९-)

३. अत्यम्लपर्णीकाण्डीरमालाकन्दद्विशूरणैः। प्रोक्तो भवति योगोऽयं पञ्चशूरणसंज्ञकः।।
(रा० नि० मि० ४१)

४. कूष्माण्डं प्रवरं वदन्ति भिषजो वल्लीफलानां पुनः। (रा० नि० मि० १६१)

५. बृहती चाग्निदमनी दुःस्पर्शा चेति तु त्रयम्। कण्टकारीत्रयं प्रोक्तं त्रिकण्टं कण्टकत्रयम्।।
(रा० नि० मि० १५)

Scanned by CamScanner

५. **त्वक्**– निम्नाङ्कित गणों की छाल प्रयुक्त होती है–

पञ्चवल्कल– वट, उदुम्बर, अश्वत्थ, पारीष, प्लक्ष इनकी छाल को पञ्चवल्कल कहते हैं।[१] यह कषाय और स्तम्भन होता है। राजनिघण्टु ने पारीष के स्थान पर वेतस पढ़ा है।[२]

त्रिवल्कल– पूतीक, कृष्णगन्धा और तिल्वक इनकी त्वचा त्रिवल्कल कहलाती है। यह विरेचन है।[३]

६. **क्षीर**– क्षीर के साधर्म्य से निम्नाङ्कित गण बनाये गये हैं–

क्षीरीवृक्ष– उपर्युक्त पञ्चवल्कल गण के वृक्षों को क्षीरीवृक्ष कहते हैं। इनके गुणकर्म भी पूर्वोक्त हैं।

क्षीरत्रय– अश्मन्तक, स्नुही तथा अर्क के क्षीर को क्षीरत्रय कहते हैं।[४] क्षीरत्रय तथा त्रिवल्कल इन दोनों गणों को मिलाकर चरक ने 'षड् शोधनवृक्ष' कहा है।[५]

क्षीरत्रय– अर्क, वट तथा स्नुही इनके क्षीर को भी क्षीरत्रय कहते हैं। यह मारण आदि के लिए रसतन्त्र में प्रयुक्त होता है।[६]

७. **पल्लव**–

पञ्चपल्लव– आम, जामुन, कपित्थ, बीजपूर और बिल्व इनके पत्र पञ्चपल्लव कहलाते हैं। इनका उपयोग गन्धकर्म में होता है।[७]

८. **पुष्प**–

आद्यपुष्प– चन्दन, केशर और ह्रीबेर आद्यपुष्प कहलाते हैं।[८]

---

१. न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थपारीषप्लक्षपादपाः। पञ्चैते क्षीरिणो वृक्षास्तेषां त्वक् पञ्चवल्कलम्।।
(भा० प्र० नि० व० १६)

२. न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थप्लक्षवेतसवल्कलैः। सर्वैरेकत्र मिलितैः पञ्चवेतसमुच्यते।।
(रा० नि० मि० २५)

३. इमांस्त्रीनपरान् वृक्षानाहुर्येषां हितास्त्वचः। पूतीकः कृष्णगन्धा च तिल्वकश्च तथा तरुः।।
विरेचने प्रयोक्तव्यः पूतीकस्तिल्वकस्तथा। कृष्णगन्धा परीसर्पे शोथेष्वर्शःसु चोच्यते।।
दद्रुविद्रधिगण्डेषु कुष्ठेष्वप्यलजीषु च। (च० सू० १.११६-११७-)

४. वमनेऽश्मन्तकं विद्यात्स्नुहीक्षीरं विरेचने। क्षीरमर्कस्य विज्ञेयं वमने सविरेचने।।
(च० सू० १.११५)

५. षड्वृक्षाञ्छोधनानेतानपि विद्याद्विचक्षणः। (च० सू० १.११८)

६. रविक्षीरं वटक्षीरं स्नुहीक्षीरं तथैव च। क्षीरत्रयमिति ख्यातं मारणादौ प्रशस्यते।।
(र० त० २.२३)

७. आम्रजम्बूकपित्थानां बीजपूरकबिल्वयोः। गन्धकर्मणि सर्वत्र पत्राणि पञ्चपल्लवम्।।
(प० प्र० २.१५२)

८. चन्दनं कुङ्कुमं वारि त्रयमेतद्वरार्घकम्। त्रिभागकुङ्कुमोपेतं तदुक्तं चाद्यपुष्पकम्।।
(रा० नि० मि० ६)

Scanned by CamScanner

९. **फल–**

फलिनी– शङ्खिनी, विडङ्ग, त्रपुष, मदन, धामार्गव, इक्ष्वाकु, जीमूत, कृतवेधन, क्वीतक (आनूप और स्थलज), प्रकीर्या, उदकीर्या, अपामार्ग, हरीतकी, हस्तिपर्णी, अन्तःकोटरपुष्पी, कम्पिल्लक, आरग्वध, कुटज ये फलिनी गण के द्रव्य हैं।[१] इनमें धामार्गव, इक्ष्वाकु, जीमूत, कृतवेधन, मदन, कुटज, त्रपुष, हस्तिपर्णिनी ये ८ वमन और आस्थापन में, प्रत्यक्पुष्पी एक शिरोविरेचन और वमन में तथा शेष १० विरेचन में प्रयुक्त होते हैं।[२] –19

त्रिफला– हरीतकी, बिभीतक, आमलक ये त्रिफला के द्रव्य हैं।[३] इन तीनों का सम परिमाण में योग होने के कारण त्रिफला कहलाती है।[४] कहीं-कहीं संख्या के आधार पर इनका योग करना लिखा है यथा एक हरीतकी, दो बिभीतक और चार आँवले इन सब को एकत्र मिलाने से त्रिफला बनती है।[५] किन्तु परिमाण की दृष्टि से यह भी सम ही होती है क्योंकि एक हरीतकी परिमाण में दो बिभीतक तथा चार आँवले के बराबर होती है क्योंकि एक हरीतकी का मान दो कर्ष, एक बिभीतक का मान एक कर्ष तथा एक आमलकी का मान आधा कर्ष माना गया है। यहाँ शुष्क द्रव्य ही अभिप्रेत हैं आर्द्र नहीं। इसमें कषाय रस की प्रधानता होने से इसे 'कषाय त्रिफला' कह सकते हैं।

गुणकर्म– त्रिफला में कषाय प्रधान रस तथा अन्य अनुरस होते हैं। इसका विपाक मधुर तथा वीर्य अनुष्ण होता है। यह त्रिदोषहर है क्योंकि इसके यौगिक द्रव्यों में विशेषतः हरीतकी वातघ्न, बिभीतक कफघ्न तथा आमलक पित्तघ्न है और कषायरस होने के कारण यह विशेषतः कफपित्तशमन है। यह सर तथा अग्निदीपन

---

१. शङ्खिन्यथ विडङ्गानि त्रपुषं मदनानि च। धामार्गवमथेक्ष्वाकु जीमूतं कृतवेधनम्।।
आनूपं स्थलजं चैव क्वीतकं द्विविधं स्मृतम्। प्रकीर्या चोदकीर्या च प्रत्युक्पुष्पी तथाऽभया।।
अन्तःकोटरपुष्पी च हस्तिपर्ण्याश्च शारदम्। कम्पिल्लकारग्वधयोः फलं यत् कुटजस्य च।।
(च० सू० १.८१-८२-)

२. धामार्गवमथेक्ष्वाकु जीमूतं कृतवेधनम्। मदनं कुटजं चैव त्रपुषं हस्तिपर्णिनी।।
एतानि वमने चैव योज्यान्यास्थापनेषु च। नस्तः प्रच्छर्दने चैव प्रत्यक्पुष्पा विधीयते।।
दश यान्यवशिष्टानि तान्युक्तानि विरेचने। नामकर्मभिरुक्तानि फलान्येकोनविंशतिः।।
(च० सू० १.८३-८५-)

३. हरीतक्यामलकबिभीतकानीति त्रिफला। (सु० सू० ३८.५६)

४. पथ्याबिभीतधात्रीणां फलैः स्यात्त्रिफला समैः। फलत्रिकं च त्रिफला सा वरा च प्रकीर्तिता।।
(भा० प्र० नि० ह० ४३)

५. एका हरीतकी योज्या द्वौ योज्यौ च बिभीतकौ। चत्वार्यामलकान्येवं त्रिफलैषां प्रकीर्तिता।।
(शा० म० ६.९-)

Scanned by CamScanner

है। कषाय रस एवं अनुष्ण वीर्य होने के कारण अनेक नेत्ररोगों में हितकर है। कफशमन होने से प्रमेह तथा पित्तशमन होने से रक्तविकार, कुष्ठ आदि को दूर करती है। विषमज्वर त्रिदोषज होता है, अत: यह त्रिदोषहर एवं सर होने के कारण विषमज्वर में भी लाभकर है। कफशमन एवं सर होने से अरुचि को भी दूर करती है।[१] इस प्रकार यह संशोधन और संशमन दोनों कर्मों के सम्पादन के कारण अतीव प्रशस्त योग है। इसे महती त्रिफला भी कहते हैं।

स्वल्प त्रिफला– गम्भारी, खर्जूर और परूषक के फलों को मिलाकर स्वल्प त्रिफला कहते हैं।[२] यह पित्तशमन है।

मधुर त्रिफला– उपर्युक्त योग में परूषक के स्थान पर द्राक्षा रखकर इसका नाम राजनिघण्टु ने मधुर त्रिफला दिया है।[३] यह पित्तशमन है।

सुगंधि त्रिफला– जातीफल, लवङ्ग तथा पूगफल ये तीनों 'सुगंधित्रिफला' कहलाते हैं।[४] इसका प्रयोग मुखदौर्गन्ध्यनाशन के लिए करते हैं।

१०. **बीज**–

चतुर्बीज– मेथी, चन्द्रशूर, मङ्गरैल तथा यवानी के बीजों को चतुर्बीज कहते हैं।[५] कलौंजी

गुणकर्म– यह उष्णवीर्य होने के कारण वातशमन है और इसका चूर्ण वातव्याधि, पार्श्वशूल, कटिशूल, अजीर्ण, शूल, आध्मान आदि वातविकारों में प्रयुक्त होता है।[६]

(ख) **गुण साधर्म्य** (Qualitative similarity)–

शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध आदि गुणों के सादृश्य से भी गणों का निर्माण हुआ है।

---

१. त्रिफला कफपित्तघ्नी मेहकुष्ठहरा सरा। चक्षुष्या दीपनी रुच्या विषमज्वरनाशिनी।।
(भा० प्र० नि० ह० ४३)

२. स्वल्पा काश्मर्यखर्जूरपरूषकफलैर्भवेत्। (प० प्र० ३.१४९)

३. द्राक्षाकाश्मर्यखर्जूरीफलानि मिलितानि तु। मधुरत्रिफला ज्ञेया मधुरादिफलत्रयम्।।
(रा० नि० मि० ४)

४. जातीफलं पूगफलं लवङ्गकलिकाफलम्। सुगंधित्रिफला प्रोक्ता सुरभित्रिफला च सा।।
(रा० नि० मि० ५)

५. मेथिका चन्द्रशूरश्च कालाऽजाजी यवानिका। एतच्चतुष्टयं युक्तं चतुर्बीजमिति स्मृतम्।।
(भा० प्र० नि० ह० ९८)

६. तच्चूर्णं भक्षितं नित्यं निहन्ति पवनामयम्। अजीर्णशूलमाध्मानं पार्श्वशूलं कटिव्यथाम्।।
(भा० प्र० नि० ह० ९९)

Scanned by CamScanner

१. **शब्द**– संज्ञागत शब्द के सादृश्य से अनेक द्रव्य एक गण में रक्खे गये हैं और प्रायः ये द्रव्य **'यत्राकृतिस्तत्र गुणा वसन्ति'** इस न्याय से कर्म में भी समान होते हैं यथा–

ककारादि गण– कूष्माण्ड, कच्छप, कलिङ्गफल, कोल, कुलत्थ, कर्कोटा, कतक, कपित्थ, काश्चनारपुष्प, कङ्गु, काञ्जिक, करैला, कर्कोटक, कर्कटी, कुसुम्भ, कपोत यह ककारादि गण है। रससेवन-काल में इनका प्रयोग निषिद्ध है।[१]

ककाराष्टक– कलिङ्ग, कारवेल्ल, कदली, काकमाची, कुसुम्भ, कर्कोटी, कूष्माण्ड तथा कर्कटी यह ककाराष्टक कहलाता है। इसका सेवन रससेवन-काल में नहीं करना चाहिए।[२]

२. **स्पर्श**–

महास्नेह– घृत, तैल, वसा और मज्जा इनको महास्नेह कहते हैं।

गुणकर्म– यह त्रिदोषहर, स्नेहन, जीवन, वर्ण्य, बल्य एवं बृंहण है। इसका प्रयोग पान, अभ्यङ्ग, बस्ति एवं नस्य के रूप में होता है।[३]

यमक-त्रिवृत्– उपर्युक्त स्नेहों में से कोई दो मिले हों तो उन्हें यमक और कोई तीन मिले हों तो त्रिवृत् कहते हैं।[४]

३. **रूप**– रूप के सादृश्य से निम्नाङ्कित गण किये गये हैं–

शुक्लवर्ग– चूना, कच्छपपृष्ठ, शंख, शुक्ति और वराटिका इनको शुक्लवर्ग

---

१. कूष्माण्डं कमठः कलिङ्गकफलं कोलं कुलत्थास्तथा
कर्कोटी कतकं कपित्थकफलं वै काञ्चनीयं सुमम्।
कङ्गुं काञ्जिककारवेल्लकफलं कर्कोटकः कर्कटी
कौसुम्भश्च कपोतकः खलु गणः प्रोक्तः ककारादिकः।।
ककारादिगणोक्तानि भेषजानि कदाचन। रसायनफलाकाङ्क्षी रससेवी न भक्षयेत्।।
(र० त० ७.९३-९४)

२. कलिङ्गं कारवेल्लं च कदली काकमाचिका। कुसुम्भिका च कर्कोटी कूष्माण्डं कर्कटी तथा।
ककाराष्टकमेतद्धि प्रोक्तं रसविशारदैः। वर्जयेद्रससेवी च नित्यमेतत्प्रयत्नतः।।
(र० त० ७.९९-१००)

३. सर्पिस्तैलं वसा मज्जा स्नेहो दिष्टश्चतुर्विधः। पानाभ्यञ्जनबस्त्यर्थं नस्यार्थं चैव योगतः।।
स्नेहना जीवना वर्ण्या बलोपचयवर्धनाः। स्नेहा ह्येते च विहिता वातपित्तकफापहाः।।
(च० सू० १.८६-८७-)

४. सर्पिर्मज्जा वसा तैलं स्नेहेषु प्रवरं मतम्। द्वाभ्यां त्रिभिश्चतुर्भिस्तैर्यमकस्त्रिवृतो महान्।।
(अ० ह० सू० १६.२,४)

Scanned by CamScanner

कहते हैं।[१] राजनिघण्टु ने इसमें कच्छपपृष्ठ के स्थान पर खड़िया का ग्रहण किया है।[२] पारद के शुक्लकर्म में इसका प्रयोग होता है।

रक्तवर्ग– मञ्जिष्ठा, कुंकुम, लाक्षा, खदिर, असन यह रक्तवर्ग है।[३] राजनिघण्टुकार ने रक्तवर्ग में दाडिम, पलाश, लाक्षा, बन्धूक, हरिद्रा, कुसुम्भ तथा मञ्जिष्ठा इन द्रव्यों का ग्रहण किया है।[४]

पीतवर्ग– कुसुम्भ, किंशुक, हरिद्रा, पतङ्ग और मदयन्तिका यह पीतवर्ग है।[५] इन दोनों गणों का पारद के रञ्जनकर्म में प्रयोग होता है।

कृष्णवर्ग– केला, करैला, त्रिफला, नीलिका, नल, पङ्क, कासीस, कच्चा आम ये कृष्णवर्ग के द्रव्य हैं।[६] यह भी पारद के रञ्जनकर्म में प्रयुक्त होता है।

उपर्युक्त चारों वर्ग पारद के मारण कर्म में उपयुक्त होते हैं।[७]

४. **रस**– रस के आधार पर निम्नाङ्कित गण हैं–

मधुरत्रय– शर्करा, मधु और घृत इन्हें मधुरत्रय कहते हैं।[८] रसतरंगिणी ने शर्करा के स्थान पर गुड़ पढ़ा है।[९]

पञ्चमधुर– जीवक, ऋषभक, मेदा, जीवन्ती और शतावरी– ये द्रव्य पञ्चमधुर कहलाते हैं।[१०] ये सभी द्रव्य मधुरस्कन्ध में पठित हैं। यह गण चरकोक्त ब्राह्मरसायन में जीवकादि (जीवन) पञ्चमूल के नाम से निर्दिष्ट है (च० चि० १.१.४१)।

---

१. शुक्लवर्गः सुधाकूर्मशङ्खशुक्तिवराटिकाः। (र० ५.४०)

२. खटिनीश्वेतसंयुक्ताः शङ्खशुक्तिवराटिकाः। भृष्टाश्मशर्करा चेति शुक्लवर्ग उदाहृतः।।
(रा० नि० मि० ६७)

३. मञ्जिष्ठा कुङ्कुमं लाक्षा खदिरश्चासनस्तथा। रक्तवर्गस्तु देवेशि! (र० ५.३९)

४. दाडिमं किंशुकं लाक्षा बन्धूकं च निशाह्वयम्।
कुसुम्भपुष्पं मञ्जिष्ठा इत्येतै रक्तवर्गकः।। (रा० नि० मि० ६६)

५. पीतवर्गमतः शृणु। कुसुम्भं किंशुकं रात्री पतङ्गो मदयन्तिका। (र० ५.३९)

६. कदली कारवेल्ली च त्रिफला नीलिका नलः। पङ्कः कासीसबालाम्रं कृष्णवर्ग उदाहृतः।।
(र० चू० ९.२६)

७. रक्तवर्गादिवर्गैश्च द्रव्यं यज्जारणात्मकम्। भावनीयं प्रयत्नेन तादृग्रागाप्तये खलु।। (र० चू० ९.२७)

८. सितामाक्षिकसर्पींषि मिलितानि यदा तदा। मधुरत्रयमाख्यातं त्रिमधु स्यान्मधुत्रयम्।
(रा० नि० मि० १०)

९. आज्यं गुडो माक्षिकं च विज्ञेयं मधुरत्रयम्। (र० त० २.२०)

१०. जीवकर्षभकौ मेदा जीवन्ती च शतावरी।
एतानि पञ्च द्रव्याणि विद्यान्मधुरपञ्चकम्।। (स्व०)

Scanned by CamScanner

मधुरवर्ग– अष्टवर्ग, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, जीवन्ती और मुलेठी को मधुरवर्ग या जीवकादिवर्ग कहते हैं।[१] भावप्रकाश ने इसे जीवनीय गण कहा है। यह गुरु, गर्भप्रद, स्तन्यकर, शीत, बृंहण, शुक्रल, श्लेष्मल, तृष्णा, शोष, ज्वर तथा दाह नाशक रक्तपित्तशमन है।[२]

त्रिकटु– शुण्ठी, पिप्पली और मरिच इसे त्रिकटु कहते हैं।[३] यह कटुरस, कटुविपाक तथा उष्णवीर्य है इसलिए कफ-वात दोषों को शान्त करता है। अत: यह श्वास, कास, गुल्म, प्रमेह, स्थौल्य, मेदोरोग, श्लीपद और पीनस में लाभ करता है। यह स्वेदजनन होने के कारण त्वचा को उत्तेजित करता है अत: चर्मरोगों में हितकर है।[४]

कटुचातुर्जातक– इलायची, दालचीनी, तेजपत्र तथा मरिच इन्हें कटुचतुर्जात कहते हैं।[५]

चतुरूषण– त्रिकटु में पिप्पलीमूल मिला देने से चतुरूषण हो जाता है। इसके गुणकर्म त्रिकटु के समान ही किन्तु कुछ विशिष्ट हैं।

पञ्चकोल– पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, चित्रक और शुण्ठी ये पञ्चकोल के द्रव्य हैं।[६] 'कोला' पिप्पली का पर्याय है अत: पिप्पली-प्रधान पाँच कटु द्रव्यों के योग के कारण इसे 'पंचकोल' कहते हैं। सब द्रव्य कोल (१/२ कर्ष) परिमाण में लिये जाते हैं, इसलिए भी पञ्चकोल कहते हैं। कटु द्रव्य होने के कारण कुछ लोग इसे 'पञ्चोषण' भी कहते हैं।

---

१. स्याज्जीवकर्षभकयुग्मयुगद्विमेदा- काकोलिकाद्वययुतद्विकशूर्पपर्ण्यौ।
जीव्या मधूकयुतया मधुराह्वयोऽयं योगो महानिह विराजति जीवकादि:।।
(रा० नि० मि० ५९)

२. अष्टवर्ग: सयष्टीको जीवन्ती मुद्गपर्णिका। माषपर्णी गणोऽयं तु जीवनीय इति स्मृत:।।
जीवनो मधुरश्चापि नाम्ना स परिकीर्तित:। जीवनीयगण: प्रोक्त: शुक्रकृद् बृंहणो हिम:।।
गुरुर्गर्भप्रद: स्तन्यकफकृत् पित्तरक्तहृत्। तृष्णां शोषं ज्वरं दाहं रक्तपित्तं व्यपोहति।।
(भा० प्र० नि० गु० ५७-५९)

३. विश्वोपकुल्या मरिचं त्रयं त्रिकटु कथ्यते। कटुत्रिकं तु त्रिकटु त्र्यूषणं व्योषमुच्यते।।
(भा० प्र० नि० ह० ६२)

४. त्र्यूषणं दीपनं हन्ति श्वासकासत्वगामयान्। गुल्ममेहकफस्थौल्यमेद:श्लीपदपीनसान्।।
(भा० प्र० नि० ह० ६३)

५. एलात्वक्पत्रकैस्तुल्यैर्मरिचेन समन्वितै:। कटुपूर्वमिदं चान्यच्चातुर्जातकमुच्यते।।
(रा० नि० मि० १९)

६. पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्यचित्रकनागरै:। पञ्चभि: कोलमात्रं यत् पञ्चकोलं तदुच्यते।।
(भा० प्र० नि० ह० ७२)

Scanned by CamScanner

गुणकर्म– यह तीक्ष्णगुण, कटुरस, कटुविपाक तथा उष्णवीर्य है, इस कारण कफवातशमन, पित्तप्रकोपण, दीपन तथा पाचन है। गुल्म, प्लीहा, उदर, आनाह और शूल रोगों में लाभकर है।[१]

षड्षण– पञ्चकोल में मरिच मिला देने से षड्षण कहते हैं। पञ्चकोल स्निग्ध है क्योंकि पिप्पली तथा शुण्ठी स्निग्ध और मधुरविपाक होने के कारण समस्त योग को प्रभावित करती हैं किन्तु मरिच मिला देने से स्निग्धता दब जाती है, अतः षड्षण रूक्ष होता है। इसमें उष्णता भी विशिष्ट होती है। प्रभाव के कारण यह विषघ्न भी है।[२]

पञ्चतिक्त– गुडूची, निम्ब, वासा, कण्टकारी और पटोल ये पञ्चतिक्त हैं।[३] (तना)

अम्लपञ्चक– अम्लवेतस, जम्बीर, मातुलुङ्ग, नारङ्ग, निम्बुक ये फलपञ्चाम्ल या अम्लपञ्चक कहलाते हैं।[४] राजनिघण्टु ने दो प्रकार के अम्लपञ्चक और लिखे हैं– (क) कोल, दाडिम, वृक्षाम्ल, चुल्लकी, अम्लवेतस[५], (ख) जम्बीर, नारङ्ग, अम्लवेतस, तिन्तिडीक और बीजपूर।[६]

अम्लवर्ग– जम्बीर, निम्बुक, अम्लवेतस, इमली, नारङ्ग, दाडिम, वृक्षाम्ल, बीजपूर, चाङ्गेरी, चणकाम्ल, कर्कन्धु, करमर्द, चुक्रिका यह अम्लवर्ग है।[७] राजनिघण्टुकार ने इसमें चाङ्गेरी, लकुच, अम्लवेतस, जम्बीर, बीजपूर, नारङ्ग, दाडिम, कपित्थ,

---

१. पञ्चकोलं रसे पाके कटुकं रुचिकृन्मतम्। तीक्ष्णोष्णं पाचनं श्रेष्ठं दीपनं कफवातनुत्।।
गुल्मप्लीहोदरानाहशूलघ्नं पित्तकोपनम्। (भा० प्र० नि० ह० ७३)

२. पञ्चकोलं समरिचं षड्षणमुदाहृतम्। पञ्चकोलगुणं तत्तु रूक्षमुष्णं विषापहम्।।
(भा० प्र० नि० ह० ७४)

३. गुडूची निम्बमूलत्वक् भिषङ्माता निदिग्धिका। पटोलपत्रमित्येतत् पञ्चतिक्तं प्रकीर्तितम्।।
(र० त० २.१८)

४. अम्लवेतसजम्बीरलुङ्गनारङ्गनिम्बुकैः। फलं पञ्चाम्लकं ख्यातं कीर्तितञ्चाम्लपञ्चकम्।।
(र० त० २.१५)

५. कोलदाडिमवृक्षाम्लं चुल्लकी साम्लवेतसा। फलं पञ्चाम्लमुद्दिष्टमम्लपञ्चफलं स्मृतम्।।
(रा० नि० मि० ३४)

६. जम्बीरनारङ्गसहाम्लवेतसैः सतिन्तिडीकैश्च सबीजपूरकैः।
समांशभागेन तु मेलितैरिदं द्वितीयमुक्तं च फलाम्लपञ्चकम्।। (रा० नि० मि० ३५)

७. जम्बीरं निम्बुकं चैव त्वम्लवेतसमम्लिका। नारङ्गं दाडिमं चैव वृक्षाम्लं बीजपूरकम्।।
चाङ्गेरी चणकाम्लं च कर्कन्धुः करमर्दकः। चुक्रिका चेति सामान्यादम्लवर्गः प्रकीर्तितः।।
(र० त० २.१३-१४)

Scanned by CamScanner

वृक्षाम्ल, आम्रातक, करमर्द, निम्बुक तथा दोनों पञ्चाम्ल का ग्रहण किया है।[१] अम्लवर्ग में निम्बूक सर्वश्रेष्ठ है, कुछ लोग अम्लवेतस और इमली को सर्वश्रेष्ठ मानते हैं।[२]

एक-द्वि-त्रि-चतुः-पञ्चलवण– केवल लवण से सैन्धव, द्विलवण से सैन्धव और सौवर्चल, त्रिलवण से सैन्धव, सौवर्चल और विड (आचार्य यादवजी ने विडलवण को नौसादर कहा है इसलिए कि यह मल-मूत्र से बनता है); चतुर्लवण से सैन्धव, सौवर्चल, विड और सामुद्र तथा पञ्चलवण से ये चारों तथा साम्भर नमक का ग्रहण होता है।[३]

पञ्चकषाय– तिन्दुक, हरीतकी, लोध्र, लज्जालु और आमलक– यह गण पञ्चकषाय कहलाता है।[४]

५. **गन्ध**–

त्रिजातक– दालचीनी, छोटी इलायची और तेजपत्र मिलकर त्रिजातक कहलाता है।[५] 'जात' शब्द यहाँ सुगन्धि का वाचक है।

चतुर्जातक– त्रिजातक में नागकेसर मिला देने पर चतुर्जातक हो जाता है।[६]

गुणकर्म– ये दोनों गण रूक्ष, तीक्ष्ण, लघु तथा उष्णवीर्य हैं अतः कफवातशमन तथा पित्तकारक, दीपन, रोचन, वर्ण्य और विषघ्न हैं। सुगन्धि होने के कारण मुखदौर्गन्ध्यनाशन हैं और मुखशोधन में प्रयुक्त होते हैं।[७]

---

१. चाङ्गेरी लिकुचाम्लवेतसयुतं जम्बीरकं पूरकं
नारङ्गं फलषाडवस्त्विति तु पिण्डाम्लञ्च बीजाम्लकम्।।
अम्बष्ठासहितं द्विरेतदुदितं पञ्चाम्लकं तद्द्वयं,
विज्ञेयं करमर्दनिम्बुकयुतं स्यादम्लवर्गाह्वयम्।। (रा० नि० मि० ३६)

२. सर्वेषामम्लजातीनां निम्बूकं गुणवत्तमम्। अम्लवेतसकं वापि त्वम्लिका वा गुणाधिका।
(र० त० २.१७)

३. सिन्धु सौवर्चलं चैव बिडं सामुद्रिकं गडम्। एकद्वित्रिचतुःपञ्चलवणानि क्रमाद् विदुः।
(शा० म० ६.२१)

४. तिन्दुकान्यभया रोध्रं समङ्गामलकं मधु।
पूरणञ्चात्र पथ्यं स्यात्-
क्वाथं पञ्चकषायं तु- (सु० उ० २१.४२,४६)

५. त्वगेलापत्रकैस्तुल्यैस्त्रिसुगन्धि त्रिजातकम्। (भा० प्र० नि० क० ७२)

६. नागकेशरसंयुक्तं चतुर्जातकमुच्यते।। (वही)

७. तद्द्वयं रोचनं रूक्षं तीक्ष्णोष्णं मुखगन्धहृत्। लघुपित्ताग्निकृद्वर्ण्यं कफवातविषापहम्।।
(भा० प्र० नि० क० ७३)

Scanned by CamScanner

पञ्चसुगन्धिक– कर्पूर, कङ्कोल, लवङ्ग, पूग, जातीफल ये पञ्चसुगन्धिक कहलाते हैं।[१]

सर्वौषधिगण– कुष्ट, मांसी, हरिद्रा, वचा, शैलेय, चन्दन, मुरा, कर्चूर, मुस्ता ये सर्वौषधिगण के द्रव्य हैं।[२]

सुगन्धामलक– उपर्युक्त सर्वौषधिगण से युक्त आमलकीत्वक् को सुगन्धामलक कहते हैं।[३]

सर्वगन्ध– चातुर्जातक, कर्पूर, कङ्कोल, अगुरु, शिलारस और लवङ्ग इनको सर्वगन्ध कहते हैं।[४]

देवकर्दम– चन्दन, अगुरु, कर्पूर, केशर इनको मिलाने से देवकर्दम कहते हैं।[५]

यक्षकर्दम– कर्पूर, अगुरु, कस्तूरी, कङ्कोल, यक्षधूप इन्हें यक्षकर्दम कहते हैं।[६] कुछ लोग इसमें, केशर, अगुरु, कस्तूरी, कर्पूर, चन्दन का ग्रहण करते हैं।[७]

६. **संख्या**– द्रव्यों की संख्या के आधार पर भी गणों का नामकरण किया गया है यथा–

अष्टवर्ग– जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, ऋद्धि और वृद्धि ये आठ द्रव्य मिलकर अष्टवर्ग कहलाते हैं।[८]

---

१. कर्पूरकङ्कोललवङ्गपुष्पगुवाकजातीफलपञ्चकेन।
समांशभागेन च योजितेन मनोहरं पञ्चसुगन्धिकं स्यात्।। (रा० नि० मि० २३)

२. कुष्ठमांसीहरिद्राभिर्वचाशैलेयचन्दनैः। मुराकर्चूरमुस्ताभिः सर्वौषधमुदाहृतम्।।
(रा० नि० मि० ६१)

३. सर्वौषधिसमायुक्ताः शुष्काश्चामलकत्वचः। यदा तदाऽयं योगः स्यात् सुगन्धामलकाभिधः।।
(रा० नि० मि० ६३)

४. चातुर्जातककर्पूरकङ्कोलागुरुसिह्लकम्। लवङ्गसहितं चैव सर्वगन्धं विनिर्दिशेत्।।
(प० प्र० ३.१४८)

५. श्रीखण्डागुरुकर्पूरकाश्मीरैस्तु समांशकैः। मृगाङ्कमुकुटार्होऽयं मिलितैर्देवकर्दमः।।
(रा० नि० मि० २०)

६. कर्पूरागुरुकस्तूरीकङ्कोलैर्यक्षधूपकः। एकीकृतमिदं सर्वं यक्षकर्दम इष्यते।।
(रा० नि० मि० २१)

७. कुङ्कुमागुरुकुरङ्गनाभिकाचन्द्रचन्दनसमांशसम्भृतम्।
त्र्यक्षपूजनपरैकगोचरं यक्षकर्दममिमं प्रचक्षते।। (रा० नि० मि० २२)

८. जीवकर्षभकौ मेदे काकोल्यौ ऋद्धिवृद्धिके। अष्टवर्गोऽष्टभिर्द्रव्यैः कथितश्चरकादिभिः।।
(भा० प्र० नि० ह० १२०-१२१)

Scanned by CamScanner

गुणकर्म– अष्टवर्ग रस और विपाक में मधुर, शीतवीर्य और गुरु होता है अतः शुक्रल, बृंहण, भग्नसन्धानकारक, बल्य, वाजीकर, कफकर, रक्तपित्तहर, तृष्णाशमन, दाहप्रशमन, ज्वरघ्न, प्रमेहघ्न, क्षयघ्न एवं वातपित्तशामक है।[१]

७. **परिमाण**– परिमाण के आधार पर निम्नांकित गण बनाये गये हैं–

पञ्चकोल– इसका वर्णन ऊपर दिया जा चुका है।

समत्रितय– हरीतकी, शुण्ठी और गुड़ समभाग परिमाण में मिलाने पर समत्रितय कहलाते हैं।[२]

त्रिकर्षिक– शुण्ठी, अतिविषा और मुस्ता १-१ कर्ष के परिमाण में मिलाने पर त्रिकर्षिक कहलाते हैं।[३]

चातुर्भद्र– त्रिकर्षिक में गुडूची मिला देने पर उसकी चातुर्भद्र संज्ञा हो जाती है।[४]

त्रिमद– विडङ्ग, मुस्त और चित्रक को त्रिमद कहते हैं।[५]

क्षारद्वय– सज्जीखार और यवक्षार को क्षारद्वय कहते हैं।[६]

क्षारत्रय– क्षारद्वय में टङ्कण मिला देने पर क्षारत्रय हो जाता है।[७]

क्षारपञ्चक– यव, मुष्कक, सर्ज, पलाश एवं तिल के क्षार को क्षारपञ्चक कहते हैं।[८]

क्षारषट्क– धव, अपामार्ग, कुटज, लाङ्गली, तिल, मुष्कक इनके क्षारों को मिलाने पर क्षारषट्क होता है।[९]

---

१. अष्टवर्गो हिमः स्वादुर्बृंहणः शुक्रलो गुरुः। भग्नसन्धानकृत् कामबलासबलवर्धनः।।
वातपित्तास्रतृड्दाहज्वरमेहक्षयापहः। (भा० प्र० नि० ह० १२२)

२. हरीतकी नागरं च गुडश्चेति त्रयं समम्। समत्रितयमित्युक्तं त्रिसमं च समत्रयम्।
(रा० नि० मि० ९)

३. नागरातिविषामुस्तात्रयमेतत् त्रिकर्षिकम्। (रा० नि० मि० १६)

४. गुडूच्या मिलितं तच्च चातुर्भद्रकमुच्यते। (रा० नि० मि० १७)

५. विडङ्गमुस्तचित्रैश्च त्रिमदः समुदाहृतः। (प० प्र० ३.१५०)

६. स्वर्जिका यावशूकश्च क्षारद्वयमुदाहृतम्। (भा० प्र० नि० ह० २५७)

७. टङ्कणेन युतं तत्तु क्षारत्रयमुदीरितम्। (भा० प्र० नि० ह० २५७)

८. यवमुष्ककसर्जानां पलाशतिलयोस्तथा। क्षारैस्तु पञ्चभिः प्रोक्तः पञ्चक्षाराभिधो गणः।।
(रा० नि० मि० ४८)

९. धवापामार्गकुटजलाङ्गलीतिलमुष्कजैः। क्षारैरेतैस्तु मिलितैः क्षारषट्कमुदाहृतम्।।
(रा० नि० मि० ५१)

Scanned by CamScanner

क्षाराष्टक– पलाश, वज्री, शिखरी, चिञ्चा, अर्क, तिलनाल के क्षार तथा यवक्षार और सज्जीखार को क्षाराष्टक कहते हैं।[१]

क्षारदशक– शिग्रु, मूलक, पलाश, चुक्रिका, चित्रक, आर्द्रक, निम्ब, इक्षु, अपामार्ग तथा कदली के क्षार को क्षारदश कहते हैं।[२] ये सभी क्षार गण गुल्म और शूल के नाशक हैं।[३]

(ग) **कर्म-साधर्म्य** (Pharmacological Similarity)– कर्म के साधर्म्य से अनेक गणों का निर्माण हुआ है--

महापञ्चविष– शृङ्गिक, कालकूट, मुस्तक, वत्सनाभ और सक्तुक ये महापञ्चविष हैं।[४]

उपविष– अर्कक्षीर, स्नुहीक्षीर, लाङ्गली, करवीर, गुञ्जा, अहिफेन, धत्तूर ये उपविष कहलाते हैं।[५]

(घ) **जाति-साधर्म्य**– एक जाति के द्रव्यों को मिलाकर भी एक गण बनाया जाता है यथा–

त्रिशर्करा– गुड़, मधु और हिम इन तीनों से उत्पन्न शर्करा को शर्करात्रितय या त्रिशर्करा कहते हैं।[६]

(च) **योनि-साधर्म्य**– जिन द्रव्यों के कार्यों में योनिगत समानता हो उन्हें एक-एक गण में रक्खा जाता है यथा क्षारयोनि, स्नेहयोनि आदि।

क्षारयोनि– मुष्कक, कुटज, पलाश, अश्वकर्ण, पारिभद्र, बिभीतक, आरग्वध, तिल्वक, अर्क, स्नुही, अपामार्ग, पाटला, नक्तमाल, वृष, कदली, चित्रक, पूतिक, इन्द्रवृक्ष, आस्फोता, करवीर, सप्तपर्ण, अग्निमंथ, गुञ्जा, कोशातकी, गण्डीर, बिल्व, गणिकारिका, शोभाञ्जन, नीप, निम्ब, निर्दहनी, बृहतीद्वय,

---

१. पलाशवज्रिशिखरिचिञ्चाऽर्कतिलनालजाः। यवजः स्वर्जिका चेति क्षाराष्टकमुदाहृतम्।
(भा० प्र० नि० ह० २५८-)

२. शिग्रमूलकपलाशचुक्रिकाचित्रकार्द्रकसनिम्बसम्भवैः।
इक्षुशैखरिकमोचकोद्भवैः क्षारपूर्वदशकं प्रकीर्तितम्।। (रा० नि० मि० ५७)

३. क्षारा एतेऽग्निना तुल्या गुल्मशूलहरा भृशम्। (भा० प्र० नि० ह० २५९)

४. शृङ्गिकः कालकूटश्च मुस्तको वत्सनाभकः। सक्तुकश्चेति योगोऽयं महापञ्चविषाभिधः।
(रा० नि० मि० ४२)

५. अर्कक्षीरं स्नुहीक्षीरं लाङ्गलीकरवीरकौ। गुञ्जाऽहिफेनो धत्तूरः सप्तोपविषजातयः।।
(भा० प्र० नि० धा० २०६)

६. गुडोत्पन्ना हिमोत्पन्ना मधुजातेति मिश्रितम्। त्रिशर्करा च त्रिसिता सितात्रयसितात्रिके।।
(रा० नि० मि० ११)

Scanned by CamScanner

भल्लातक, इङ्गुदी, वैजयन्ती, वर्षाभू, हीबेर, इक्षुरक, इन्द्रवारुणी, श्वेतमोक्षक, अशोक आदि।[१] इन वृक्षों के क्षार बनाये जाते हैं, जो शल्य और कायचिकित्सा में प्रयुक्त होते हैं।

आसवयोनि– आश्रयभेद से इसके ९ उपभेद होते हैं[२]–

(क) **धान्य**– सुरा, सौवीरक, तुषोदक, मैरेय, मेदक, धान्याम्ल।

(ख) **फल**– मृद्वीका, खर्जूर, काश्मर्य, धन्वन, राजादन, तृणशून्य, परूषक, अभया, आमलक, मृगलिंडिका, जाम्बव, कपित्थ, कुवल, बदर, कर्कन्धु, पीलु, प्रियाल, पनस, न्यग्रोध, अश्वत्थ, प्लक्ष, कपीतन, उदुम्बर, अजमोद, शृङ्गाटक, शंखिनी।

(ग) **मूल**– विदारिगन्धा, अश्वगन्धा, कृष्णगन्धा, शतावरी, श्यामा, त्रिवृत्, दन्ती, द्रवन्ती, बिल्व, एरण्ड, चित्रक।

(घ) **सार**– शाल, प्रियक, अश्वकर्ण, चन्दन, स्यन्दन, खदिर, कदर, सप्तपर्ण, अर्जुन, असन, अरिमेद, तिन्दुक, अपामार्ग, शमी, शुक्तिपत्र, शिंशपा, शिरीष, वञ्जुल, धन्वन, मधूक।

(च) **पुष्प**– पद्म, उत्पल, नलिन, कुमुद, सौगन्धिक, पुण्डरीक, शतपत्र, मधूक, प्रियङ्गु, धातकी।

(छ) **काण्ड**– इक्षु, काण्डेक्षु, इक्षुवालिका, पुण्ड्रक।

(ज) **पत्र**– पटोल, ताड़क।

(झ) **त्वक्**– लोध्र, तिल्वक, एलवालुक, क्रमुक।

(ट) **शर्करा**–

इस प्रकार कुल मिलाकर इस गण में ८० द्रव्य होते हैं।

स्नेहयोनि– जिन द्रव्य से स्नेह निकलता है। उनका समावेश इस गण में किया गया है। मुख्यत: यह दो प्रकार के होते हैं स्थावर और जाङ्गम।[३] जाङ्गम

---

१. महान्तमसितमुष्ककमधिवास्या....अनेनैव विधानेन कुटजपलाशाश्वकर्णपारिभद्रकबिभीतकारग्वधतिल्वकार्कस्नुह्यपामार्गपाटलानक्तमालवृषकदलीचित्रकपूतिकेन्द्रवृक्षास्फोताश्वमारकसप्तच्छदाग्निमन्थगुञ्जाश्वतस्त्रश्च कोशातकी: समूलफलपत्रशाखा दहेत्। (सु० सू० ११.११)
गण्डीरपलाशकुटजबिल्वार्कस्नुह्यपामार्गपाटलापारिभद्रकनादेयीकृष्णगन्धानीपनिम्बनिर्दहन्याटरूषकनक्तमालकपूतिकबृहतीकण्टकारिकाभल्लातकेङ्गुदीवैजयन्तीकदलीवर्षाभूह्रीबेरेक्षुरकेन्द्रवारुणीश्वेतमोक्षकाशोका इत्येवं वर्गं समूलपत्रशाखम्....विपचेत्।
(सु० चि० ४.३२)

२. (च० सू० २५.४९)

३. स्नेहानां द्विविधा सौम्य योनि: स्थावरजङ्गमा। (च० सू० १३.९)

Scanned by CamScanner

में दधि, क्षीर, घृत, मांस, वसा और मज्जा का अन्तर्भाव होता है तथा स्थावर स्नेहयोनि में निम्नाङ्कित द्रव्य आते हैं–

तिल, प्रियाल, अभिषुक, बिभीतक, चित्रा, अभया, एरण्ड, मधूक, सर्षप, कुसुम्भ, बिल्व, आरुक, मूलक, अलसी, निकोचक, अक्षोट, करञ्ज, शिग्रुक।[१] सुश्रुत ने कर्म और प्रयोग के भेद से स्नेहों का विस्तार से वर्णन किया है–

विरेचन– तिल्वक, एरण्ड, कोशाम्र, दन्ती, द्रवन्ती, सप्तला, शंखिनी, पलाश, विषाणिका, इन्द्रायण, कम्पिल्लक, शम्पाक, नीलिनी।[२]

वमन– जीमूतक, कुटज, कृतवेधन, इक्ष्वाकु, धामार्गव, मदन।[३]

शिरोविरेचन– विडङ्ग, अपामार्ग, मधुशिग्रु, सूर्यवल्ली, पीलु, सिद्धार्थक, ज्योतिष्मती।[४] रक्तशिग्रु (शुक्ल))

दुष्टव्रणशोधन– करञ्ज, पूतिक, कृतमाल, मातुलुङ्ग, इङ्गुदी, किरात।[५]

कुष्ठघ्न– तुवरक, कपित्थ, कम्पिल्लक, भल्लातक, पटोल।[६]

मूत्रजनन– त्रपुष, एर्वारुक, कर्कारुक, तुम्बी, कूष्माण्ड।[७]

अश्मरीघ्न– कपोतवङ्का, बाकुची, हरीतकी।[८]

प्रमेहघ्न– कुसुम्भ, सर्षप, अतसी, पिचुमर्द, अतिमुक्तक, भाण्डी, कटुतुम्बी, कटभी।[९]

वातपित्तघ्न– ताल, नारिकेल, पनस, मोच, प्रियाल, बिल्व, मधूक, श्लेष्मातक, आम्रातक के फल।[१०]

---

१. तिलः प्रियालाभिषुकौ बिभीतकश्चित्राभयैरण्डमधूकसर्षपाः।
कुसुम्भबिल्वारुकमूलकातसीनिकोचकाक्षोडकरञ्जशिग्रुकाः।। (च० सू० १३.१०)

२. तिल्वकैरण्डकोशाम्रदन्तीद्रवन्तीसप्तलाशङ्खिनीपलाशविषाणिकागवाक्षीकम्पिल्लकशम्पाक-नीलिनीस्नेहा विरेचयन्ति। (सु० चि० ३१.५)

३. जीमूतककुटजकृतवेधनेक्ष्वाकुधामार्गवमदनस्नेहा वामयन्ति। (वही)

४. विडङ्गखरमञ्जरीमधुशिग्रुसूर्यवल्लीपीलुसिद्धार्थकज्योतिष्मतीस्नेहाः शिरोविरेचयन्ति। (वही)

५. करञ्जपूतिककृतमालमातुलुङ्गेङ्गुदीकिराततिक्तकस्नेहा दुष्टव्रणेषूपयुज्यन्ते। (वही)

६. तुवरककपित्थकम्पिल्लकभल्लातकपटोलस्नेहा महाव्याधिषु। (वही)

७. त्रपुषैर्वारुककर्कारुकतुम्बीकूष्माण्डस्नेहा मूत्रसङ्गेषु। (वही)

८. कपोतवङ्कावल्गुजहरीतकीस्नेहाः शर्कराश्मरीषु। (वही)

९. कुसुम्भसर्षपातसीपिचुमर्दातिमुक्तकभाण्डीकटुतुम्बीकटभीस्नेहाः प्रमेहेषु। (वही)

१०. तालनारिकेलपनसमोचप्रियालबिल्वमधूकश्लेष्मातकाम्रातकफलस्नेहाः पित्तसंसृष्टे वायौ। (वही)

Scanned by CamScanner

कृष्णीकरण– बिभीतक, भल्लातक, पिण्डीतक।[१]

पाण्डूकरण– श्रवण, कङ्गुक, टुण्टुक।[२]

क्षुद्रकुष्ठघ्न– सरल, पीतदारु, शिंशपा, अगुरुसार।[३]

ये सभी स्नेह वातशामक होते हैं।[४] स्थावर स्नेह में तिलतैल[५] तथा जाङ्गम में गव्य घृत सर्वश्रेष्ठ माना गया है।[६]

(छ) **प्रसिद्धि-साधर्म्य**– प्रशस्तिवाचक शब्दों के आधार पर भी गण बनाये गये हैं यथा–

पञ्चसार– उबला दूध, शर्करा, पिप्पली, मधु और घृत ये पाँचों द्रव्य एकत्र पञ्चसार कहलाते हैं। इसका प्रयोग विषमज्वर, क्षतक्षीण, क्षय, श्वास और हृद्रोग में किया जाता है।[७]

पञ्चामृत– गुडूची, गोक्षुर, मुशली, मुण्डी, शतावरी ये पञ्चामृत हैं।[८]

पञ्चसिद्धौषधिक– तैलकन्द, सुधाकन्द, क्रोडकन्द, रुदन्ती, सर्पनेत्र यह पञ्चसिद्धौषधिक कहलाता है।[९]

जाङ्गम गण

(क) **द्रव्य-साधर्म्य**– द्रव्य-साधर्म्य के आधार पर निम्नाङ्कित गण बनाये गये हैं–

क्षीराष्टक– गाय, भैंस, भेंड़, बकरी, ऊँटनी, घोड़ी, हथनी और नारी के

---

१. बिभीतकभल्लातकपिण्डीतकस्नेहाः कृष्णीकरणे। (सु० चि० ३१.५)

२. श्रवणकङ्गुकटुण्टुकस्नेहाः पाण्डूकरणे। (वही)

३. सरलपीतदारुशिंशपागुरुसारस्नेहा दद्रुकुष्ठकिटिभेषु। (वही)

४. सर्व एव स्नेहा वातमुपघ्नन्ति। (वही)

५. सर्वेषां तैलजातानां तिलतैलं विशिष्यते। (च० सू० १३.१२)
स्थावरेभ्यस्तिलतैलं प्रधानमिति। (सु० चि० ३१.४)

६. जङ्गमेभ्यो गव्यं घृतं प्रधानम्। (वही)

७. शृतं पयः शर्करा च पिप्पल्यो मधुसर्पिषी। पञ्चसारमिदं पेयं मथितं विषमज्वरे।।
क्षतक्षीणे क्षये श्वासे हृद्रोगे चैतदिष्यते।। (सु० उ० ३९.२५५)

८. गुडूची गोक्षुरश्चैव मुशली मुण्डिका तथा। शतावरीति पञ्चानां योगः पञ्चामृताभिधः।।
(रा० नि० मि० ३०)

९. तैलकन्दः सुधाकन्दः क्रोडकन्दो रुदन्तिका। सर्पनेत्रयुताः पञ्च सिद्धौषधिकसंज्ञकाः।।
(रा० नि० मि० ३७)

Scanned by CamScanner

दूध को क्षीराष्टक कहते हैं। सामान्यत: क्षीराष्टक मधुर, स्निग्ध, शीत, बल्य एवं जीवनीय है।[१]

मूत्रपञ्चक– गाय, बकरी, भेंड, भैंस तथा गदही के मूत्र को मूत्रपञ्चक कहते हैं।[२]

मूत्राष्टक– गाय, बकरी, भेंड, भैंस, तथा हाथी, ऊँट, घोड़ा और गदहा इनके मूत्र को मूत्राष्टक कहते हैं।[३] प्रथम चार के मादा का तथा अन्तिम चार के नर का मूत्र चिकित्सा के लिये लिया जाता है।[४]

मूत्रदशक– मूत्राष्टक में मनुष्य स्त्री और पुरुष दोनों का मूत्र मिला देने से मूत्र दशक हो जाता है।[५]

मूत्रवर्ग सामान्यत: उष्ण, तीक्ष्ण, अरूक्ष, कटु और लवण तथा दीपन, क्रिमिघ्न, विषघ्न, मूत्रजनन तथा रक्तवर्धक होता है। इसका प्रयोग पाण्डु और उदर रोग में विशेष करते हैं।[६] इस वर्ग में सर्वोत्तम गोमूत्र माना जाता है।

पित्तपञ्चक– मछली, गाय, घोड़ा, मनुष्य और मयूर के पित्त को पित्तपञ्चक कहते हैं।[७]

---

१. गव्यं माहिषमाजं च कारभं स्त्रैणमाविकम्। ऐभमैकशफं चेति क्षीराष्टकमिहोच्यते।।
(यो० र० पू० दु० ४)

अविक्षीरमजाक्षीरं गोक्षीरं माहिषं च यत्। उष्ट्रीणामथ नागीनां वडवाया: स्त्रियास्तथा।।
प्रायशो मधुरं स्निग्धं शीतं स्तन्यं पयो मतम्। प्रीणनं बृंहणं वृष्यं मेध्यं बल्यं मनस्करम्।
(च० सू० १.१०६-१०७)

२. गवामजानां मेषीणां महिषीणां च मिश्रितम्। मूत्रेण गर्दभीनां यत्तन् मूत्रं मूत्रपञ्चकम्।।
(रा० नि० मि० ४४)

३. सैरिभाजाविकरभगोखरद्विपवाजिनाम्। मूत्राणीति भिषग्वर्यैर्भूत्राष्टकमुदाहृतम्।।
(र० त० २.९)

४. खरेभोष्ट्रतुरङ्गाणां पुंसां मूत्रं प्रशस्यते। गोजाविमहिषीणां च मूत्रं स्त्रीणां हितं मतम्।।
(र० त० २.१०)

अविमूत्रमजामूत्रं गोमूत्रं माहिषं च यत्। हस्तिमूत्रमथोष्ट्रस्य हयस्य च खरस्य च।।
(च० सू० १.९३-)

५. मूत्राणि हस्ति- महिषोष्ट्र-गवाजकानां मेषाश्व-रासभक-मानुष-मानुषीणाम्।
यत्नेन यत्र मिलितानि दशेति तानि शास्त्रेषु मूत्रदशकाह्वयभाञ्जि भान्ति।। (रा० नि० मि० ५८)

६. उष्णं तीक्ष्णमथोऽरूक्षं कटुकं लवणान्वितम्। दीपनीयं विषघ्नं च क्रिमिघ्नं चोपदिश्यते।।
पाण्डुरोगोपसृष्टानामुत्तमं शर्म चोच्यते। (च० सू० १.९४, ९७-)

७. पित्तं पञ्चविधं मत्स्यगवाश्वनरबर्हिजम्। (र० ५.३६)

Scanned by CamScanner

पित्तगण– भैंसा, वराह, छाग, मयूर, कृष्णसर्प, रोहितमत्स्य तथा मार्जार के पित्त पित्तगण में आते हैं।[१]

विड्वर्ग– पारावत, नीलकण्ठ, कबूतर, मयूर, गीध और मुर्गा इनकी विष्ठा को विड्वर्ग कहते हैं। यह लोहों की शुद्धि में प्रयुक्त होता है।[२]

(ख) **गुण-साधर्म्य के अनुसार**–

महास्नेह– इसका वर्णन पीछे किया जा चुका है।

(ग) **योनि-साधर्म्य के अनुसार**–

पञ्चगव्य– गाय का दूध, दही, घी, मूत्र और गोबर इन सब को एकत्र करने पर पञ्चगव्य कहते हैं।[३]

पञ्चाज– यही पाँचों द्रव्य यदि बकरी के हों तो पञ्चाज कहलाता है।

पञ्चमाहिष– इसी प्रकार भैंस के इन पाँचों विकारों को एकत्र करने से पञ्चमाहिष कहलाता है।[४]

(घ) **प्रसिद्ध-साधर्म्य के अनुसार**–

पञ्चामृत– गोदुग्ध, गोदधि, गोघृत, मधु और शर्करा इनको एकत्र करने को पञ्चामृत कहते हैं।[५] इसका उपयोग रसकर्म में होता है।

भौम गण

त्रिलोह– सुवर्ण, रजत और ताम्र इनको त्रिलोह कहते हैं।[६]

पञ्चलोहक– त्रिलोह में वङ्ग और नाग मिला देने से पञ्चलोहक कहते हैं।[७]

ग्रहाङ्गपञ्चलोहक– सुवर्ण, रजत, ताम्र, वङ्ग और कृष्णायस ये पाँच ग्रहाङ्ग-पञ्चलोहक कहलाते हैं।[८]

---

१. महिषक्रोडमत्स्यानां छागस्य च शिखण्डिनः। कृष्णाहिरोहितानां च मार्जारस्य च मायुभिः।। प्रोक्तः पित्तगणः। (र० चू० ९.१९)

२. पारावतस्य चाषस्य कपोतस्य कलापिनः। गृध्रस्य कुक्कुटस्यापि विनिर्दिष्टो हि विड्गणः।। शोधनः सर्वलोहानां पुटनाल्लेपनात् खलु। (र० चू० ९.२१–)

३. गव्यं क्षीरं दधि घृतं गोमूत्रं गोमयं तथा। एकत्र योजितं तुल्यं पञ्चगव्यमिहोच्यते।। (र० त० २.२२)

४. एवमेव विजानीयात् पञ्चाजं पञ्चमाहिषम्।

५. गव्यं क्षीरं दधि घृतं माक्षिकं चाथ शर्करा। पञ्चामृतं समाख्यातं रसकर्मप्रसाधकम्।। (र० त० २.२१)

६. सुवर्णं रजतं ताम्रं त्रयमेतत् त्रिलोहकम्। (रा० नि० मि० ४५)

७. वङ्गनागसमायुक्तं तत्प्राहुः पञ्चलोहकम्।। (रा० नि० मि० ४६)

८. सुवर्णं रजतं ताम्रं त्रपु कृष्णायसं समम्। ग्राहङ्गमिति बोद्धव्यं द्वितीयं पञ्चलोहकम्। (रा० नि० मि० ४७)

Scanned by CamScanner

षड्लोहक– पञ्चलोहक में लोहा मिलाने से षड्लोह कहते हैं।[१]

अष्टलोह– पञ्चलोहक में कान्त, मुण्ड और तीक्ष्ण ये तीनों प्रकार के लौह मिलाने से अष्टलौह होता है।[२]

सप्तधातु– स्वर्ण, रजत, ताम्र, वङ्ग, नाग, यशद और लौह ये सात सप्तधातु कहलाते हैं।[३] इन्हें लोहसप्तक भी कहते हैं।

उपधातु– स्वर्णमाक्षिक, रजतमाक्षिक, तुत्थ, कांस्य, रीति (पित्तल), सिन्दूर और शिलाजतु ये सात उपधातु हैं। इन उपधातुओं में क्रमशः उन धातुओं के गुण अल्प मात्रा में मिलते हैं अतः ये उनके अभाव में प्रतिनिधिरूप में व्यवहृत होते हैं।[४]

महारस– माक्षिक, विमल, शिलाजतु, चपल, रसक (खर्पर), सस्यक (तुत्थ), हिङ्गुल और स्रोतोञ्जन ये आठ द्रव्य महारस कहलाते हैं।[५] कुछ लोगों ने दूसरे प्रकार से भी माना है।

उपरस– गन्धक, हरताल, मनःशिला, फिटकरी, कसीस, गैरिक, राजावर्त और कंकुष्ठ ये आठ उपरस हैं।[६] कुछ आचार्यों ने राजावर्त के स्थान पर स्रोतोञ्जन का ग्रहण किया है।

साधारणरस– कम्पिल्ल, चपल, शंखिया, नौसादर, वराटक, अम्बर, गिरिसिन्दूर, हिङ्गुल और मुर्दासिङ्ग ये नवसाधारण रस कहलाते हैं।[७]

अञ्जनत्रितय– कालाञ्जन, पुष्पाञ्जन और रसाञ्जन इन तीनों को अञ्जनत्रितय कहते हैं।[८]

---

१. सुवर्णं रजतं ताम्रं त्रपु सीसकमायसम्। षडेतानि च लोहानि।। (र० र० १०.६६)

२. पञ्चलोहसमायुक्तैः कान्तमुण्डकतीक्ष्णकैः। कल्पितः कथितो धीरैरष्टलोहाभिधो गणः।।
(रा० नि० मि० ५६)

३. स्वर्णं रूप्यं च ताम्रं च वङ्गं यशदमेव च। सीसं लोहं च सप्तैते धातवो गिरिसम्भवाः।।
(भा० प्र० नि० धात्व० १)

४. सप्तोपधातवः स्वर्णमाक्षिकं तारमाक्षिकम्। तुत्थं कांस्यं च रीतिश्च सिन्दूरं च शिलाजतुः।।
(भा० प्र० नि० धात्व० ५३)

५. माक्षिको विमलः शैलश्चपलो रसकस्तथा। सस्यको दरदश्चैव स्रोतोञ्जनमथाष्टमम्।
अष्टौ महारसाः– (र० ७.२)

६. गन्धकस्तालकः शिला सौराष्ट्री खगगैरिकम्। राजावर्तश्च कङ्कुष्ठमष्टावुपरसाः स्मृताः।।
(र० ७.५६)

७. कम्पिल्लश्चपलो गौरीपाषाणो नवसारकः। कपर्दो वह्निजारश्च गिरिसिन्दूरहिङ्गुलौ।।
बोद्दारशृङ्गमित्यष्टौ साधारणरसाः स्मृताः।। (र० चू० ११.९०–)

८. कालाञ्जनसमायुक्ते पुष्पाञ्जनरसाञ्जने। अञ्जनत्रितयं प्राहुस्त्र्यञ्जनं चाञ्जनत्रयम्।।
(रा० नि० मि० १२)

Scanned by CamScanner

पञ्चमृत्तिका– ईंट का चूर्ण, भस्म, वल्मीकमृत्तिका, गैरिक और लवण ये पाँच पञ्च मृत्तिका कहलाते हैं।[1]

लवणवर्ग– इसका वर्णन पीछे किया जा चुका है।

क्षारवर्ग– इसका भी वर्णन हो चुका है।

रत्न– रमणीय होने के कारण इसे रत्न कहते हैं।[2] इसमें ९ द्रव्य हैं– हीरा, पन्ना, लहसुनिया, गोमेद, माणिक, नीलम, पुखराज, मोती और प्रवाल।[3]

उपरत्न– वैक्रान्त, स्फटिक, सूर्यकान्त, चन्द्रकान्त, राजावर्त, पिरोज, रक्ताश्म (अकीक), तृणकान्त (कहरबा), नागाश्म (जहरमोहरा), हरिताश्म (यशद) ये दस उपरत्न हैं। इन्हें क्षुद्ररत्न भी कहते हैं।[4] कई लोगों ने काँच को भी उपरत्न में लिखा है।

मिश्रगण

यहाँ मिश्रगण उसे कहा गया है जिसमें जाङ्गम, औद्भिद तथा पार्थिव गणों के द्रव्यों का परस्पर मिश्रण हो। ऐसे अनेक गणों का पीछे प्रसङ्गतः वर्णन किया जा चुका है यथा– महास्नेह, रत्न, मित्रपञ्चक आदि।

क्षीरवर्ग– हथनी, घोड़ी, गाय, भेंड़, बकरी, ऊँटनी, भैंस, गदही, नारी इन जङ्गम प्राणियों के दूध तथा काकोदुम्बर, स्नुही, दुग्धिका, उदुम्बर, अर्क, न्यग्रोध, अश्वत्थ और तिल्वक इन औद्भिद वर्ग के द्रव्यों का दूध एकत्र मिलाने पर क्षीरवर्ग या दुग्धवर्ग कहलाता है।[5]

*

---

१. इष्टिकाचूर्णकं भस्म तथा वल्मीकमृत्तिका। गैरिकं लवणं चेति कीर्तिताः पञ्चमृत्तिकाः।।
(र० त० २.१९)

२. रमणीयतरं यस्माद्रमन्तेऽस्मिन्नतीव वा। तस्माद्रत्नमिदं ख्यातं शब्दशास्त्रविशारदैः।।
(र० त० २३.१)

३. रत्नं गारुत्मतं पुष्परागो माणिक्यमेव च। इन्द्रनीलश्च गोमेदं तथा वैदूर्यमित्यपि।।
मौक्तिकं विद्रुमश्चेति रत्नान्युक्तानि वै नव।। (भा० प्र० नि० धात्व० १६७)

४. वैक्रान्तः स्फटिकाह्वश्च रविकान्तेन्दुकान्तकौ।
नृपावर्तः पेरोजको रक्ताश्मा तृणकान्तकः।
दशेमान्युपरत्नानि सनागहरिताश्मकौ।। (स्व०)

५. करिणी घोटिका धेनुस्त्वविका छागिकोष्ट्रिका। महिषी गर्दभी नारी काकोदुम्बरिका सुधा।।
दुग्धिकोदुम्बरश्चार्को न्यग्रोधोऽश्वत्थतिल्वकौ। एषां दुग्धैः समाख्यातो दुग्धवर्गः समासतः।।
(र० त० २.२४-२५)

Scanned by CamScanner

एकादश अध्याय

द्रव्यों के वर्गीकरण का विकास : ऐतिहासिक समीक्षा

१. वैदिक युग

अति प्राचीन काल में जिस प्रकार सृष्टि के सारे पदार्थों के प्रति मानव के हृदय में जिज्ञासा उत्पन्न हुई और उसकी पूर्ति तत्कालीन परिस्थिति के अनुसार की गई उसी प्रकार वनस्पति-जगत् भी मानव के लिए एक कुतूहल का विषय रहा। आदिम मानव वनों में रहने के कारण प्रकृति के निकट सम्पर्क में था और पेड़-पौधे उसके सखा-सहचर थे। इसीलिए दर्शनों और काव्यों में समान रूप से वनस्पति जगत् का उपयोग किया गया है। मनुष्य केवल रमणीयता के कारण वनस्पतियों की ओर आकृष्ट न था और न उसे केवल इनका साहित्यिक वर्णन करने से ही सन्तोष हुआ। वह तो उनके सम्बन्ध में पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने को उत्सुक था और इस उद्देश्य से उनका वैज्ञानिक अध्ययन भी करना उसने प्रारम्भ किया। अनेक वनौषधियों के नामों का उल्लेख वेदों में मिलता है। इनकी संख्या पहले तो कम रही किन्तु शनैः शनैः इनके अध्ययन का क्षेत्र विस्तृत होता गया और क्रमशः इनकी संख्या बढ़ती गई। इस क्रम में प्राचीन महर्षियों ने वनस्पतियों के वर्गीकरण का भी निर्देश किया है। ऋग्वेद के पुरुषसूक्त में सृष्टि के समस्त पदार्थों को साशन और अनशन इन दो वर्गों में विभाजित किया गया है।[१] साशन चेतन और अनशन अचेतन सृष्टि का वाचक है। आगे चलकर वनस्पतियों को फलिनी-पुष्पिणी (सपुष्प) तथा अपुष्प-अफल इन दो वर्गों में विभक्त किया है।[२] इस सम्बन्ध में ऋग्वेद का ओषधिसूक्त अवलोकनीय है।

कर्मों के अनुसार भी वनौषधियों के विभाग का सङ्केत वैदिक वाङ्मय में मिलता है। ज्वर, यक्ष्मा, अश्मरी आदि अनेक रोगों में कार्य करने वाली ओषधियों का नाम वेदों में आता है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि वनस्पतियों के रचनात्मक तथा कर्मात्मक दोनों प्रकार के वर्गीकरणों के सङ्केत वैदिक युग की रचनाओं में सन्निहित हैं जिनकी आधारशिला पर आगामी युग के द्रव्यगुण की विशाल अट्टालिका खड़ी की गई है।

---

१. ततो विष्वङ् व्यक्रामत् साशनानशने अभि। (पुरुषसूक्त, मन्त्र ४)

२. याः फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणीः। (ऋ० १०.९७.१५)

Scanned by CamScanner

२. संहिता-काल

(१) चरकसंहिता

वैदिक काल में प्रयुक्त ओषधियों की संख्या कम होने से उनका वर्गीकरण विशद रूप में नहीं हो सका।[१] उनका शरीर के विभिन्न अङ्गों पर जो कर्म होता है उसके अनुसार भी उनका विभाजन उस समय सम्भव नहीं था। यह कार्य संहिताकाल में पूरा हुआ। संहिताओं की रचना का युग बौद्धिक और भौतिक समृद्धि का युग था। तब तक अनेक दिव्य एवं भौम ओषधियों का लोक में प्रचलन हो चुका था और उनके गुणकर्मों की जानकारी भी लोगों को पर्याप्त हो चुकी थी। हिमालय-प्रदेश के प्रशस्त क्षेत्र में उत्पन्न होने वाली ओषधियों का पर्याप्त अनुसन्धान हो चुका था और यह सब लोग मानने लगे थे कि हिमवान् ओषधियों के उद्भव स्थानों में सर्वश्रेष्ठ है। अतः इस काल में औषधिद्रव्यों के रचनात्मक एवं कर्मात्मक वर्गीकरण का एक स्पष्ट रूप दृष्टिगोचर होता है।

चरकसंहिता में द्रव्यों का सूक्ष्म अध्ययन किया गया है और उसका वर्गीकरण भी अनेक दृष्टिकोणों से उपलब्ध होता है। सूत्रस्थान प्रथम अध्याय में योनिभेद से द्रव्य तीन प्रकार के बतलाये गये हैं- जाङ्गम, औद्भिद और पार्थिव। जाङ्गम पुनः चार प्रकार के तथा औद्भिद भी चार प्रकार के बतलाये गये हैं। औद्भिद द्रव्यों का विभाग रचना की दृष्टि से वनस्पति, वानस्पत्य, वीरुध् और ओषधि इन चार वर्गों में किया गया है। इसके अतिरिक्त, पांचभौतिक निष्पत्ति तथा रस, विपाक आदि के अनुसार द्रव्यों के विभाग किये गये हैं। औषध एवं आहार द्रव्यों का भेद भी स्पष्ट किया गया है। इनमें आहार द्रव्यों का वर्गीकरण रचनानुसार तथा औषधद्रव्यों का वर्गीकरण कर्मानुसार किया गया है।

आहारद्रव्यों का वर्णन सूत्रस्थान के २७वें अध्याय में विस्तार से किया गया है।[२] वहाँ आहार द्रव्यों के कुल बारह वर्ग बनाये गये हैं[३]–

१. शूकधान्यवर्ग, २. शमीधान्यवर्ग, ३. मांसवर्ग, ४. शाकवर्ग, ५. फलवर्ग, ६. हरितवर्ग, ७. मद्यवर्ग, ८. अम्बुवर्ग, ९. गोरसवर्ग, १०. इक्षुवर्ग ११. कृतान्नवर्ग, १२. आहारयोगिवर्ग।

---

१. पृश्निपर्णी, सहदेवी, अपामार्ग, कुष्ठ, गुग्गुलु, पिप्पली, मृगशृङ्ग, अश्वत्थ, सोम, यष्टीमधु आदि अनेक ओषधियों का वर्णन अथर्ववेद में मिलता है।

२. परमतो वर्गसङ्ग्रहेणाहारद्रव्याण्यनुव्याख्यास्यामः। (च० सू० २७.५)

३. शूकधान्यशमीधान्यमांसशाकफलाश्रयान्। वर्गान् हरितमद्याम्बुगोरसेक्षुविकारिकान्।।
दश द्वौ चापरौ वर्गौ कृतान्नाहारयोगिनाम्। (च० सू० २७.६-७)

Scanned by CamScanner

(३) अष्टाङ्गहृदय

अष्टाङ्गहृदयकार वाग्भट ने द्रवद्रव्यों के पाँच ही वर्ग बनाये हैं– जलवर्ग, क्षीरवर्ग, इक्षुवर्ग, तैलवर्ग और मद्यवर्ग।[१] मूत्रवर्ग का उल्लेख उन्होंने नहीं किया केवल मूत्रों का वर्णन मद्यवर्ग के अन्त में कर दिया। अन्नद्रव्यों के निम्नाङ्कित वर्ग निर्धारित किये गये हैं– शूकधान्यवर्ग, शिम्बीधान्यवर्ग, कृतान्नवर्ग, मांसवर्ग, शाकवर्ग, फलवर्ग, औषधवर्ग।[२] औषधवर्ग में लवण-क्षार तथा हरीतकी आदि ओषधियों का वर्णन है। इनके अतिरिक्त, इसी में मिश्रक गणों (त्रिफला आदि) का भी वर्णन है। इस प्रकार औषधवर्ग वाग्भट की मौलिक देन है, जिसका पल्लवन परवर्ती आचार्यों ने किया।

कर्मानुसार वर्गीकरण में वाग्भट ने सुश्रुत का अनुसरण किया है। शोधनादिगणसङ्ग्रह अध्याय (सूत्रस्थान १५ अ०) में तेंतीस गणों का उल्लेख है जिनमें केवल जीवनीय गण चरक का है और सब सुश्रुत के हैं।

(४) अष्टाङ्गसङ्ग्रह

वृद्धवाग्भट ने चरक और सुश्रुत दोनों की शैलियों को स्वीकार किया है और स्वतन्त्र रूप में उनका उपयोग किया है। यही कारण है कि उपर्युक्त दोनों संहिताओं ने जहाँ इसमें दो ही अध्याय मुख्यत: लगाये हैं, वृद्धवाग्भट को प्राय: सात अध्याय लगाने पड़े। आहारद्रव्यों को सर्वप्रथम इन्होंने सुश्रुत के समान दो महावर्गों– अन्न और द्रव में विभाजित किया और उनका द्रवद्रव्यविज्ञानीय (सूत्रस्थान षष्ठ अध्याय) एवं अन्नस्वरूपविज्ञानीय (सूत्रस्थान सप्तम अध्याय) इन दो अध्यायों में स्वतंत्र रूप से वर्णन किया। यह विभाजन तो सुश्रुत के अनुसार है किन्तु आगे का वर्गीकरण अष्टाङ्गसङ्ग्रह का स्वतंत्र एवं मौलिक है जिसमें उन्होंने दोनों प्रमुख संहिताओं का उपयोग किया है। यह वर्गीकरण निम्नाङ्कित है–

द्रवद्रव्य		अन्नद्रव्य	
१. जलवर्ग	२. क्षीरवर्ग	१. शूकधान्यवर्ग	२. शिम्बीधान्यवर्ग
३. इक्षुवर्ग	४. तैलवर्ग	३. कृतान्नवर्ग	४. मांसवर्ग
५. मद्यवर्ग	६. मूत्रवर्ग	५. शाकवर्ग	६. फलवर्ग

द्रव और अन्न– ये दोनों मिलाकर बारह वर्ग होते हैं जो चरक के अनुकूल है किन्तु उनकी व्यवस्था में सुश्रुत के मत का उपयोग किया है यथा द्रवद्रव्यों में तैलवर्ग और मूत्रवर्ग का उल्लेख सुश्रुत के अनुसार है। इस प्रकार दोनों मतों का

---

१. तोयक्षीरेक्षुतैलानां वर्गैर्मद्यस्य च क्रमात्। इति द्रवैकदेशोऽयं यथास्थूलमुदाहृत:।।
(अ० ह० सू० ५.८४)

२. शूकशिम्बीजपक्वान्नमांसशाकफलौषधै:। वर्गितैरन्नलेशोऽयमुक्तो नित्योपयोगिक:।।
(अ० ह० सू० ६.१७२)

Scanned by CamScanner

समन्वय यहाँ पर किया गया है। अष्टाङ्गसङ्ग्रह ने चरक के आहारयोगि और हरित वर्गों तथा सुश्रुत के दधि, तक्र, घृत तथा मधुवर्गों को स्वीकार नहीं किया है। अन्नद्रव्यों में उपर्युक्त दो वर्गों को छोड़कर चरक का ही अनुसरण किया गया है। लवण, क्षार, धातु और रत्न वर्गों का पृथक्-पृथक् वर्णन न कर बारहवें अध्याय (विविधौषधविज्ञानीय) में इन सबका एक साथ वर्णन किया गया है।

औषधद्रव्यों का कर्मानुसार वर्गीकरण भी बड़ी सुन्दर रीति से किया गया है। सर्वप्रथम औषध का निम्नाङ्कित प्रकार से वर्गीकरण किया गया—

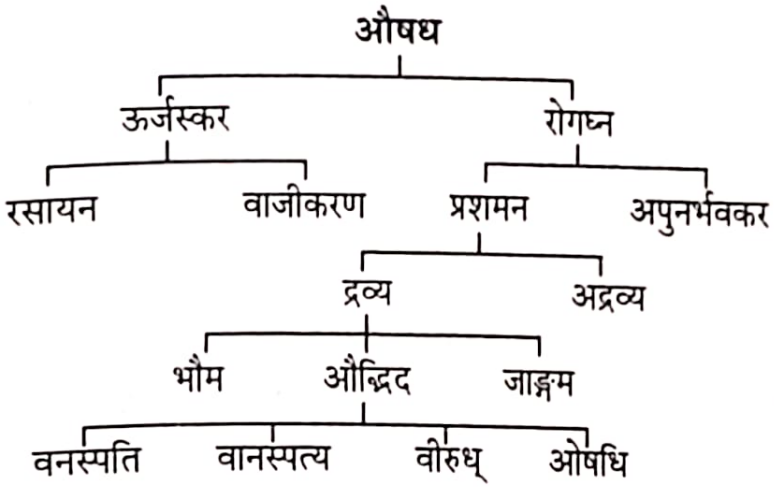

चरक के पचास महाकषायों में ४५ वर्ग महाकषायसङ्ग्रह (सूत्रस्थान १५वें) अध्याय में वर्णित हैं और शेष ५ शोधनादिगणसङ्ग्रह (सूत्रस्थान १४वें) अध्याय में वर्णित हैं। वत्सकादि गण अष्टाङ्गसङ्ग्रह में विशिष्ट है। सुश्रुत के वर्गों में पचीस वर्ग विविधगणसङ्ग्रह अध्याय (सूत्रस्थान १६ अ०) में दिये गये हैं। दोषशमन द्रव्यों का उल्लेख १४वें अध्याय में किया है। धूमोपयोगी द्रव्यों के तीन वर्ग इसके मौलिक हैं।

मिश्रक गणों में त्रिफला, त्रिकटु तथा पञ्च पञ्चमूलों के अतिरिक्त त्रिजातक, चतुर्जातक, पञ्चकोल, मध्यम पञ्चमूल, जीवनीय पञ्चमूल- इन गणों का उल्लेख मौलिक है। त्रिफला और त्रिकटु आदि वर्गों को अन्य वर्गों से पृथक् कर तथा अन्य नवीन गणों का निर्धारण कर वृद्धवाग्भट ने मिश्रक गणों की नवीन शृङ्खला प्रस्तुत की जिसमें आगे चलकर अनेक गणों की वृद्धि होती गई।

अग्र्य प्रकरण में चरक ने १५२ द्रव्यों का निर्देश किया है किन्तु अष्टाङ्गसङ्ग्रह ने १५५ का उल्लेख किया है।[१] इसके अतिरिक्त इस प्रकरण में वासा, कण्टकारी,

१. अग्र्याणां शतमुद्दिष्टं यद्द्विपञ्चाशदुत्तरम्। अलमेतद्विकाराणां विघातायोपदिश्यते।
(च० सू० २५.४१)
अग्र्याणां शतमुद्दिष्टं पञ्च पञ्चाशदुत्तरम्। अलमेतद्विजानीयाद्धिताहितविनिश्चये।।
(अ० सं० सू० १३.५)

Scanned by CamScanner

नागबला, लाक्षा, चित्रकमूल, हरिद्रा, एरण्ड तैल, लौहभस्म, गुग्गुलु का मौखिक उल्लेख वाग्भट ने किया है। गुग्गुलु के वातहर कार्य के अतिरिक्त मेदोहर कर्म की ओर सर्वप्रथम वाग्भट ने ही स्पष्ट रूप से वैद्यसमाज का ध्यान आकृष्ट किया।[१]

इसके अतिरिक्त हरीतकी, पिप्पली आदि द्रव्यों का स्फुट रूप से बारहवें अध्याय में वर्णन किया है। इसी के आधार पर आगे चलकर परवर्ती आचार्यों ने हरीतक्यादि वर्ग आदि का निर्धारण किया है।

३. निघण्टु-वाङ्मय

संहिता-काल के बाद निघण्टुओं का प्रादुर्भाव हुआ। इनमें पर्यायों के द्वारा द्रव्य के विभिन्न पक्षों पर जानकारी दी जाती है।[२] बाद में इनमें गुणकर्म भी जोड़ दिये गये। संहिताओं में गणों के रूप में ही द्रव्यों के गुणकर्म और प्रयोग दिये गये हैं, पृथक्-पृथक् द्रव्यों का नहीं किन्तु निघण्टुओं ने पृथक्-पृथक् द्रव्यों का वर्णन प्रारम्भ किया। वर्गीकरण का आधार भी इनका भिन्न है।

(१) धन्वन्तरिनिघण्टु

इस निघण्टु में औषधवर्ग को अनेक विभागों में विभक्त कर अत्यन्त विस्तृत बना दिया गया है और पूर्वकाल में जहाँ वर्गों में आहारद्रव्यों की प्रधानता थी वहाँ अब औषधद्रव्यों की हो गई। धन्वन्तरि निघण्टु में द्रव्यों के सात वर्ग निर्धारित हैं– गुडूच्यादि, शतपुष्पादि, चन्दनादि, करवीरादि, आम्रादि, सुवर्णादि और मिश्रकादि-वर्ग।[३] मिश्रकादिवर्ग में अवशिष्ट सभी वर्गों तथा द्रव्यों का समावेश है।

औषधद्रव्यों की संख्या इस समय तक बहुत अधिक हो जाने के कारण यह आवश्यक हो गया था कि उनका व्यवस्थित अध्ययन करने के लिए विभिन्न वर्गों में विभाजन हो। इस दृष्टिकोण से धन्वन्तरिनिघण्टु का यह अभिनव प्रयास है। समानकर्म वाले अनेक द्रव्यों को एकत्र कर एक वर्ग बना दिया और उसका नाम मुख्य द्रव्य के अनुसार रख दिया गया। यथा–

१. **गुडूच्यादिवर्ग**– इसमें ऊर्ध्वाध:संशोधन एवं रसायन ओषधियों का समावेश किया गया है यथा गुडूची, मदनफल, दन्ती आदि।[४]

---

१. विशेष सूचना के लिए लेखक की पुस्तक 'वाग्भट-विवेचन' देखें।

२. निघण्टवो नाम निगन्तवो ये निगूढमर्थं परिबोधयन्ति।
पर्यायशब्दैर्विविधार्थजातमुद्घाटयन्तो गुणधर्ममूलम्।। (स्व०)

३. द्रव्याण्युक्तानि गणशो मिश्रीकृत्य समासत:। गुडूच्यादि: शताह्वादिस्तथाऽन्यश्चन्दनादिक:।।
करवीरादिराम्रादि: सुवर्णादिर्विमिश्रक:। (ध० नि० मि० ७–)

४. गुडूच्यादिरयं वर्ग: प्रथम: परिकीर्तित:। ऊर्ध्वाधोदोषहरण: सर्वामयविनाशन:।।
(ध० नि० गु० १)

Scanned by CamScanner

२. **शतपुष्पादिवर्ग**– इसमें दीपन, बल्य एवं मुखशोधन द्रव्यों का समावेश किया गया है यथा शतपुष्पा वचा, एला आदि।[१]

३. **चन्दनादिवर्ग**– इसमें चन्दन, कुंकुम, उशीर आदि गन्ध द्रव्य हैं।[२]

४. **करवीरादिवर्ग**– इसमें अनेक प्रकार के द्रव्य आते हैं यथा करवीर, तुलसी, नाकुली आदि।[३]

५. **आम्रादिवर्ग**– इसमें फलवर्ग, पुष्पवर्ग तथा वल्कलयुक्त वृक्षों का समावेश होता है यथा आम्र, मल्लिका, अर्जुन आदि।[४]

६. **सुवर्णादिवर्ग**– इसमें धातुवर्ग, शूकधान्यवर्ग, शमीधान्यवर्ग, तैल, क्षीर, मद्य आदि द्रव द्रवद्रव्य तथा मांसवर्ग के द्रव्यों का समावेश किया गया है।[५]

७. **मिश्रकादिवर्ग**– अवशिष्ट द्रव्यों तथा त्रिफला आदि गणों का इसमें उल्लेख है।[६]

(२) निघण्टुशेष

यह आचार्य हेमचन्द्र की रचना है। इसमें वानस्पतिक द्रव्यों का वर्गीकरण आकृति के आधार पर निम्नांकित ६ वर्गों में किया गया है–

१. वृक्षकाण्ड, २. गुल्मकाण्ड, ३. लताकाण्ड, ४. शाककाण्ड, ५. तृणकाण्ड, ६. धान्यकाण्ड।

(३) सिद्धमन्त्र

यह वोपदेव के पिता आचार्य केशव द्वारा विरचित है। इसमें द्रव्यों का वर्गीकरण दोषप्रभाव की दृष्टि से आठ वर्गों में किया गया है–

१. वातघ्न वर्ग, २. पित्तघ्न वर्ग, ३. कफघ्न वर्ग, ४. वातपित्तघ्न वर्ग, ५. कफवातघ्न वर्ग, ६. कफपित्तघ्न वर्ग, ७. दोषघ्न वर्ग, ८. दोषल वर्ग।

---

१. शतपुष्पादिको वर्गो द्वितीयः परिकीर्तितः। कामाग्निदीपनो बल्यो वक्त्रसौगन्ध्यतीक्ष्णकृत्।।
(ध० नि० श० २)

२. चन्दनादिरयं वर्गस्तृतीयः परिकीर्तितः। श्रीमतां योगिनामर्हः प्रायो गन्धगुणाश्रयः।।
(ध० नि० च० ३)

३. करवीरादिको वर्गश्चतुर्थः समुदाहृतः। नानाव्याधिप्रशमनो नानाद्रव्यसमाश्रयः।।
(ध० नि० क० ४)

४. आम्रादिरयमुद्दिष्टो वर्गश्रेष्ठस्तु पञ्चमः। हर्षणो गन्धसौरभ्यफलत्वक्पुष्पसंश्रयः।।
(ध० नि० आ० ५)

५. सुवर्णादिरयं वर्गः षष्ठ उक्तो यथाक्रमम्। धातुद्रव्यद्रवद्रव्यमांसद्रव्यसमाश्रयः।।
(ध० नि० सु० ६)

६. वर्गोऽयं मिश्रको नाम सप्तमः परिकीर्तितः। द्रव्याण्युक्तानि गणशो मिश्रीकृत्य समासतः।।
(ध० नि० मि० ७)

Scanned by CamScanner

(४) मदनविनोद या मदनपालनिघण्टु

यह निघण्टु १३७५ ई० में लिखा गया। इसमें द्रव्यों के निम्नाङ्कित व बनाये गये हैं—

१. अभयादि वर्ग, २. शुण्ठ्यादि वर्ग, ३. कर्पूरादि वर्ग, ४. सुवर्णादि व ५. वटादि वर्ग, ६. फलादि वर्ग, ७. शाक वर्ग, ८. पानीयादि वर्ग, ९. इक्षुका वर्ग, १०. धान्यगुण वर्ग, ११. धान्यकृतान्नादि वर्ग, १२. मांस वर्ग, १३. मिश्र वर्ग।

मिश्रक वर्ग में कुछ सामान्य बातों की चर्चा है, उसमें किसी द्रव्य का वर्ण नहीं है। इस प्रकार मदनपाल निघण्टु में द्रव्यों के बारह वर्ग मिलते हैं। इसमें भङ्ग अहिफेन, पारसीक यवानी आदि अनेक नवीन द्रव्यों का समावेश किया गया है

(५) राजनिघण्टु

राजनिघण्टु में यों तो अनेक वर्ग हैं किन्तु औषधियों के सम्बन्ध में निम्नाङ्कित वर्ग निर्धारित किये गये हैं-

गुडूच्यादि, शताह्वादि, पर्पटादि, पिप्पल्यादि, मूलकादि, शाल्मल्यादि, प्रभद्रादि, करवीरादि, आम्रादि, चन्दनादि, सुवर्णादि, पानीयादि, क्षीरादि, शाल्यादि, मांसादि और मिश्रकादि।

धन्वन्तरिनिघण्टु तथा राजनिघण्टु ने द्रव्यों के वर्गीकरण की जो शैली प्रचलित की उससे इस क्षेत्र में अव्यवस्था का सूत्रपात हुआ। यद्यपि कुछ वर्गों में कर्म या गुण साधर्म्य का आधार लिया गया है किन्तु प्रायः अनेक वर्गों में ऐसा कोई सैद्धान्तिक आधार नहीं रहा यथा सुवर्णादि वर्ग में स्वर्ण आदि धातुओं के साथ ही तैल, घृत और मांस आदि का भी वर्णन कर दिया गया। दूसरी बात यह हुई कि प्राचीन आचार्यों के कर्मात्मक वर्गीकरण का आधार बिल्कुल छोड़ दिया गया। प्राचीन आधार तो छोड़ ही दिया गया और कोई नया आधार भी नहीं बनाया गया। अतः यहाँ से आगे चलकर वर्गीकरण का कोई वैज्ञानिक आधार नहीं रहा। परवर्त्ती निघण्टुकारों का आदर्श चरक, सुश्रुत न रहकर धन्वन्तरि और राजनिघण्टु ही रहा।

(६) कैयदेवनिघण्टु

वस्तुतः कैयदेवकृत इस ग्रन्थ का नाम 'पथ्यापथ्यविबोधक' है। इसमें द्रव्यों के ९ वर्ग हैं यथा ओषधिवर्ग, धातुवर्ग, धान्यवर्ग, द्रववर्ग, पक्वान्नवर्ग, मांसवर्ग, विहारवर्ग, मिश्रकवर्ग और नानार्थवर्ग।[१]

---

१. इहौषधीधातुधान्यद्रवपक्वान्नमांसगाः। सविहारो मिश्रकश्च नानार्थो नवमः स्मृतः।।
(कै० नि० उप० ६)

Scanned by CamScanner

इसमें वाग्भट के अनुसार समस्त औषधद्रव्यों को ओषधिवर्ग में रक्खा गया, उनका पुनः विभाजन नहीं किया गया। आहार के अतिरिक्त विहार के लिए एक नया विहारवर्ग तथा पर्यायों के अध्ययन के लिए नानार्थवर्ग की कल्पना की गई। ओषधिवर्ग में ओषधिद्रव्यों की संख्या बहुत बढ़ गई है। पथ्यापथ्य-परक ग्रन्थ होने के कारण आहार-विहार का विस्तार से उल्लेख किया गया है।

(७) भावप्रकाशनिघण्टु

इसमें द्रव्यों के २२ वर्ग निर्धारित हैं—

१. हरीतक्यादिवर्ग, २. कर्पूरादिवर्ग, ३. गुडूच्यादिवर्ग, ४. पुष्पवर्ग, ५. वटादिवर्ग, ६. आम्रादिफलवर्ग, ७. धातुवर्ग, ८. धान्यवर्ग, ९. शाकवर्ग, १०. मांसवर्ग, ११. कृतान्नवर्ग, १२. वारिवर्ग, १३. दुग्धवर्ग, १४. दधिवर्ग, १५. तक्रवर्ग, १६. नवनीतवर्ग, १७. घृतवर्ग, १८. मूत्रवर्ग, १९. तैलवर्ग, २०. सन्धानवर्ग, २१. मधुवर्ग, २२. इक्षुवर्ग।

भावप्रकाश में आहार-द्रव्यों का वर्गीकरण तो व्यवस्थित है किन्तु औषध-द्रव्यों के वर्गीकरण में कुछ त्रुटि रह गई है यद्यपि भावमिश्र ने पूर्ववर्ती वर्गीकरण की अधिकांश त्रुटियों को दूर करने का प्रयास किया है। हरीतक्यादि वर्ग में उन द्रव्यों का समावेश किया गया जिनका फल या कन्द औषध में प्रयुक्त होता है। कर्पूरादि वर्ग में गन्धद्रव्यों का वर्णन है। गुडूच्यादि वर्ग में उन द्रव्यों का वर्णन है जिनका पञ्चाङ्ग या मूल लिया जाता है। वटादि वर्ग में बड़े-बड़े वृक्ष हैं जिनका वल्कल प्रयुक्त होता है। इस प्रकार यह कहने की आवश्यकता नहीं कि भावप्रकाश का वर्गीकरण आधुनिक वर्गीकरणों में सर्वश्रेष्ठ है। यह सब होने पर भी सैन्धव आदि को हरीतक्यादि वर्ग में प्रविष्ट करना एकरूपता में बाधक सिद्ध हुआ।[१]

(८) प्रियनिघण्टु (१९८३)

यह लेखक द्वारा प्रणीत बीसवीं शती का अन्तिम निघण्टु-ग्रन्थ है। इसमें द्रव्यों के १३ वर्ग किये गये हैं–

१. हरीतक्यादिवर्ग, २. पिप्पल्यादिवर्ग, ३. शतपुष्पादिवर्ग, ४. शरादिवर्ग, ५. कस्तूर्यादिवर्ग, ६. सुवर्णादिवर्ग, ७. शाकवर्ग, ८. फलवर्ग, ९. मांसवर्ग, १०. धान्यवर्ग, ११. कृतान्नवर्ग, १२. द्रववर्ग, १३. द्रव्यादिवर्ग।

प्रथम चार वर्गों में औद्भिद द्रव्यों का क्रमशः वृक्ष, लता क्षुप और तृण-गुल्म आदि का समावेश किया गया है। कस्तूर्यादि वर्ग जाङ्गम द्रव्यों का तथा

१. इन ग्रन्थों के काल आदि के विवरण के लिए देखें– द्रव्यगुणविज्ञान चतुर्थ भाग तथा आयुर्वेद का वैज्ञानिक इतिहास।

Scanned by CamScanner

सुवर्णादि वर्ग भौम द्रव्यों का है। द्रव्यादि वर्ग नवीन है जिसमें द्रव्य, गुण आदि पदार्थों का विवरण किया गया है। इस प्रकार वर्गीकरण से अधिकाधिक युक्तिसङ्गत बनाने का प्रयास किया गया है।

सारांश

उपर्युक्त विश्लेषण में द्रव्यों के वर्गीकरण से विकास-पथ की रेखा स्पष्ट देखी जा सकती है। इस प्रकार यह भी स्पष्ट है कि किस प्रकार ऋग्वेदीय ओषधि-सूक्त का बीज संहिताओं और निघण्टुओं में उत्तरोत्तर पल्लवित, पुष्पित और फलित हुआ है।

*

Scanned by CamScanner